विज्ञापन एवं विक्रय प्रबन्ध
(Advertising & Sales Management)

बी. कॉम - III
B. Com - III
Paper - Optional (v)

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय
रोहतक-124 001

Copyright © 2004, Maharshi Dayanand University, ROHTAK
All Rights Reserved. No part of this publication may be reproduced or stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means; electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the written permission of the copyright holder.

Maharshi Dayanand University
ROHTAK – 124 001

Developed & Produced by EXCEL BOOKS PVT. LTD., A-45 Naraina, Phase 1, New Delhi-110028

विषय-सूची

अध्याय 1	सम्प्रेषण प्रक्रिया	5
अध्याय 2	प्रतिपुष्टि तथा सामूहिक सम्प्रेषण तन्त्र	15
अध्याय 3	विज्ञापन तथा सम्प्रेषण मिश्रण	23
अध्याय 4	विज्ञापन के प्रकार तथा विभिन्न विधियाँ	51
अध्याय 5	विज्ञापन प्रक्रिया	68
अध्याय 6	विज्ञापन अपील	75
अध्याय 7	विज्ञापन प्रति का निर्माण	86
अध्याय 8	विज्ञापन एजेन्सी : ढांचा एवं कार्य	95
अध्याय 9	विज्ञापन प्रभावोत्पादकता का मूल्यांकन	102
अध्याय 10	विज्ञापन में उपभोक्ता अभिमुखीकरण अथवा विज्ञापन तथा उपभोक्ता उन्मुखता	106
अध्याय 11	विज्ञापन के नैतिक तथा वैधानिक पहलू	112
अध्याय 12	विक्रय प्रबन्ध-एक परिचय	117
अध्याय 13	विक्रय कला	130
अध्याय 14	वैयक्तिक विक्रय-अर्थ एवं स्वभाव	144
अध्याय 15	विक्रय प्रयासों का संगठन	153
अध्याय 16	विक्रयकर्त्ता- प्रकार एवं गुण	179
अध्याय 17	विक्रय शक्ति प्रबन्ध	187
अध्याय 18	विक्रय शक्ति की प्राप्ति (भर्ती व चयन)	192
अध्याय 19	विक्रयकर्त्ता का प्रशिक्षण	208
अध्याय 20	अभिप्रेरणा	222
अध्याय 21	विक्रयकत्ताओं का पारिश्रमिक	240
अध्याय 22	विक्रयकर्त्ता का नियन्त्रण एवं निरीक्षण	251
अध्याय 23	विक्रय बजट	263
अध्याय 24	विक्रय कोटा या विक्रय अभ्यंश	270
अध्याय 25	विक्रय प्रदेश (क्षेत्र)	281

ADVERTISING AND SALES MANAGEMENT
B. Com. III

M. Marks : 100
Time : 3 Hrs.

Note: Ten Questions shall be set in the question paper covering the whole syllabus. The candidates will be required to attempt any five questions.

Communication Process : Basic communication process, role and source; Encoding and decoding of message, media, audience, feedback, and noise.

Advertising and Communication Mix : Different advertising functions; Types of advertising, Economic social aspects of advertising; Advertising process-an overview setting advertising objectives and budget.

Creative Aspects of Advertising: Advertising appeals, copy writing headlines, illustration, message, copy types;

Advertising Media : Different types of media; Media planning and scheduling.

Impact of Advertising : Advertising agency roles, relationship with clients, advertising department; Measuring advertising effectiveness; Legal and ethical aspects of advertising.

Sales Management : Sales Management, Personal Selling and Salesmanship, Organising the sales efforts; Sales force management: Recruitment, Selection, Training Motivation, Compensating and Controlling sales personnel, Sales Budget, Sales quotas and Sales Territories.

अध्याय - 1
सम्प्रेषण प्रक्रिया
(Communication Process)

सम्प्रेषण : अर्थ एवं परिभाषाएँ

सम्प्रेषण के लिए अंग्रेजी भाषा में 'Communication' शब्द का प्रयोग किया जाता है जिसकी उत्पत्ति लेटिन भाषा के 'Communis' शब्द से हुई है। 'Communis' शब्द का अर्थ है 'जानना या समझना। 'Communis' शब्द को 'Common' शब्द से लिया गया है जिसका अर्थ है किसी विचार या तथ्य को कुछ व्यक्तियों में सामान्तया 'Common' बना देनां इस प्रकार सम्प्रेषण या संचार शब्द से आशय है तथ्यों, सूचनाओं, विचारों आदि को भेजना या समझना। इस प्रकार सम्प्रेषण एक द्विमार्गी प्रक्रिया है जिसके लिये आवश्यक है कि यह सम्बन्धित व्यक्तियों तक उसी अर्थ में पहुँचे जिस अर्थ में सम्प्रेषणकर्त्ता ने अपने विचारों को भेजा है। यदि सन्देश प्राप्तकर्त्ता, सन्देश वाहक द्वारा भेजे गये सन्देश को उस रूप में ग्रहण नहीं करता है, तो सम्प्रेषण पूरा नहीं माना जायेगा। अतः सम्प्रेषण का अर्थ विचारों तथा सूचनाओं को एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक इस प्रकार पहुँचाना है कि वह उसे जान सके तथा समझ सके। एडविन बी० फिलप्पों के शब्दों में संदेश सम्प्रेषण या संचार अन्य व्यक्तियों को इस तरह प्रोत्साहित करने का कार्य है, जिससे वह किसी विचार का उसी रूप में अनुवाद करे जैसा कि लिखने या बोलने वाले ने चाहा है।"

अतः सम्प्रेषण एक ऐसी कला है जिसके अर्न्तगत विचारों, सूचनाओं, सन्देशों एवं सुझावों का आदान प्रदान चलता है।

सम्प्रेषण की विशेषताएँ

1. सम्प्रेषण द्विमार्गी प्रक्रिया है जिसमें विचारों का आदान प्रदान होता है।
2. सम्प्रेषण का लक्ष्य सम्बन्धित पक्षकारों तक सूचनाओं को सही अर्थ में सम्प्रेषित करना होता है।
3. सम्प्रेषण द्वारा विभिन्न सूचनाएँ प्रदान कर पक्षकारों के ज्ञान में अभिव द्धि की जाती है।
4. सम्प्रेषण का आधार व्यक्तिगत समझ और मनोदशा होती है।
5. सम्प्रेषण में दो या अधिक अपने विचारों का आदान प्रदान करते हैं।
6. सम्प्रेषण वैयक्तिक और अवैयक्तिक दोनों प्रकार से किया जा सकता है।
7. सम्प्रेषण निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है।
8. सम्प्रेषण एक चक्रिय-प्रक्रिया है जो प्रेषक से प्रारम्भ होकर प्रतिपुष्टि प्राप्ति के बाद प्रेषक पर ही समाप्त होती है।
9. सम्प्रेषण में संकेत, शब्द व चिन्हों का प्रयोग होता है।

सम्प्रेषण क्रियाओं का वह व्यवस्थित क्रम व स्वरूप जिसके द्वारा एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को, एक समूह दूसरे समूह को एक विभाग दूसरे विभाग को एक संगठन बाहरी पक्षकारों को विचारों सूचनाओं, भावनाओं व द ष्टिकोणों का आदान प्रदान करता है सम्प्रेषण प्रक्रिया कहलाती है।

सम्प्रेषण एक निरन्तर चलने वाली तथा नैत्यिक प्रक्रिया है तथा कभी न समाप्त होने वाला सम्प्रेषण चक्र संस्था में निरन्तर विद्यमान रहता है। इस प्रक्रिया को निम्न चित्र द्वारा समझाया जा सकता है :

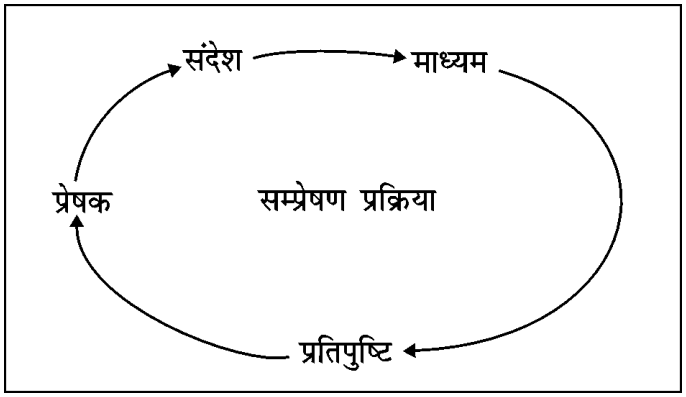

सम्प्रेषण, संगठन के व्यक्तियों एवं समूहों का वाहक एवं विचार अभिव्यक्ति का माध्यम है। सम्प्रेषण प्रक्रिया में सन्देश का भेजने वाला सन्देश के प्रवाह के माध्यम का प्रयोग करता है। यह माध्यम लिखित, मौखिक, द श्य अथवा एवं सुनने के लायक होता है। सम्प्रेषण माध्यम का चयन सम्प्रेषण के उद्देश्य, गति एवं प्राप्तकर्त्ता की परिस्थितियों के अनुसार किया जाता है। सम्प्रेषण माध्यम का चुनाव करते समय सन्देश संवाहक यह ध्यान रखता है कि उसे कब और क्या सम्प्रेषित करना है? सन्देश को प्राप्त करने वाला व्यक्ति सन्देश को प्राप्त करता है, उसकी विवेचना करता है तथा अपने अनुसार उसे ग्रहण करके उसका अपेक्षित प्रतिउत्तर प्रदान करता है।

अतः सम्प्रेषण प्रक्रिया को समझने में मुख्य आधारभूत पाँच प्रश्न शामिल होते हैं :

सम्प्रेषण प्रक्रिया →	Who?.....Says What?.....To Whom?..... (कौन) (क्या कहा) (किसको) Through which channel?.....With what effect? (किस माध्यम द्वारा) (किस प्रभाव के साथ)

सम्प्रेषण प्रक्रिया के प्रमुख तत्त्व (Main Compenents of Communication Process) : डेविड के बार्लो के अनुसार सुविधा तथा समझ की द ष्टि से सम्प्रेषण प्रक्रिया के प्रमुख तत्त्व निम्न हैं :

1. **विचार (Idea) :** किसी सन्देश को प्रेषित करने से पूर्व उस सन्देशवाहक के मस्तिष्क में उस सन्देश के सम्बन्ध में विचार की उत्पत्ति होती है जिसे वह उसके प्राप्तकर्त्ता को प्रेषित करना चाहता है। प्रत्येक लिखित या मौखिक सन्देश विचार की उत्पत्ति से प्रारम्भ होता है। अतः मस्तिष्क में उठने वाला कोई भी उद्वेग जिसे व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति के साथ बाँटना चाहता है सारांश रूप में उत्पन्न विचार है।
2. **प्रेषक (Encoder-Sender-Speaker) :** प्रेषक सम्प्रेषणकर्त्ता या सन्देश देने वाले व्यक्ति को कहते हैं। इसके द्वारा सन्देश का प्रेषण किया जाता है। सम्प्रेषक सन्देश द्वारा प्रापक के व्यवहार को गति प्रदान करने वाली शक्ति (Driving Force) है।
3. **प्राप्तकर्त्ता (Receiver-Decoder-Listner) :** सम्प्रेषण में दूसरा महत्त्वपूर्ण पक्षकार सन्देश प्रापक है। यह पक्षकार सन्देश को प्राप्त करता है। जिसके बिना सन्देश की प्रक्रिया पूर्ण नहीं हो सकती।

4. **सन्देश (Message or Introduction) :** सन्देश में सूचना, विचार संकेत द ष्टिकोण, निर्देश, आदेश, परिवेदना, सुझाव, आदि शामिल हैं। यह लिखित, मौखिक, शाब्दिक अथवा सांकेतिक होता है। एक अच्छे सन्देश की भाषा सरल स्पष्ट तथा समग्र होनी आवश्यक है।

5. **प्रतिपुष्टि या पुनर्निवेश (Feedback) :** जब सन्देश प्रापक द्वारा सन्देश को मूल रूप से अथवा उसी द ष्टिकोणानुसार समझ लिया जाता है जैसा कि सन्देश प्रेषक सम्प्रेषित करता है। तब सन्देश प्राप्तकर्त्ता द्वारा सन्देश के सम्बन्ध में की गई अभिव्यक्ति का ही प्रतिपुष्टि (Feedback) कहते हैं।

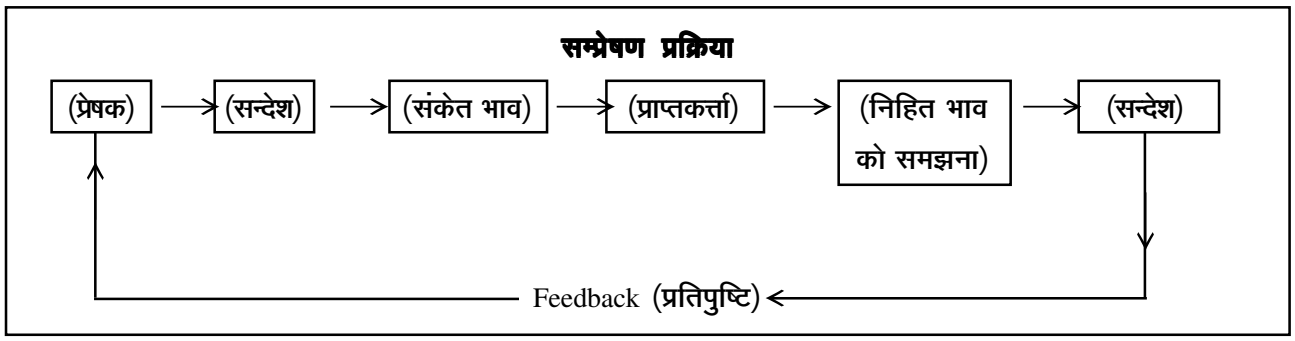

उपर्युक्त आधार पर स्पष्ट है कि सम्प्रेषण के विभिन्न अंग हैं तथा इन सभी अंगों से मिलकर एक सम्प्रेषण मॉडल का निर्माण होता है। ये सभी मॉडल मिलकर सम्प्रेषण के विभिन्न अंगों के आपसी सम्बन्धों की व्याख्या करते हैं, जिसे सम्प्रेषण प्रक्रिया भी कहा जाता है।

सम्प्रेषण प्रक्रिया सम्बन्धी विभिन्न मॉडल
(Different Models and Process of Communication)

1. **शैमन-वीवर मॉडल (Shaon-Weaver Model) :** सम्प्रेषण के सन्देशबद्ध सिद्धान्त का प्रतिपादन शैमन-वीवर द्वारा किया गया। शैमन-वीवर के अनुसार सम्प्रेषण प्रक्रिया में पाँच तत्त्व निहित हैं जो सूचना स्त्रोत से प्रारम्भ होकर प्रेषक द्वारा कोलाहल स्त्रोत को पार करते हुए सन्देश के रूप में उनके लक्ष्य तक प्राप्तकर्त्ता के पास सम्प्रेपित होते हैं :

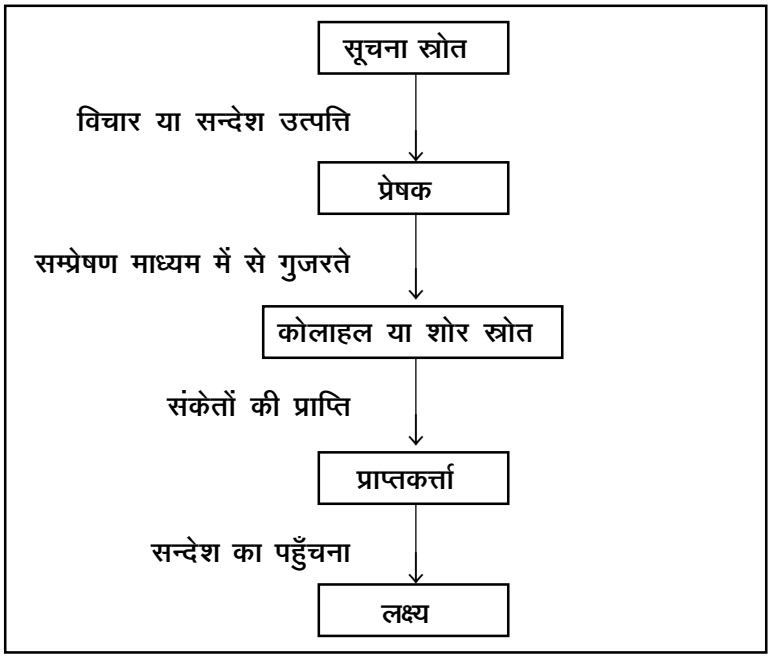

(i) **सूचना स्त्रोत :** यह सम्प्रेष्ण प्रक्रिया का प्रारम्भ है। आज के वैज्ञानिक युग में सूचना एक साधन बन चुकी है। प्रबन्धन को उचित निर्णय लेने में सूचना अनिवार्य भूमिका निभाती है। अतः सूचना ही एक ऐसा स्त्रोत है जिसके द्वारा व्यक्तियों को सोच समझ को परिवर्तित किया जा सकता हैं। सम्प्रेषण प्रक्रिया में सूचना स्त्रोत से ही मनुष्य के मस्तिष्क में विचारों की उत्पत्ति होती है जो सन्देश के रूप में परिवर्तित होकर अपने गन्तव्य स्थान तक पहुँचता है।

(ii) **प्रेषक :** जिस व्यक्ति द्वारा संदेश को प्रेषित किया जाता है वह सम्प्रेषण में प्रेषक कहलाता है। शैमन तथा वीवर मॉडल के अनुसार सम्प्रेषण में प्रेषक की अहम भूमिका होती है जो सूचना स्त्रोत से विचारों को एकत्रित करके सम्प्रेषण के माध्यम से संदेश को उनके प्राप्तकर्त्ता तक पहुँचाता है। प्रेषक संदेश को संदेश बद्ध करके भेजता है।

(iii) **कोलाहल स्त्रोत :** इस मॉडल में कोलाहल या शोर स्त्रोत को भी महत्त्व दिया गया है। सम्प्रेषण प्रक्रिया में जिस माध्यम से सन्देश प्रेषित होते हैं उसमें शोरगुल का पाया जाना स्वाभाविक है जिसकी वजह से सन्देश में अशुद्धि भी हो सकती है।

(iv) **प्रापक :** सम्प्रेपण का उद्देश्य सन्देश को किसी अन्य तक पहुँचाना होता है। जिसके पास सन्देश प्रेषित किया जाता है वह सन्देश का प्रापक या प्राप्तकर्त्ता होता है।

(v) **लक्ष्य :** यह संचार प्रक्रिया की अन्तिम कड़ी है जिसको आधार बनाकर सन्देश देने वाला अपना सन्देश देकर अन्तिम लक्ष्य की प्राप्ति करता है।

(vi) **सन्देश (Message) :** एक ऐसी सूचना जिसे प्रेषक प्राप्तकर्त्ता के पास भेजना चाहता है वह सन्देश कहलाती है।

2. **मर्फी मॉडल (Murphy's Model) :** इस मॉडल के प्रतिपादक मर्फी, ऐच॰ डब्ल्यू॰ हिल्डब्रेन्ड तथा जे॰ पी॰ थॉमस हैं। उनके अनुसार सम्प्रेषण प्रक्रिया के छः मुख्य तत्त्व होते हैं। इस मॉडल के अनुसार इसमें निम्न छः मुख्य भाग होते हैं :

(i) संदर्भ

(ii) सन्देशवाहक

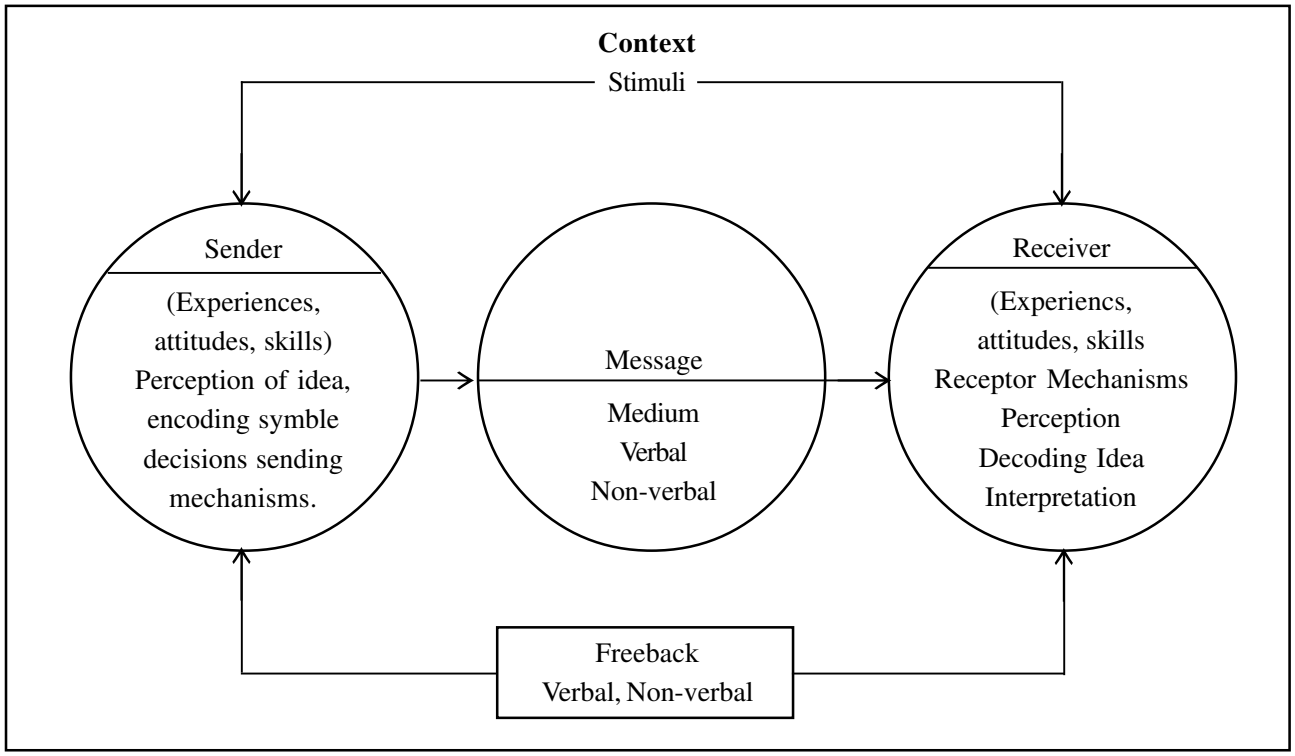

(iii) सन्देश

(iv) माध्यम

(v) प्राप्तकर्त्ता

(vi) प्रतिक्रिया या प्रतिपुष्टि

निष्कर्ष रूप में ऊपर वर्णित मॉडल में एक संदर्भ के अनुसार प्रेषक एक सन्देश चुनता है तथा इसे प्रेषित करता है। प्रेषक सन्देश को भेजने के लिए किसी माध्यम का चुनाव करता है जिसके द्वारा प्राप्त होने वाले सन्देश पर उसका प्राप्त कर्ता अपनी प्रतिपुष्टि देकर संवहन को पूरा करता है।

3. **थिल एवं बोवी मॉडल :** "व्यावसायिक सम्प्रेषण घटनाओं की एक कड़ी है जिसकी पाँच अवस्थाएं हैं जो प्रेषक तथा प्राप्तकर्त्ता को जोड़ती हैं। इस मॉडल के अनुसार सन्देश भेजने वाले के पास कोई विचार होता है जो वास्तविक संसार से सम्बन्धित घटनाओं का सरलीकरण होता है अर्थात् उस विचार को पुष्ट करने में उसने कई चीजों को छोड़ा होता है तथा अधिकतम को मान्यता दी होती है, इससे प्रारम्भ होकर यही विचार सन्देश के रूप में परिवर्तित होकर सन्देश बन जाता है जिसे सन्देश के रूप में प्रेषित करके सन्देश प्राप्तकर्त्ता तक पहुँचा कर उसकी (अर्थात् प्राप्तकर्त्ता की) प्रतिक्रिया ली जाती है।"

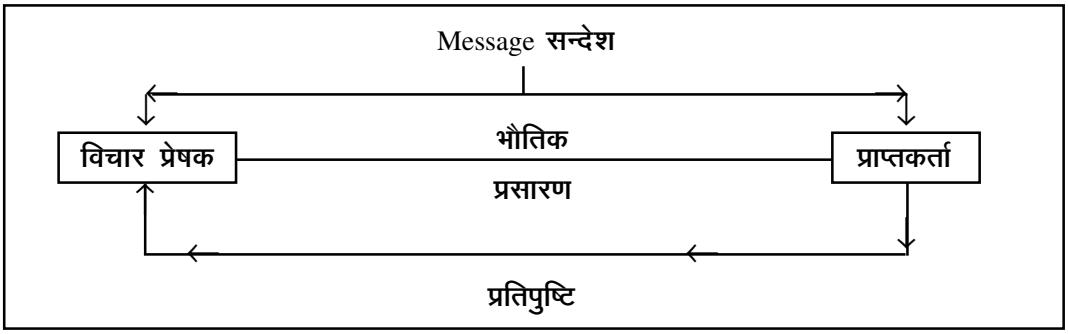

थिल एवं बोवी मॉडल में समाहित घटक निम्न हैं :

(i) विचार, (ii) विचार का सन्देश के रूप में परिवर्तन, (iii) सन्देश का सम्प्रेषण, (iv) प्राप्तकर्त्ता द्वारा सन्देश प्राप्ति एवं (v) प्राप्तकर्त्ता द्वारा प्रतिपुष्टि।

4. **बरलों का सम्प्रेषण मॉडल :** डी॰ के॰ बरलों द्वारा सात अवस्थाओं वाला संचार प्रक्रिया का संचार मॉडल प्रस्तुत किया गया। इसके अनुसार संचार प्रक्रिया संचार स्त्रोत से प्रारम्भ होकर प्रतिक्रिया या प्रतिपुष्टि रूपी अन्तिम कड़ी के रूप में समाप्त होती है। इस मॉडल में सम्प्रेषण प्रक्रिया के सात संघटक बताए गए जो निम्न हैं :

(i) संचार स्त्रोत

(ii) सन्देशवद्धता

(iii) सन्देश

(iv) माध्यम

(v) प्रेषित संवाद का अनुवाद

(vi) प्रापक एवं

(v) प्रतिपुष्टि,

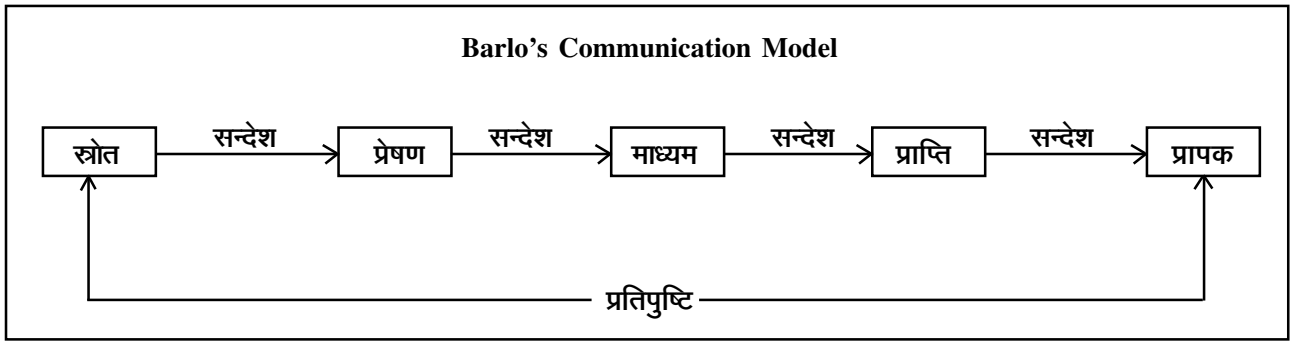

5. **लेसिकर, पेटाइट एवं फ्लैटले मॉडल :** इस मॉडल को संवेदनशीलता मॉडल के रूप में प्रतिपादित किया गया। इसमें सम्प्रेषण प्रक्रिया सन्देश प्रेषण से प्रारम्भ होकर क्रम की पुनःआव त्ति (The Cycle Repeated) पर समाप्त होता है। इन विद्वानों ने स्पष्ट किया कि सम्प्रेषण प्रक्रिया में संवेदन तन्त्र का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है क्योंकि सन्देश प्राप्तकर्त्ता द्वारा सन्देश संवेदन तन्त्र द्वारा प्राप्त किया जाता है। संवेदन तन्त्र संवाद को खोजकर संवाद के साथ-साथ पहले से उपलब्ध कुछ अन्य सूचनाएँ भी एकत्रित करता है। इसमें संवाद को सन्देश माध्यम में उपलब्ध शोर से अलग रखा जाता है ताकि सन्देश में अशुद्धता न हो। यहाँ संवाद को दिया गया अर्थ संवेदन तन्त्र से कुछ प्रतिक्रिया भी प्राप्त कर सकता है जो सन्देश प्रेषक को मौखिक अथवा अमौखिक रूप में भेजी जा सकती है।

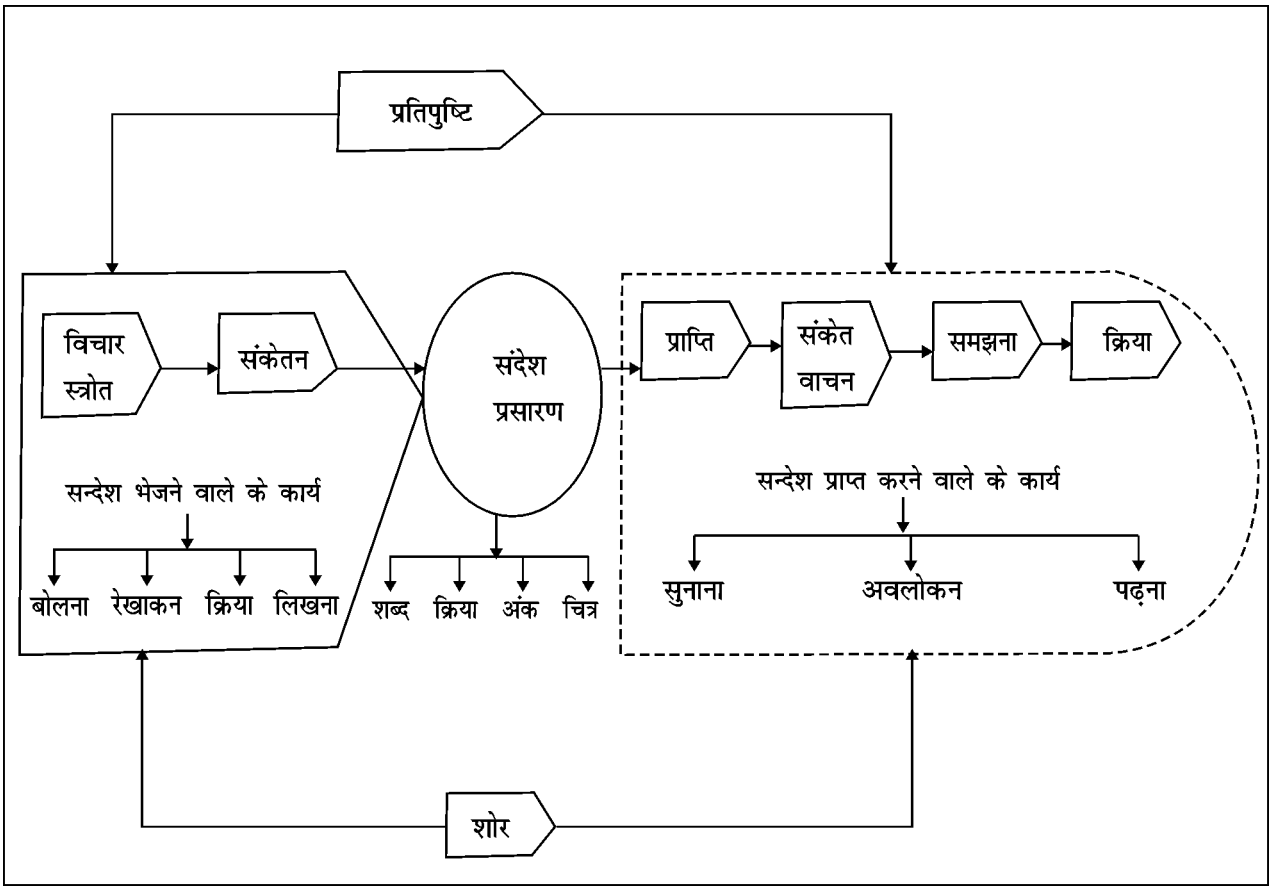

इस मॉडल में मर्सी तथा केविन के बीच सन्देशवाहन को उपर्युक्त विवेचन के आधार पर समझाया गया है जिसमें मर्सी एक सन्देश भेजता है जो केविन द्वारा संवेदन तन्त्र की सहायता से प्राप्त किया जाता है जिसे निस्पंदन

प्रक्रिया द्वारा प्राप्त करके उस पर केविन अपनी प्रक्रिया व्यक्त करता है जिसका क्रम दोनों के बीच उस समय तक चलता है जब तक कि केविन और मर्सी के बीच संवाद पूरा नहीं हो जाता। इस प्रक्रिया में निम्न संघटक शामिल रहते हैं :

(i) सन्देश प्रेषण

(ii) संवेदन तन्त्र द्वारा संवाद की खोज

(iii) निस्पंदन प्रक्रिया

(iv) प्रतिक्रिया की रचना एवं प्रेषण

(v) क्रम की पुनः आव त्ति

पूर्व वर्णित विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रस्तुत किए गए मॉडलों के विश्लेषण के आधार पर निष्कर्ष रूप में सम्प्रेषण प्रक्रिया को निम्मांकित चित्र द्वारा भलीभाँति स्पष्ट किया जा सकता है :

उपर्युक्त चित्र से स्पष्ट होता है कि सम्प्रेषण एक गतिशील प्रक्रिया है जिसमें किसी विशेष उद्देश्य या लक्ष्य प्राप्ति से सम्बन्धित क्रियाओं-प्रतिक्रियाओं की एक श्ं खला समाहित होती है। अतः सम्प्रेषण एक द्विमार्गी प्रक्रिया है। यहाँ पर सम्प्रेषक की सम्प्रेषणक्षमता व प्राप्तकर्त्ता की ग्राह्यक्षमता दोनों ही महत्त्वपूर्ण हैं। सफल सम्प्रेषण प्रक्रिया के लिये प्रतिपुष्टि (Feedback) की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है क्योंकि इसके बिना सम्प्रेषण प्रक्रिया अधूरी रहती है।

सम्प्रेषण प्रक्रिया में श्रोता की भूमिका

(Role of Audience in Communication Process)

एक सफल सम्प्रेषण प्रक्रिया में श्रोता की भूमिका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होती है क्योंकि सन्देश प्रेषक को अपने सन्देशों के उद्देश्यों की पूर्ति के लिये श्रोता से ही सम्पर्क स्थापित करना पड़ता है। किसी भी संगठन में पाँच प्रकार के श्रोता पाये जाते हैं :

1. **प्रारम्भिक श्रोता :** प्रेषक से सन्देश को सर्वप्रथम प्राप्त करने वाला श्रोता प्रारम्भिक श्रोता होता है। इसी के द्वारा सन्देश दूसरे श्रोताओं की ओर प्रवाहित किया जाता है।

2. **माध्यमिक श्रोता :** एक ऐसा श्रोता जो सन्देश को प्राथमिक श्रोता तक पहुँचने से पहले रोके रखने में सक्षम होता है माध्यमिक श्रोता कहलाता है। जैसे किसी अधिकारी का सचिव यह तय करता है कि उसे किस व्यक्ति को अपने अधिकारी से मिलने देना है किसे नहीं बीच में माध्यमिक श्रोता का कार्य करता है।

3. **प्राथमिक श्रोता :** प्राथमिक श्रोता द्वारा यह तय किया जाता है कि सन्देश द्वारा दिये गये परामर्शों को स्वीकार करना चाहिये अथवा नहीं। वह सन्देश के आधार पर भी कार्य कर सकता है। इसी श्रोता के पास ही निर्णय लेने की क्षमता होती है तथा सन्देश प्रेषक को अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिये उसके पास ही जाना पड़ता है।

4. **द्वितीयक श्रोता :** द्वितीयक श्रोता वह है जिसे सन्देश पर टिप्पणी करने के लिये कहा जाता है। द्वितीयक श्रोता सन्देश को मान्यता मिलने के बाद उसे प्रभाव में लाता है।

5. **निरीक्षक श्रोता :** एक ऐसा श्रोता जिसके पास सभी शक्तियाँ उपलब्ध होती हैं निरीक्षक श्रोता कहलाता है। यह राजनीतिक, सामाजिक व आर्थिक रूप से सबल होता है। यद्यपि निरीक्षक श्रोता सन्देश को राकने की शक्ति नहीं रखता किन्तु वह सीधे तौर पर प्राप्त सन्देश पर कोई कार्यवाही नहीं कर सकता फिर भी वह प्रेषक तथा प्राप्तकर्त्ता के बीच हुए आदान-प्रदान पर पूर्ण ध्यान देता है। वह अपनी भविष्य की कार्यवाही का आधार सन्देश के विश्लेषण को बना सकता है।

श्रोता विश्लेषण : क्योंकि सन्देश के प्रेषक को सम्प्रेषण प्रक्रिया के जरिए सन्देश उसके प्राप्त कर्त्ता तक पहुँचाना होता है। अतः विचारों से उत्पन्न सन्देश सही रूप में उसके प्राप्तकर्त्ता तक पुहँचाने के लिए यह आवश्यक है कि वह श्रोताओं का सन्देश प्रेषण से पहले विश्लेषित कर ले ताकि प्राप्तकर्त्ता की प्रतिक्रिया जानने की प्रक्रिया सरल बन सके। उसे यह जानना चाहिए कि सन्देश को प्राप्त करने वाले कौन हैं? संवाद के प्रति उनकी संभावित प्रतिक्रिया क्या हो सकती है? संचार की विषयवस्तु के बारे में वे कितना जानते हैं? सन्देश के प्रेषक से उनका क्या सम्बन्ध हैं?

विश्लेषण की विधि :

(i) श्रोता किस आकार व प्रकार का है?

(ii) प्राथमिक श्रोता कौन है?

(iii) श्रोता से प्रतिपुष्टि की क्या संभावना है?

(iv) श्रोता किस विवेक स्तर का है?

(v) श्रोता के साथ आपका क्या सम्बन्ध है?

यदि प्रेषक अपने श्रोता के बारे में पूर्ण जानकारी रखता है, तो उसके द्वारा किया गया श्रोता विश्लेषण शीघ्रता में किया गया विश्लेषण होगा। परन्तु यदि वह श्रोता के बारे में अनभिज्ञ है तथा सन्देश अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है, तो प्रेषक के लिये यह आवश्यक है कि वह श्रोता के विश्लेषण को गंभीरता से ले तथा उसके लिए कुछ समय दें। व्यावहारिकता की द ष्टि से लिखित सन्देश इस प्रकार लिखें कि श्रोता उसको कम समय तथा परिश्रम से समझ सके। यदि सन्देश मौखिक होता तो सर्वप्रथम श्रोताओं को सन्देश की रूपरेखा दें तथा उसके बाद अपने विचारों को स्पष्ट एवं विवेकपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करें।

सम्प्रेषण प्रक्रिया में सम्प्रेषक हेतु सुझाव

(Suggestions for Sender in the Communication Process)

Harris ने अपनी पुस्तक 'Managing People at Work Concepts and Cases in Inter-personal Behaviours' में एक सम्प्रेषण प्रक्रिया में सम्प्रेषक के लिए निम्नलिखित सुझाव दिये हैं :

1. **पूर्वाग्रहों व तनावों से मुक्ति :** एक सम्प्रेषक को अपने मस्तिष्क में उत्पन्न समस्त पूर्वाग्रहों व तनावों से मुक्त होना चाहिए।
2. **वास्तविक आवश्यकता का विश्लेषण :** सम्प्रेषण से पूर्व सम्प्रेषक को सम्प्रेषण की वास्तविक आवश्यकता का विश्लेषण करना आवश्यक होता है।
3. **प्राप्तकर्त्ता सम्बन्धी जानकारी :** एक सम्प्रेषक को सन्देश संचारित करने से पहले सन्देश प्राप्तकर्त्ता सम्बन्धी सभी जानकारियाँ अर्जित कर लेनी चाहिए।
4. **सन्देशग्राही की संवदेनशीलता की जानकारी :** एक सम्प्रेषक द्वारा सन्देश को प्रसारित करने के पूर्व, प्राप्तकर्त्ता की एकाग्रता कर लेनी चाहिए अर्थात् इस बात की जानकारी कर लेनी चाहिए कि सन्देश का प्राप्तकर्त्ता सन्देश ग्राह्यता के प्रति कितना संवेदनशील है।
5. **उद्देश्य के अनुरूप सम्प्रेषण :** एक सम्प्रेपक को सन्देश प्राप्तकर्त्ता तक प्रत्यक्षतः व्यावहारिक रूप में अपने उद्देश्य के अनुरूप सम्प्रेषित करना चाहिए।

6. **सन्देश की पुनर्राव त्ति :** एक सम्प्रेषक द्वारा सन्देश की पुनराव त्ति करनी चाहिए जिससे सन्देश को वास्तविक अर्थ में समझने में मदद मिलती है।

7. **संकेत सुबोध व सरल हों :** सम्प्रेषक द्वारा सन्देश प्रसारित किये जाने में प्रयुक्त किए जाने वाले संकेत सुबोध व सरल हों ताकि उन्हें आसानी से समझा जा सके।

8. **सम्प्रेषण क्रियाओं एवं विचारों में संगति :** सदैव समप्रेषण क्रियाओं एवं सम्प्रेषित विचारों के मध्य संगति हो।

9. **समय पर सन्देश की पहुँच :** एक सम्प्रेषक द्वारा प्रसारित सन्देश समय पर प्राप्तकर्त्ता के पास पहुँच जाना चाहिए। यदि सन्देश प्राप्तकर्त्ता द्वारा अपेक्षित समय पर या आवश्यकता के अनुरूप नहीं पहुँचता तो प्राप्तकर्त्ता के दिमाग में अन्य विचारों के उत्पन्न होने से सन्देश के प्रति विभ्रम पैदा हो जायेगा।

संचार प्रक्रिया में स्त्रोत का योगदान

(Role of Source in Communication Process)

संचार प्रक्रिया का मूल तत्त्व स्त्रोत होता है जिसे अन्य शब्दों में प्रेषक (Sender) भी कहा जाता है। व्यक्ति या व्यक्तियों का वह समूह स्त्रोत कहलाता है, जो श्रोताओं (Audience या Listenners) को कोई सन्देश पहुँचाना चाहता है। स्त्रोत दो प्रकार होते हैं – (i) प्रत्यक्ष स्त्रोत (Direct source) (ii) अप्रत्यक्ष स्त्रोत (Indirect source) एक ऐसा संगठन जो लक्षित श्रोताओं को संदेश देता है प्रत्यक्ष स्त्रोत कहलाता है जबकि अप्रत्यक्ष स्त्रोत से आशय उन व्यक्तियों से होता है जिनका चुनाव लक्षित श्रोताओं को संदेश पहुँचाने के लिए किया जाता है जैसे रिलायन्स मोबाइल सम्बन्धी विज्ञापन के लिए विरेन्द्र सुहाग का चुनना अप्रत्यक्ष स्त्रोत का उदाहरण है। इस विज्ञापन के द्वारा रिलायन्स कम्पनी ने अपने उत्पाद सम्बन्धी विज्ञापन को स्वयं न प्रसारित कर अप्रत्यक्ष रूप से विरेन्द्र सुहाग से कराया जो कि अप्रत्यक्ष स्त्रोत के रूप में कार्य कर रहा है। इसमें विरेन्द्र सुहाग लक्षित श्रोताओं तक सन्देश पहुँचानें में चुने हुए व्यक्ति के रूप में रिलायन्स कम्पनी के लिए कार्य कर रहा है। इस प्रकार बड़ी-बडी कम्पनियाँ प्रसिद्ध व्यक्तियों को अप्रत्यक्ष स्त्रोत के रूप में पेश करने पर बड़ी-बड़ी राशियाँ व्यय कर रही हैं। अतः संचार प्रक्रिया में प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष स्त्रोतों की अहम भूमिका होती है। स्त्रोत के रूप में सही व्यक्ति का चुनाव किया जाना चाहिए क्योंकि स्त्रोत या प्रेषक की भेजे जाने वाले संन्देश का मुख्य आधार है। स्त्रोत या संदेश प्रेषक संचार प्रक्रिया में निम्न कार्य करता है। जिसके आधार पर उसकी भूमिका स्पष्ट होती है :

1. कुशल स्त्रोत अपने सन्देश द्वारा उपभोक्ताओं के मस्तिष्क में उत्पाद की आवश्यकता को उत्पन्न करता है।
2. एक अच्छा स्त्रोत विज्ञापन की प्रभोत्पादकता उत्पन्न करता है।
3. एक सुप्रसिद्ध स्त्रोत अपने लक्षित श्रोता को अपना सन्देश सही अर्थ में समझा सकता है।
4. कुशल स्त्रोत सम्प्रेषण प्रक्रिया को प्रभावकारी बनाता है।
5. स्त्रोत ही किसी उत्पाद या ब्राण्ड की छवि बढ़ाता है।
6. एक अच्छा स्त्रोत विज्ञापन की विश्वसनीयता बढ़ाता है।
7. प्रसिद्ध स्त्रोत संस्था के विक्रय व लाभों में व द्धि करता है।
8. एक कुशल स्त्रोत उपक्रम को प्रतियोगी फर्मों से प्रतियोगिता करने में सक्षम बनाता है।
9. सुप्रसिद्ध स्त्रोत श्रोताओं का ध्यानाकर्षण कर संस्था के उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक बनता है।

अतः सम्प्रेषण प्रक्रिया में सही स्त्रोत का चुनाव करना चाहिए ताकि संस्था द्वारा प्रसारित सन्देश सही रूप में सही समय पर सही श्रोता तक सही अर्थ में प्रेषित किया जा सके तथा संस्था के उद्देश्यों की प्राप्ति हो सके। सही स्त्रोत के चुनाव में निम्न बातें ध्यान में रखी जाये :

(i) चुने जाने वाला स्त्रोत विश्वसनीय हो।

(ii) विशेषज्ञों को स्त्रोत के रूप में चुना जाये।

(iii) स्त्रोत आकर्षक तथा ख्याति प्राप्त हो।

(iv) अधिकाधिक प्रचलित स्त्रोतों का चुनाव न किया जाये।

उपयोगी प्रश्न

(Useful Questions)

1. सम्प्रेषण प्रक्रिया की व्यख्या कीजिए।
   Explain the Process of Communication.

2. सम्प्रेषण प्रक्रिया की विवेचना कीजिये। संचार प्रक्रिया में कितने मुख्य अंग होते हैं?
   Explain the Communication Process Discuss the various Components of Communication Process.

3. संचार प्रक्रिया के विभिन्न मॉडलों का परीक्षण कीजिए।
   Evaluate the different Models of Communication Process.

4. आप एक संचार प्रक्रिया में श्रोता विश्लेषण किस प्रकार करेंगे?
   How will you undertake audience analysis in the Communication Process?

अध्याय - 2

प्रतिपुष्टि तथा सामूहिक सम्प्रेषण तन्त्र

(Feedback and Symbiotic Interactionism)

सम्प्रेषण एक द्विमार्गी प्रक्रिया है जिसमें सन्देश भेजने वाला एक निश्चित माध्यम के जरिए सन्देश प्राप्तकर्त्ता को सन्देश प्रेषित करता है। जब सन्देश को प्राप्त करने वाला सन्देश को मूल रूप से अथवा प्रेषक के द ष्टिकोणानुसार समझ लेता है तो सन्देश प्राप्त करने वाले द्वारा सन्देश के सम्बन्ध में की गई अभिव्यक्ति को ही प्रतिपुष्टि (Feedback) कहा जाता है। अभिव्यक्ति लिखित, मौखिक, शाब्दिक, अशाब्दिक अथवा सांकेतिक हो सकती है। इस प्रतिक्रिया का स्वरूप प्रतिकूल व अनुकूल हो सकता है। प्रतिपुष्टि एक ऐसा दिशा-निर्देश देती है जिसके द्वारा सम्प्रेषक अपने सन्देश को अधिक प्रभावी ढंग से सम्प्रेषित कर सकता है।

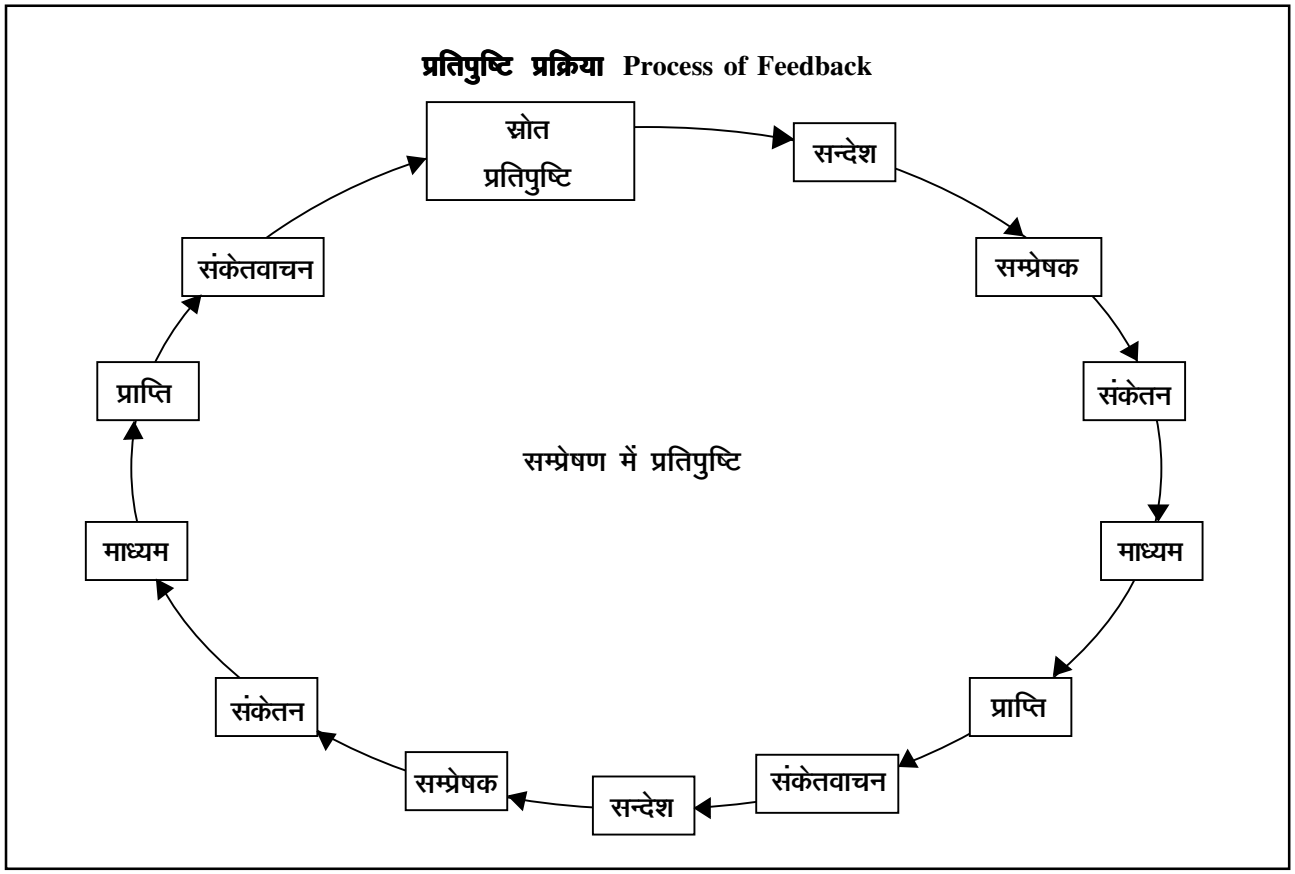

सम्प्रेषण प्रक्रिया में सम्प्रेषित सन्देश उसी दशा में प्रभावी माना जाता है जब उसमें प्रतिपुष्टि की कोई व्यवस्था हो। सम्प्रेषण प्रक्रिया में प्रतिपुष्टि उसी दशा में उपस्थित माना जाता है जब सन्देश को प्राप्त करने वाला सम्प्रेषक के सन्देश पर कोई

प्रतिक्रिया देता है। अतः प्रतिपुष्टि किसी सम्प्रेषण की प्रभावशीलता का मापदण्ड है। भेजा गया सन्देश मूल्यांकन व समीक्षा के लिए प्रयुक्त होता है जिसके अनुसार सन्देश को प्रभावी बनाने के लिए इसमें संशोधन किया जाता है।

सन्देश प्राप्तकर्त्ता द्वारा उचित प्रतिपुष्टि के लिए आवश्यक है कि सन्देश को प्रभावशाली ढंग से सुना जाए तथा उसी द ष्टिकोण से समझा जाए जैसा कि सम्प्रेषित किया जाए। प्रतिपुष्टि प्रक्रिया में जब सन्देश प्रेषक सन्देश का सम्प्रेषण करता है तो वह सन्देश बाह्य तत्त्वों तथा आन्तरिक प्रोत्साहन जैसे – अनुभव, भावनाओं अथवा अरुचि आदि पर निर्भर करता है।

प्रतिपुष्टि की विधियाँ
(Method of Feedback)

सम्प्रेपण के विभिन्न माध्यमों के अन्तर्गत प्रतिपुष्टि की विधियाँ निम्न रूप से स्पष्ट की जा सकती हैं :

1. **आमने-सामने सम्प्रेषण (Face to Face Communication) :** इस विधि में प्रतिपुष्टि तुरन्त एवं लगातार मिलती रहती है। इसमें सन्देश भेजने वाला, सुनने वाले के चेहरे के भाव से सन्देश से सम्बन्धित प्रतिपुष्टि प्राप्त करता है।
2. **मौखिक सम्प्रेषण (Oral Communication) :** इस विधि में प्रतिपुष्टि सन्देश भेजने वाले को लगातार प्रभावित करती रहती है। सन्देश प्राप्त करने वाले द्वारा दी गई प्रतिपुष्टि सन्देश भेजने वाले को सन्देश को और अधिक प्रभावशाली बनाने में सहायता करती है। प्रतिपुष्टि की इस विधि में प्रतिपुष्टि की अभिव्यक्ति तालियाँ या मेज थपथपाकर की जा सकती है जबकि नकारात्मक प्रतिपुष्टि की अभिव्यक्ति अरुचि दिखाकर जैसे उबासी दिखाकर या जम्हाई लेकर की जा सकती है।
3. **लिखित सम्प्रेषण (Written Communication) :** लिखित सम्प्रेषण में उचित प्रतिपुष्टि प्राप्त करना एक कठिन कार्य होता है क्योंकि इसमें पाठकों का चेहरा या उस पर उत्पन्न होने वाले भाव सम्प्रेषक के सामने नहीं होते। यहाँ वास्तविक स्थिति तथा प्राप्त प्रतिपुष्टि में अन्तर हो सकता है।

प्रतिपुष्टि की महत्त्व
(Importance of Feedback)

सम्पूर्ण सम्प्रेषण को प्रभावशाली बनाने के लिए सम्प्रेषण प्रक्रिया में प्राप्तकर्त्ता व सम्प्रेषण की प्रतिपुष्टि अत्यन्त अनिवार्य है क्योंकि सम्प्रेषक इसके द्वारा अपने प्रदर्शन में सुधार कर सकने में सक्षम होता है। सम्प्रेषण प्रक्रिया में प्रतिपुष्टि एक उत्प्रेरक तत्त्व के रूप में कार्य करता है। क्योंकि बिना प्रतिपुष्टि के सम्प्रेषण प्रक्रिया पूर्ण नहीं होती है। उचित प्रतिपुष्टि प्राप्त करने के लिए **'सुनने की कला'** **'Art of Listening'** एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। सन्देश को जब तक प्रभावशाली ढंग से न सुना जाये तब तक कोई उचित प्रतिपुष्टि देना सन्देश प्राप्तकर्त्ता के लिए सम्भव नहीं होता। अतः यह आवश्यक है कि सन्देश को गम्भीरता, एकाग्रता तथा प्रभावशाली ढंग से सुना जाये।

प्रतिपुष्टि को कैसे प्रभावशाली बनाया जाये?
(How to Improve Feedback?)

प्रतिपुष्टि को प्रभावशाली बनाया जाना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। प्रतिपुष्टि को प्रभावी बनाने की दिशा में विभिन्न विशेषज्ञों ने दिशा निर्देशन व सुझाव दिये हैं जो निम्न हैं :

1. **लक्ष्य साध्य प्रतिपुष्टि रखना (Keep Feedback Goal-oriented) :** प्रतिपुष्टि सन्देश के लक्ष्य से सम्बन्धित होनी चाहिए न कि सन्देश की संरचना से। विशेष तौर पर जब प्रतिपुष्टि नकारात्मक हो तो सन्देश प्रेषक के प्रति न होकर ऐसी प्रतिपुष्टि सन्देश के लक्ष्यों से सम्बन्धित होनी चाहिए।

2. **प्रतिपुष्टि निश्चित आचरणों पर केन्द्रित हो (Feedback of cusses on specific behaviour) :** प्रतिपुष्टि का किसी निश्चित प्रक्रिया या आचरण पर केन्द्रित होना आवश्यक है। अतः प्रतिपुष्टि किसी आचरण विशेष से सम्बन्धित होनी आवश्यक है। सन्देश भेजने वाले से यदि प्रतिपुष्टि के सन्दर्भ में यह कहा जाए कि आपका सम्प्रेषण प्रभावी नहीं रहा तो यह अनिश्चित प्रतिप ष्टि होगी जिससे प्रेषक को अपने सन्देश को सुधारने में कठिनाई होगी। अतः प्रतिपुष्टि में यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि सन्देश भेजने में क्या कमी थी?

3. **सहायक (Helpful) :** प्रतिपुष्टि, सन्देश प्राप्त वाले के व्यवहार को जानने में सहायक है तथा साथ ही साथ वह प्राप्तकर्त्ता की प्रतिक्रिया को जानने तथा उसमें सही समझ पैदा करने में भी सहायक होती है जिससे सन्देश भेजने वाले को सन्देश प्राप्तकर्त्ता के सन्देश निर्वचन के अनुकूल क्रियाशील बनाने में सहायता प्राप्त होती है।

4. **विशिष्टता (Specific) :** प्रतिपुष्टि में विशिष्टता का गुण विद्यमान होना जाहिए। यह गुण किसी प्राप्तकर्त्ता को संचारित सन्देश से सम्बन्धित सभी जानकारी प्रदान करने में सक्षम होता है। यदि प्रतिपुष्टि में विशिष्टता न हो तो संचारित सन्देश को समझ पाना अत्यन्त कठिन होता है।

5. **सही समय पर प्रतिपुष्टि (Make Feedback Well-timed) :** प्रतिपुष्टि तथा सन्देश सम्प्रेषण के मध्य जितना समय कम रहेगा, प्रतिपुष्टि उतनी ही प्रभावशाली तथा लाभदायक रहेगी। अतः प्रतिपुष्टि सही समय पर किये जाने से सन्देश भेजने वाले को अधिक लाभ मिल सकेगा।

6. **नियन्त्रण (Control) :** एक सम्प्रेषण प्रक्रिया में प्राप्तकर्त्ता द्वारा सम्प्रेषण के आचरण से सम्बन्धित प्रत्यक्ष नकारात्मक प्रतिपुष्टि पर नियन्त्रण होना चाहिए क्योंकि नकारात्मक प्रतिपुष्टि से सम्प्रेषक निराश व हतोत्साहित होता है।

7. **सही समझना (Ensure understanding) :** प्रतिपुष्टि तभी सम्भव है जब प्राप्तकर्त्ता किसी सन्देश को सुनने, जानने एवं समझने के लिये तैयार हो तथा सन्देश की ग्राह्यता के लिए इसके पास पर्याप्त समय हो। प्रतिपुष्टि सदैव प्राप्तकर्त्ता के समझने, जानने ग्राह्य क्षमता पर निर्भर करती है, साथ ही साथ यह एक प्राप्तकर्त्ता के एक निश्चित समय बिन्दु पर सन्देश के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त करने की क्षमता पर निर्भर करती है।

प्रभावी तथा निष्क्रिय प्रतिपुष्टि निम्न प्रकार स्पष्ट हो सकती हैं :

प्रभावी प्रतिपुष्टि		निष्क्रिय प्रतिपुष्टि
(1) विशेष	⟶	सामान्य
(2) उपयोगी	⟶	अनुपयोगी
(3) समय से	⟶	अन्तिम
(4) स्पष्ट	⟶	अस्पष्ट
(5) वैध	⟶	भ्रामक
(6) वर्णनात्मक	⟶	अपूर्ण
(7) कर्मचारियों के हित में	⟶	कर्मचारियों का अल्प हित
(8) कर्मचारियों की तत्परता	⟶	कर्मचारियों को रक्षात्मक बनाना

सामूहिक सम्प्रेषण तन्त्र

(Symbiotic Interactionism)

सामूहिक सम्प्रेषण तन्त्र में सामूहिक शब्द से अशय समूह व सम्प्रेषण तन्त्र का अर्थ द्विमार्ग/सम्प्रेषण तन्त्र से है। व्यक्ति की मूल प्रकृति समूह में रहने की होती है क्योंकि समूह में रहने वह बहुत सी स्वाभाविक आवश्यकताओं की पूर्ति कर

सकता है। ये समूह मूल रूप में दो प्रकार के हो सकते हैं : 1. औपचारिक एवं 2. अनौपचारिक। औपचारिक समूह कार्य संरचना के आधार पर निर्मित समूह होता हैं जिसका प्रत्येक सदस्य संगठन के लक्ष्यों के प्रति क्रियाशील रहता है। अनौपचारिक समूह से आशय सामाजिक व वैयक्तिक कारणों से स्वाभाविक रूप से निर्मित समूह होती हैं। इन समूहों में व्यक्ति अपने हितों, रुचि, आदत, क्षेत्र, भाषा व उम्र के आधार पर एकत्रित होते हैं।

सम्प्रेषण तन्त्र से आशय एक ऐसे संगठन से है जिसमें विभिन्न छोटे-छोटे समूह तन्त्रों के माध्यम से अर्न्तसंम्बन्धित सम्प्रेषण होता है। इस तन्त्र में छोटे-छोटे अनेक सम्प्रेषण जाल होता हैं। इसके आधार पर एक सम्पूर्ण तन्त्र का विकास होता है जिसे सम्प्रेषण तन्त्र कहा जाता है।

सम्प्रेषण प्रक्रिया सम्बन्धी : सम्प्रेषण तन्त्र के विभिन्न नमूनों का प्रतिपादन **लेविट** एवं **शॉ, बर्नाडद्व एफ. ई. कास्ट, राबिन्स** आदि विद्वानों ने किया है। इसके अनुसार सम्प्रेषण जालों के प्रमुख ढंग निम्न हैं :

(A) चक्र अथवा (Y) जाल (Wheel or Y Nets) : सामान्य कार्यों का तीव्र गति से समस्या निदान के लिये सम्प्रेषण जाल उपयोगी होता है। इसमें प्रतिक्रिया एवं कार्य निष्पादन शत-प्रतिशत सुरक्षित एवं निश्चित होता है। केन्द्रीकृत सम्प्रेषण का नमूना वाई चक्र जाल है जिसमें कार्य सन्तुष्टि न्यूनतम तथा लोच की कमी पाई जाती है। इस जाल को निम्न प्रकार से व्यक्त कर सकते हैं :

1. **तीन व्यक्तियों के सम्प्रेषण चक्र का नमूना –**

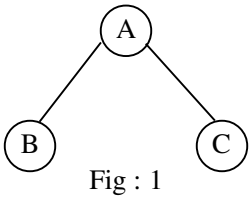

Fig : 1

2. **चार व्यक्तियों के सम्प्रेषण चक्र का नमूना –**

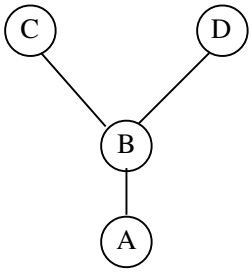

Fig : 2

3. **पाँच व्यक्तियों के सम्प्रेषण चक्र का नमूना –**

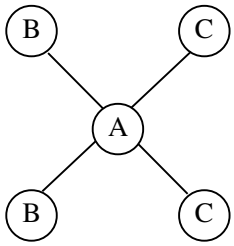

Fig : 3

अध्याय - 11
विज्ञापन के नैतिक तथा वैधानिक पहलू
(Ethical & Legal Aspects of Advertising)

आधुनिक युग में विज्ञापनों के विरुद्ध नीतिगत प्रश्न उठ रहे हैं। विज्ञापनों का मायावी रुप, उनकी सम्मोहन शक्तियाँ, आधुनिक स्वरुप, चरित्र हनन के प्रयत्न, विज्ञापनों की विश्वसनीयता एवं छवि को खराब करने में लगे हैं। अतः विज्ञापनकर्त्ता को देश काल व परिस्थितियों के अनुरुप नैतिकता के मापदण्डों का पालन करना चाहिए। यदि ऐसा नहीं होता है तो उन विज्ञापनों को सामाजिक विरोध का सामना करना पड़ेगा तथा ऐसे बढ़ते हुए विरोध की प्रबलता के कारण सरकार भी ऐसे भ्रामक, मायावी व चरित्र हनन करने वाले विज्ञापनों के विरुद्ध कठोर वैधानिक उपायों के बारे में सोचने के लिए मजबूर हो जाएगी।

इस प्रकार **विज्ञापन में नैतिकता** से आशय प्रचलित मान्यताओं व मूल्यों के आलोक में विज्ञापन संदेश, अपील व प्रस्तुतिकरण की तथ्यात्मकता व सत्यता के आधार पर उसकी स्वीकारोक्ति से है।

विज्ञापन में नैतिकता की आवश्यकता व महत्त्व
(Need & Importance of Ethics in Advertising)

(1) इससे सामाजिक **मूल्यों की सुरक्षा** होती है उनका हनन नहीं होता।
(2) किशोरों व युवाओं में **मानसिक विकार उत्पन्न नहीं** होते।
(3) **विज्ञापनों में विश्वसनीयता** बढ़ती है।
(4) देश के युवाओं व किशोरों का **चारित्रिक उत्थान करने** में सहायक।
(5) नैतिकता मूल्यों पर आधारित विज्ञापन पर **कोई वैधानिक प्रतिबन्ध नहीं** लगते।
(6) नैतिक मापदण्डों पर यदि विज्ञापन खरा उतरता है तो **उपक्रम की अच्छी छवि** बनती है।
(7) विज्ञापन में नैतिक मापदण्डों को अपनाने से **सामाजिक विरोध से मुक्ति** मिलती है।
(8) उपक्रम व उसके **उत्पादों की विश्वसनीयता बढ़ाने में** सहायता मिलती है।
(9) उपभोक्ताओं का **धोखा धड़ी से बचाव** होता है।
(10) विज्ञापित वस्तु को **सामाजिक स्वीकार्यता** मिलती है।

विज्ञापन में नैतिकता के मानदण्ड
(Ethical Standard in Advertising)

जब उत्पादकों द्वारा उत्पादित वस्तुओं को विक्रय हेतु विज्ञापित किया जाता है उनसे संबंधित विज्ञापनों में वांच्छित नैतिकता है या नहीं इसका निर्णय निम्न तथ्यों पर आधारित होता है :

(i) **सत्यता (Integrity)** – किसी वस्तु के विज्ञापन में मिथ्या तथ्यों के उल्लेख से बचना चाहिए व देखना चाहिए कि –

(a) विज्ञापन वस्तु या सेवा के मिथ्या दावों से परे है या नहीं।

(b) विज्ञापन तथ्याधारित है या नहीं।

(c) किसी भी अतिशयोक्तिपूर्ण तथ्य के उल्लेख से परे है या नहीं।

(d) विज्ञापन भ्रान्तियों से परे है या नहीं।

यदि विज्ञापन में उपर्युक्त बातों का उत्तर हाँ में मिलता है तो विज्ञापन नैतिकता के मापदण्डों पर आधारित माना जायेगा अन्यथा नहीं।

(ii) **असामाजिक विद्वेषजनक न हो (Should not Creat Social Tensions)** – विज्ञापन की भाषा, सन्देश व चित्र ऐसे न हों जिनसे सामाजिक विद्वेष फैलने का खतरा पैदा होता हो।

(iii) विज्ञापन धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुंचाने वाला न हो (Advertisment should not hurt the religious feelings of the Customers)।

(iv) **किसी अन्य प्रतिष्ठित निर्माता की वस्तु से भ्रान्ति उत्पन्न करता हो (Should not create an illusion of being a product of some other reputed manufacturer)** – विज्ञापक को ऐसे शब्दों, चित्रों व भाषा का प्रयोग नहीं करना चाहिए जिससे कि पाठकों/दर्शकों/श्रोताओं को यह भ्रान्ति उत्पन्न हो कि ये वस्तुएँ किसी अन्य प्रतिष्ठित निर्माता की है। ऐसा करने से कई ग्राहकों के साथ धोखा हो सकता है।

(v) **कामुक व कुत्सित चित्रों का प्रयोग निषेध (Sexual Pictures to be Avoided)** – विज्ञापित वस्तुओं का विज्ञापन हर वर्ग व उम्र के उपभोक्ताओं के सामने जाता है। अतः कोई भी भद्दा, कामुक, व कुत्सित चित्र विज्ञापनों में पेश न किया जाये क्योंकि इनका सामाजिक मूल्यों व चरित्र पर दुष्प्रभाव पड़ता है।

(vi) **आलोचनापूर्ण न हो (Not to be Critical)** – विज्ञापन में प्रतिस्पर्द्धियों, उनकी वस्तुओं व उन वस्तुओं के निर्णय की गलत आलोचनायें नहीं की जानी चाहिएँ। अपनी वस्तु की विशिष्टताओं व श्रेष्ठताओं को जरूर बयान किया जाना चाहिए।

(vii) **विज्ञापन का उद्देश्य धोखाधड़ी पूर्ण न हो (There should be no Fraudulent Object)** – कई विज्ञापक विज्ञापन में ऐसी भ्रामक भाषा का प्रयोग करते हैं जिसमें भ्रान्ति भाषा का प्रयोग करते हैं जिससे भ्रान्ति हो जाती है। सामान्यतः वारण्टी की भाषा में ऐसी भाषा का प्रयोग होता है, जो गलत है।

(viii) **विधिसम्मत व लोकनीति के अनुसार (Lawfull and Conforming to Public Policy)** – विज्ञापनों का प्रचलित कानून व सार्वजानिक नीतियों के अनुरुप होना भी अनिवार्य है अन्यथा विज्ञापक के विरुद्ध प्रशासनिक व न्यायिक कार्यवाही व दण्ड भी किया व दिया जा सकता है। जैसे औषधि व चमत्कारिक उपचार 'आपत्तिजनक विज्ञापन' अधिनियम 1954 विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

(ix) स्वचिकित्सा की प्रेरणा नहीं (Not to Promote self medication)।

(x) भ्रमात्मक नहीं हो (Should not be illusionary)।

(xi) अनावश्यक रुप से उत्पादों की लागत व मूल्य व द्धि करने वाला न हो (Should not unnecessarily raise the cost & Price of the Product)।

(xii) विज्ञापन अनाचार, अभद्रता, जुआ, हिंसा, अकर्मण्यता एवं भोग विलास को जन्म न देता हो।

विज्ञापन के वैधानिक पहलू
(Legal Aspects of Advertising)

or

विज्ञापन नीतिशास्त्र में सुधार
(Efforts To Improve Advertising Ethics)

आज का उपभोक्ता अपने हितों के प्रतिपूर्ण रूप से जागरुक है। सरकार भी उपभोक्ताओं के हितों को नुकसान करने वाले तथा अनैतिक विज्ञापनों पर प्रतिबन्ध लगाने के लिए सतर्क है। देश में कार्य करने वाली संस्थायें जो सामाजिक भलाई के कार्य करती हैं। विज्ञापन नीतिशास्त्र की रक्षा तथा विज्ञापन के नैतिक मापदण्डों के निर्माण का कार्य करती हैं। अतः विज्ञापन में नैतिकता में सुधार लाने के लिए विभिन्न प्रकार के प्रयास किये गय हैं जो निम्न हैं :

(1) **कानूनी प्रयास (Efforts Through Laws)** M.R.T.P. Act 1969 को अनुचित व्यापार व्यवहारों पर रोक लगाने के लिए बनाया गया। इस अधिनियम के अनुसार –

(a) भ्रामक तथा मिथ्या विज्ञापन नहीं।

(b) प्रलोभन के आधार पर वस्तुएँ बेचने पर प्रतिबन्ध होगा।

(c) न देने के उद्देश्य से भेंट या पुरस्कार देने का प्रस्ताव करना।

(d) न्यूनतम मूल्य से भी कम मूल्य पर माल बेचने का विज्ञापन।

(e) भाग्य के खेल, जुए की प्रव त्ति उत्पन्न करने वाली प्रतियोगिताएँ आयोजित न करना।

(2) **महिला अश्लील निरूपण अधिनियम (Indecent Representation of Women Act)** – इस अधिनियम में विज्ञापनों में महिलाओं को अश्लील रूप में चित्रित करना या कामुकता को उभारने वाले अर्द्धनग्न चित्रों पर प्रतिबन्ध लगाकर दण्डित किये जाने का प्रावधान है।

(3) नवयुवक (हानिप्रद प्रकाशन) अधिनियम (The Young Persons (Harmful) Publications Act 1956) इस अधिनियम के अनुसार देश के ऐसे युवा जिनकी आयु बीस या बीस वर्ष से कम हो, को हानिप्रद प्रकाशनों के सम्भावित दुष्टप्रभावों से बचाना है।

(4) **उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम (Consumer Protection Act 1986)** – इसके अन्तर्गत उपभोक्ता को वस्तु की किस्म, शुद्धता, प्रमाप, मूल्य आदि के बारे में सही–सही सूचना पाने का हक होगा। कोई भी विज्ञापन या प्रचार यदि इस अधिकार का हनन करता है तो उसे इसके विरुद्ध संरक्षण प्राप्त होगा।

(5) पुरस्कार प्रतियोगिता अधिनियम (The Prizes Competition Act 1995)

(6) **औषधि तथा चमत्कारिक उपचार 'आपत्तिजनक विज्ञापन' अधिनियम (Drugs & Magic Remedies (Objectionable Advertisement) Act 1954)** – इस अधिनियम में अशिक्षित एवं भोली–भाली जनता को अनुचित एवं लुभावने विज्ञापनों द्वारा मूर्ख बनाकर ठगने वाले विज्ञापनों पर रोक होगी।

(7) **मदिरा 'उत्पादन एवं वितरण' अधिनियम (Alcoholic Production & Distribution Regulation Act)** – इस अधिनियमानुसार भारतीय दूरदर्शन पर शराब के विज्ञापनों पर प्रतिबन्ध होगा तथा इनके विज्ञापनों में वैधानिक चेतावनी साथ छापनी होगी।

(8) **तोल एवं माप प्रमाप अधिनियम (The standards of Weights & Measures Act 1976)** – अगस्त 1993 से इस

अधिनियम के अनुसार यदि किसी पैक की गई वस्तु के मूल्यों में बजट के कारण कोई व द्धि या कमी आ जाती है तो उस वस्तु के निर्माण करने वाले को विज्ञापन के द्वारा इस बात की सूचना देनी होगी। वस्तुओं के पैकिटों पर निर्धारित मापतोल व मूल्यों को भी छापना होगा।

(9) **भारतीय प्रतिभूति एवं विनियमन बोर्ड (सेबी) अधिनियम (Stock Exchange Board of India Or SEBI Act 1992)** — इस अधिनियम द्वारा स्थापित सेबी नामक संस्था ने कम्पनियों द्वारा जारी किए जाने वाले सार्वजनिक निर्गमनों के विज्ञापन के लिए कुछ नियमों को बनाया है जिनका पालन करना अनिवार्य होगा।

(10) **सिग्रेट (उत्पादन, पूर्ति एवं वितरण) अधिनियम, 1975 (Cigarattes (Production, Supply & Distribution) Act 1975)** — जो उत्पाद स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं, उन पर वैधानिक चेतावनी देनी होगी।

(11) **कम्पनी अधिनियम 1956 की व्यवस्थाएँ** (Provisions of the Companies Act 1956)।

(12) **व्यापार एवं व्यापारिक चिन्ह अधिनियम 1958 (The Trade & Merchandise Marks Act, 1958)** — इस अधिनियम के अनुसार विज्ञापनकर्त्ता को किसी दूसरे निर्माता द्वारा पंजीकृत व्यापारिक चिन्ह आदि का प्रयोग अपने विज्ञापन में नहीं करना चाहिए।

(13) **प्रतिभूति अनुबन्ध (नियमन) अधिनियम** (The Securities Contract Regulation Act, 1956)—इससे स्कन्ध विनिमय केन्द्रों की क्रियाओं का नियमन एवं नियन्त्रण किया जाता है।

आचार संहिताओं का निर्माण
(Formulation of Code of Conduct)

विज्ञापन :

(i) जनता की धार्मिक भावनाओं, नैतिकताओं और शालीनता के विरुद्ध न हो।

(ii) संविधान के उद्देश्य, सिद्धान्त एवं प्रावधानों के विरुद्ध न हो।

(iii) इसका प्रस्तुतिकरण आपराधिक ढंग से न हो।

(iv) विज्ञापन, संविधान, राष्ट्रीय प्रतीक राज्य के प्रतिष्ठित राष्ट्रीय नेता का शोषण न करता हो।

(v) विज्ञापन देश के कानूनों के अनुसार हो।

(vi) किसी जाति, रंग, धर्म, सिद्धान्तों का उपहास न करता हो।

(vii) विज्ञापन से अपराध, अव्यवस्था, हिंसा या कानून तोड़ने की प्रव त्ति को बल न मिलता हो।

(viii) विदेशी राज्यों से नफरत न पैदा करता हो।

(ix) इसका प्रमुख उद्देश्य धार्मिक, राजनैतिक या औद्योगिक विवाद से संबंधित न हो।

सरकारी एवं समाजसेवा संस्थाओं द्वारा
(Through Government & Voluntary Service Institutions)

सरकारी संस्थाओं तथा स्वयंसेवी संस्थाएँ भी विज्ञापन नीतिशास्त्र का प्रचार एवं प्रसार करके विज्ञापनों में नैतिकता उत्पन्न करने में प्रयासरत हैं तथा विक्रय संवर्द्धन के साधनों पर नियंत्रण करने का प्रयत्न करती हैं। ये संस्थाएँ निम्न-लिखित हैं :

(i) **विज्ञापन एवं द श्य प्रसार निदेशालय** (Directorate of Advertising & Visual Publicity)

(ii) **भारतीय विज्ञापन प्रमापीकरण परिषद्** (Advertising Standards Council of India)

(iii) **भारतीय दूरसंचार संस्थान** (Indian Institute of Mass Communication)

(iv) **विज्ञापन क्लब, मुम्बई** (Advertising club of Mumbai)

(v) स्वयंसेवी संगठन जैसे **'उपभोक्ता मंच' विनियोजक संघ** इत्यादि

(vi) **उपभोक्ता कल्याण कोष**

(vii) **पेशेवर विज्ञापन संस्थाएँ जैसे** The Indian Society of Advertisers, The Indian Eastern Newspapers Society, Pressman Advertising & Marketing) **आदि**

(viii) **नेशनल टेलीविज़न सर्वे** (NTS)

स्व-नियमन द्वारा सुधार
(Improvement by Self-Regulation)

विज्ञापन के क्षेत्र में आती नैतिक गिरावट को रोकने के लिए विज्ञापकों को स्वयं अपने नैतिक एवं वैधानिक उत्तरदायित्व पर विचार करना चाहिए। उन्हें अपनी विज्ञापन प्रतियों की लगातार समीक्षा करके यह ज्ञात करना चाहिए कि वे नैतिक मूल्यों तथा वैधानिक उत्तरदायित्त्वों की कसौटी पर कितने खरे उतरते हैं। इसके लिए उनके स्वयं के प्रमाप हों और यदि उनके विज्ञापन उन पर खरे न उतरते हों तो ऐसे विज्ञापनों पर तुरन्त रोक लगाये तथा भविष्य में ऐसी पुनराव त्ति होने से रोकें तभी वे अपने नैतिक मूल्यों का निर्वाह कर सकेंगे तथा सामाजिक व वैधानिक उत्तरदायित्व की पूर्ति कर सकेंगे।

उपयोगी प्रश्न
(Useful Questions)

(1) **'विज्ञापन नैतिकता' क्या है? इसके विभिन्न पहलुओं का विश्लेषण कीजिए।**
What is 'Advertising Ethics'? Analyse its various aspects.

(2) **क्या विज्ञापन अशोभनीय एवं भ्रामक है? विज्ञापन में नैतिकता की भूमिका का विवेचन कीजिए।**
Is advertising indescent and misleading? Discuss the role of Ethics in advertising.

(3) **विज्ञापन एवं नीतिशास्त्र के संबंध में विवेचना कीजिए। विज्ञापन के क्षेत्र में नीतिशास्त्र का पालन क्यों आवश्यक है?**
Discuss the relationship between Advertising and Ethics. Why it is necessary to observe Ethics in advertising?

अध्याय - 12

विक्रय प्रबन्ध - एक परिचय

(Sales Management – An Introduction)

संस्था का आकार छोटा हो या बड़ा विक्रय-विभाग उसमें सबसे महत्त्वपूर्ण होता है। विक्रय कार्यों की देख-रेख तथा विक्रय कर्मचारियों के प्रभावशाली ढंग से नियोजन व नियंत्रण करने के लिए विक्रय प्रबंधक की भूमिका बहुत महत्त्वपूर्ण होती है। अतः आधुनिक प्रबंध व्यवस्था का सबसे महत्त्वपूर्ण अंग विक्रय प्रबंध को माना जाता है।

विक्रय-प्रबंध का अर्थ व परिभाषा

(Meaning & Definition of Sales Management)

प्रारम्भ में, 'विक्रय-प्रबंध' का अर्थ विक्रेतओं के निर्देशन अथवा पर्यावेक्षण' से लगाया जाता था। किन्तु बाद में विक्रय-प्रबंध में प्रबंध के अन्य पहलु भी शामिल किये जाने लगे तथा 20वीं सदीं में प्रबंध का अर्थ अत्यंत रूप से व्यापाक हो गया जिसमें विज्ञापन, विपणन, अनुसंधान, विक्रय-संवर्धन, कीमत निर्धारण, भौतिक वितरण उत्पादन नियोजन को भी विक्रय-प्रबंध में शामिल किया जाने लगा। विक्रय-प्रबंध में विक्रय शक्ति के प्रबंध (Sales Force Management) के साथ-साथ अन्य महत्त्वपूर्ण विपणन क्रियाओं के प्रबंध का भी समावेश होता है।

परिभाषाएँ (Definitions)

(1) **रैचमैन एवं रोमेनो (Rachman & Romano)** के अनुसार, ''विक्रम-प्रबंध में विक्रेताओं की भर्ती, चयन एवं प्रशिक्षण, कार्य पर उनका पर्यवेक्षण व अभिप्रेरण तथा उनके कार्य निष्पादन का मूल्यांकन शामिल है।''

(2) **अमेरिकन मार्केटिंग एसोसिएशन** के अनुसार ''विक्रम-प्रबंध से आशय किसी व्यावसायिक इकाई की उन व्यक्तिगत विक्रय-क्रियाओं के नियोजन, निर्देशन तथा नियंत्रण से है। जिनमें विक्रय शक्ति की भर्ती, चयन, प्रशिक्षण, साज-सज्जा, कार्य-वितरण, मार्ग-निर्धारण, पर्यवेक्षण, पारितोषण एवं अभिप्रेरण शामिल है।''

उपरोक्त परिभाषाओं से यह निष्कर्ष निकलता है कि विक्रय प्रबंध प्रमुख रूप से विक्रय शक्ति तथा विक्रय करने का प्रबंध है। यह सामान्य प्रबंध काा वह हिस्सा है जिसका संबंध विक्रय के नियोजन, संघटन, अभिप्रेरण तथा नियंत्रण से है। इसके क्षेत्र में विक्रेताओं की भर्ती, चुनाव, प्रशिक्षण, कार्य का निर्धारण, पारिश्रमिक भुगतान, निरीक्षण, नियंत्रण आदि कार्य भी शमिल होते हैं।

विक्रय प्रबन्ध एवं विपणन प्रबन्ध

(Sales Management & Marketing Management)

विक्रय प्रबंध संस्था के प्रबंध का वह हिस्सा है जो व्यक्तिगत विक्रय के नियोजन, संगठन, अभिप्रेरण तथा नियंत्रण से सम्बंधित होता है तथा जिसमें विक्रयकर्त्ताओं की भर्ती, चयन, प्रशिक्षण, कार्य-निर्धारण, पारिश्रमिक भुगतान, निरीक्षण, नियन्त्रण आदि क्रियायें सम्मिलित होती हैं।

विपणन प्रबंध सामान्य प्रबंध का वह हिस्सा है जो ग्राहकों की आवश्यकताओं का अध्ययन करता है तथा उनकी पूर्ति के लिये विपणन कार्यक्रमों एवं व्यूह रचना का नियोजन, क्रियान्वयन एवं नियंत्रण करता है विपणन प्रबंध एवं विक्रय प्रबंध में अंतर निम्नलिखित हैं :

विक्रय प्रबंध एवं विपणन प्रबंध में अन्तर

(Difference between Sales Management & Marketing Management)

	अन्तर का आधार	विक्रय प्रबन्ध (Sales Mgt.)	विपणन प्रबंध (Marketing Mgt.)
1.	परिभाषा (Definition)	विक्रय प्रबंध में व्यक्तिगत विक्रय एवं विक्रय कर्मचारियों के नियोजन, संगठन, अभिप्रेरण एवं नियंत्रण की क्रियाएँ शामिल हैं।	इसमें ग्राहकों की आवश्यकताओं की सन्तुष्टि के लिए विपणन कार्यक्रम का नियोजन एवं क्रियान्वयन किया जाता है।
2.	प्रादुर्भाव (Evolution)	विक्रय प्रबन्ध, औद्योगिब क्रान्ति के साथ ही उत्पन्न हुआ माना जाता है।	इसका प्रादुर्भाव पिछले पाँच दशकों में हुआ माना जाता है।
3.	उद्देश्य (Object)	इसका उद्देश्य ग्राहकों को क्रम के लिए प्रोत्साहित कर लाभप्रद विक्रय करना है।	इसका उद्देश्य ग्राहकों की आवश्यक-तदानुसार वस्तुओं का निर्माण तथा उचित समय, स्थान एवं मूल्य पर ग्राहकों को वस्तु प्रदान कर सन्तुष्टि प्रदान करता है।
4.	नियन्त्रणात्मकता (Controllability)	इसमें विक्रय प्रबन्धक को विपरण प्रबन्धक के अधीन कार्य करना होता है।	विपरण प्रबन्धक को महाप्रबन्धक के अधीन कार्य करना होता है।
5.	वस्तुओं की उपलब्धता (Availability of Product)	यह उपलब्ध उत्पादों के लिए विक्रय के लिए प्रयत्न करता है।	यह भविष्य की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर माल प्राप्ति या निर्माण करके विक्रय का प्रयास करता है।
6.	लक्ष्य (Target)	विक्रय प्रबन्ध में 'बिक्री एवं लाभ' पर बल दिया जाता है।	इसमें 'ग्राहक सन्तुष्टि' प्रमुख लक्ष्य होता है।
7.	कार्य का प्रारम्भ (Commencemen of Work)	विक्रय प्रबन्ध का कार्य वस्तुओं के उत्पाद के बाद प्रारम्भ होता है।	विपणन प्रबन्ध का कार्य वस्तुओं के निर्माण के पूर्व ही ग्राहकों की आवश्यकताओं के निर्धारण के साथ शुरू होता है।

अतः **'विक्रय प्रबंध'** केवल व्यक्तिगत विक्रय तथा विक्रेताओं की क्रियाओं के प्रबन्ध तक सीमित रहता है। औद्योगिक क्रान्ति के कारण दीर्घस्तरीय उत्पादन को बल मिलने तथ बाजारों के विकास के फलस्वरूप व्यवसाय में उत्पादन नियोजन, बाजार विभक्तिकरण, उत्पाद विकास, उपभोक्तविक्रय, बाजार, एवं माँग पूर्वानुमान, वितरण श्रंखलाओं के प्रबन्ध, कीमत निर्धारण, विक्रय कर्मचारियों के प्रबन्ध, अन्तर्राष्ट्रीय विपणन, कर्मचारियों के प्रबन्ध आदि की तीव्र आवश्यकता महसूस की गई जिसके कारण 'विपणन प्रबन्ध' पर बल दिया जाने लगा।

विक्रय प्रबंध' के तत्व या विशेषताएँ या लक्षण
(Element or Features or Characteristics of Sales Management)

विक्रय प्रबन्ध का अर्थ, परिभाषाएँ तथा विपणन एवं विक्रय प्रबन्ध के अन्तर के आधार पर विक्रय प्रबन्ध के निम्न तत्त्व या लक्षण स्पष्ट होते हैं :

(1) **व्यवसाय का महत्त्वपूर्ण कार्य (Important Function of Business)** – किसी व्यवसाय की प्रगति तथाा विस्तार प्रमुख रूप से उसके उत्पादक की बिक्री पर निर्भर करता है। यदि व्यवसाय में उत्पाद की अधिकतम बिक्री होती है तो उसे लाभ की प्राप्ति होगी जिससे व्यवसाय उन्नत होता है तथा उसका विस्तार संभव होता है। अतः विक्रय सम्बन्धी नियाओं तथा उनसे सम्बन्धित विक्रय कर्मचारियों के प्रबन्ध के कार्य को विक्रय द्वारा ही किया जाता है।

(2) **नियोजन परामर्श तथा कार्यकारी दायित्व (Consultancy Service & Executive Responsibility)** – विक्रय प्रबन्ध द्वारा कार्यकारी दायित्वों को निभाने के साथ-साथ वि य नियोजन तथा विपणन नियोजन में उच्च प्रबन्धकों को परामर्श दिया जाता है। कार्यकारी दायित्वों को निभाकर 'रेखीय दायित्त्व (Lines Responsibility) को पूरा किया जाता है जबकि नियोजन में परामर्श देकर 'कर्मचारियों के नियोजन' (Staff Responsibility) सम्बन्धी दायित्त्व को भी विक्रय प्रबन्ध द्वारा निभाया जाता है।

(3) **विक्रय शक्ति का प्रबन्धन (Management of Sales Force)** – विक्रय प्रबन्ध द्वारा कर्मचारियों की भर्ती, उनका चयन, प्रशिक्षण, काम सौंपना, मार्ग-निर्धारण, पर्यवेक्षण, पारितोषण, कार्य निष्पादन का मूल्यांकन एवं अभिप्रेरित करने सम्बन्धी कार्य किये जाते हैं। इसके द्वारा इन कार्यों का नियोजन, संगठन एवं नियन्त्रण संबंधी कार्यों को सम्पन्न किया जाता है।

(4) **उद्देश्य (Object)** – विक्रय प्रबन्ध के उद्देश्य अधिकतम विक्रय करे, लाभों में पर्यापत योगदान देकर व्यावसायिक संस्था में विकास एवं विस्तार की सम्भावनाओं को बढ़ाना है। ये उद्देश्य विक्रय का उचित रूप से प्रबन्ध करके ही प्राप्त किये जा सकते हैं।

(5) **विक्रय प्रबन्ध विपणन प्रबंधक का भाग है (Sales Management is the part of Marketing Management)**– विक्रय प्रबन्ध विपणन प्रबंध का एक महत्त्वपूर्ण भाग है। इसका सम्बन्ध संस्था की वस्तुओं व सेवाओं का विक्रय करने वाली 'कर्मचारी शक्ति' का संगठन एवं प्रबन्ध से है।

विक्रय प्रबन्ध की आवश्यकता तथा महत्त्व
(Need & Importance of Sales Management)

प्रत्येक व्यावसायिक संस्था की सफलता व विफलता भी वस्तुओं के विक्रय पर निर्भर करती है। अतः विक्रय प्रबन्ध न केवल व्यावसायिक संस्थाओं के लिए ही महत्त्वपूर्ण है बल्कि इससे उत्पन्न प्रभावों से समाज, राष्ट्र तथा ग्राहकों को भी लाभ प्राप्त होता है। संक्षेप में, निम्नलिखित लाभों से विक्रय प्रबन्ध का महत्त्व स्पष्ट होता है :

(1) **विक्रय-शक्ति को कुशल निर्देशन की आवश्यकता** (Need of efficient directing for Sales Force) – विक्रय-शक्ति प्रत्येक व्यावसायिक संस्था की सबसे महत्त्वपूर्ण शक्ति होती है जो विक्रय के कुशलतम प्रबन्धन द्वारा विकसित एवं स जित होती है। अतः विक्रय प्रबन्धन विक्रय शक्ति का प्रभावी उपयोग व कुशल निर्देशन करके उनकी उपयोगिता में व द्धि करता है। विक्रय प्रबन्धक विक्रेताओं को वित्तीय तथा अवित्तीय प्रेरणाएँ उचित नेत त्व, कुशल निर्देशन तथा कुशल पर्यवेक्षण प्रदान करके उद्देश्य प्राप्ति के लिए प्रेरित करता है।

(2) **संस्था के उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक** (Helpful in Obtaining Objectives of the Institution) – प्रत्येक व्यवसाय लाभ, विकास व विस्तार के लक्ष्यों को सामने रखकर चलता है जिनको विक्रस क्रियाओं व कर्मचारियों के कुशल प्रबन्ध द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। अतः प्रत्येक व्यावसायिक संस्था की सफलता का सम्बन्ध उसके विक्रय एवं विक्रय कर्मचारियों के कुशल प्रबन्धन पर निर्भर करता है।

(3) **सामाजिक तथा व्यावसायिक लक्ष्यों में सन्तुलन** (Balance among Social and Business Objectives) – व्यावसायिक संस्था तथा समाज का आपस में गहरा सम्बन्ध है क्योंकि वस्तु का उपभोक्ता समाज का ही हिस्सा है। अतः व्यवसाय को अपने लाभ प्राप्ति के उद्देश्य एवं लक्ष्यों के साथ-साथ समाज की भावनाओं, आवश्यकताओं आदि को भी ध्यान में रखना आवश्यक है। व्यवसाय के विक्रय विभाग को संस्था के लाभों में व द्धि के साथ-साथ ग्राहक व समाज को उत्पादक द्वारा अधिकतम सन्तुष्टि प्रदान करके सामाजिक लक्ष्य की भी पूर्ति करनी आवश्यक है। अतः विक्रय प्रबन्धन के द्वारा व्यावसायिक तथा सामाजिक लक्ष्यों में सन्तुलन स्थापित करने में भी भूमिका निभानी होती है।

(4) **ग्राहकों की सन्तुष्टि** (Customer's Satisfaction) – विक्रय प्रबन्ध ग्राहकों की क्रय-समस्याओं, शिकायतें आदि का समाधान करके, उन्हें सही मूल्य पर वस्तु उपलब्ध कराने की व्यवस्था करता है। इन श्रेष्ठ सेवाओं तथा श्रेष्ठ उत्पादों का प्रयोग करने से ग्राहकों को अधिकतम सन्तुष्टि प्राप्त होती है जिससे उत्पाद में विश्वसनीयता जाग त होती है तथा क्रेता स्थायित्व को बल मिलता है।

(5) **विक्रय संगठन का निर्माण** (Creation of Sales Organisation) – संस्था के विक्रय विभाग को एक मजबूत संगठन संरचना की आवश्यकता होती है जिसका निर्माण विक्रय प्रबन्ध द्वारा ही किया जाता है। इसके द्वारा कर्मचारियों में कार्यों तथा दायित्वों का इस ढंग से बँटवारा किया जाता है कि वे संस्था के विक्रय लक्ष्यों की प्राप्ति में अधिकतम योगदान दे सकें।

(6) **प्रतिस्पर्द्धात्मक स्थिति में सहायक** (Helpful in facing the competition) – आधुनिक विक्रय में कड़ी प्रतिस्पर्द्धा पाई जाती है। ऐसी स्थिति में सफलता पाने के लिये कुशल व योग्य विक्रेताओं की आवश्यकता होती है। अतः विक्रय प्रबन्ध की सहायता से योग्य एवं कुशल विक्रेता उपलब्ध होते हैं जो प्रभावी विक्रय व्यूही-रचना करके प्रतिस्पर्द्धात्मक स्थिति में प्रतिस्पर्द्धियों को पछाड़ने में सफल होते हैं।

(7) **स द ढ़ नियोजन** (Strong Planning) – व्यावसायिक विक्रय प्रबन्ध द्वारा उपलब्ध सूचनाओं तथा आंकड़ों के आधार पर व्यवसाय के लिए समग्र योजना का निर्माण किया जाता है। ये स द ढ़ योजनाएँ ठोस निर्णयों व लाभदायक नीतियों के निर्माण में सहयोगी बनती हैं। इन ठोस योजनाओं के निर्माण के लिए आवश्यक सूचनाएँ तथा तथ्य जिनका सम्बन्ध बाजार, उत्पाद, लाभ संभावना, प्रतिस्पर्द्धा आदि से होता है, विक्रय प्रबन्ध द्वारा ही उपलब्ध कराई जाती हैं।

(8) **समन्वयक** (Co-ordinator) – विक्रय प्रबन्ध द्वारा संस्था द्वारा निर्मित उत्पाद, नियोजन, वितरण श ंखलाओं, कीमत प्रवर्तन तथा विक्रय कार्यक्रम आदि तत्त्वों के बीच एक अच्छे समन्वय की स्थापना करनी होती है क्योंकि विपणन

कार्यक्रम की सफलता इन तत्त्वों के समन्वय पर ही निर्भर करती है। अतः इन तत्त्वों को समन्वित करने में विक्रय प्रबन्ध को एक समन्वयक की भूमिका अदा करनी होती है।

(9) **व्यवसाय का विस्तार (Expansion of Business) –** अच्छी प्रबन्ध व्यवस्था से विक्रय मात्रा तथा लाभों में व द्धि होने से अच्छी बचतें होती हैं जिनके विनियोजन से व्यवसाय का विस्तार सम्भव होता है।

(10) **अधिक लाभ (More Profit) –** अच्छी विक्रय प्रबन्ध व्यवस्था से अधिक विक्रय होता है जिस पर अधिक लाभ की प्राप्ति होती हैं।

विक्रय प्रबन्ध के कार्य
(Functions of Sales Management)

विक्रय प्रबन्ध द्वारा दो प्रकार के कार्य सम्पन्न किये जाते हैं। इनका प्रथम कार्य विक्रय नियोजन से सम्बन्ध रखता है तथा दूसरे का सम्बन्ध कार्यवाही से होता है। विक्रय प्रबन्ध के कार्यों को प्रमुख रूप से तीन भागों में विभाजित किया जाता सकता है :

I. सामान्य प्रबन्ध तथा प्रशासन सम्बन्धी कार्य (General Managerial and Administrative Functions)
II. विक्रय शक्ति के प्रबन्धन सम्बन्धी कार्य (Sales Force Management Functions)
III. अन्य कार्य (Other Functions)

I. सामान्य प्रबन्धकीय तथा प्रशासनीय कार्य (General Managerial and Administrative Functions)

प्रबन्धक के इन कार्यों का सम्बन्ध संस्था की सामान्य प्रबन्ध व्यवस्था तथा प्रशासन से होता है जो निम्न हो सकते हैं :

(1) **विक्रय की शर्तों तथा विक्रय नीति का निर्धारत (Determination of Term, Conditions of Sales and Sales Policy) :** विक्रय प्रबन्ध द्वारा, बाजार की दशाओं, प्रतिस्पर्द्धा की स्थिति तथा भावी विकास की सम्भावनाओं को ध्यान में रखकर विक्रय की शर्तों तथा विक्रय-नीति का निर्माण किया जाता है। विक्रय की शर्तों का सम्बन्ध मूल्य भुगतान, मालबापसी, साख अवधि, बट्टा कटौती आदि से होता है।

(2) **विक्रय लक्ष्यों का निर्धारण (Determination of Sales Targets) :** विक्रय प्रबन्ध या प्रबन्धक विक्रय लक्ष्यों को निर्धारित करके ही विक्रय योजना को निर्मित करता है। इसका मूल लक्ष्य विक्रय में व द्धि करना होता है किन्तु बाजार भाग, विक्रय संवर्द्धन तथ विक्रय मात्रा आदि सहायक विक्रय लक्ष्य भी साथ-साथ तय किये जाते हैं।

(3) **विक्रय बजट का निर्माण (Determination of Sales Budget) :** विक्रय प्रबन्ध का यह भी दायित्व है कि वह विक्रय सम्बन्धी बजट की भी निर्माण करें। इसमें विक्रय कार्यों तथा विक्रय शक्ति के प्रबन्ध पर होने वाले व्यय की राशि का पूर्व-निर्धारण किया जाता है ताकि विक्रय सम्बन्धी कार्यों के सुचारु रूप से संचालन में कोई कठिनाई न आये।

(4) **विक्रय नियन्त्रण (Sales Control) :** विक्रय प्रबन्ध द्वारा विक्रय सम्बन्धी क्रियाओं तथा विक्रेताओं पर प्रभावी नियन्त्रण स्थापित करने का भी कार्य किया जाता है। इसके अन्तर्गत विक्रय व्यय, विक्रय लागत, विक्रय मात्रा, विक्रेताओं की क्रियाओं आदि की भी देखरेख की जाती है।

(5) **विक्रय सम्बन्धी योजनाओं का निर्माण (Preparation of Sales Plan) :** विक्रय प्रबन्ध संस्था द्वारा निर्मित उत्पादों व सेवाओं की बिक्री के सम्बन्ध में एक समग्र योजना का निर्माण करता है। इसके अन्तर्गत उत्पादों की कीमत,

उनके विक्रय क्षेत्र, विक्रयकर्त्ताओं की आवश्यकता व आवश्यक विक्रय प्रसार के साधनों का निर्धारण करके समुचित योजना तैयार की जाती है।

(6) **अभिप्रेरणा (Motivation) :** विक्रय प्रबन्ध द्वारा अपने यहाँ कार्य करने वाले कर्मचारियों को अभिप्रेरित करने के लिए महत्त्वपूर्ण निर्णय लिए जाते हैं। इससे इन कर्मचारियों का मनोबल ऊँचा रहता है तथा वे कार्य में अधिक रुचि लेते हैं। कर्मचारियों को विक्रय प्रबन्ध द्वारा वित्तीय तथा अवित्तीय दोनों प्रकार की प्रेरणाएँ देकर अभिप्रेरित किया जाता है।

II. **विक्रय शक्ति प्रबन्धन सम्बन्धी कार्य (Sales Force Management Functions)**

विक्रय शक्ति प्रबन्धन का कार्य अत्यनत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि विक्रय विभाग में कार्यरत कर्मचारी ही वास्तव में विक्रय के कार्य को गति प्रदान करते हैं। अतः विक्रय प्रबन्ध को अपने कर्मचारियों व विक्रेताओं के सम्बन्ध में निम्न कार्यों को करना पड़ता है :

1. विक्रेताओं की भर्ती **(Recruitment of Salesman) :** विक्रय विभाग के कार्यों को समुचित ढंग से चलाने के लिए योग्य, कुशल तथा अनुभवी विक्रेताओं की आवश्यकता होती है। अतः इनकी भर्ती के सम्बन्ध में विक्रय विभाग कार्य विश्लेषण एवं कार्य विशिष्ट विवरण तैयार करता है, वर्तमान विक्रेताओं का पुनरावलोकन करके भर्ती के स्रोतों का निर्धारण करता है।

2. प्रशिक्षण (Training) **:** विक्रेताओं का चुनाव कर लेने के बाद उन्हें संस्था की नीतियों, विक्रय विधियों, ग्राहक व्यवहार, विक्रय प्रक्रिया आदि से अवगत कराने के लिए उनकी प्रशिक्षण की व्यवस्था भी विक्रय प्रबन्ध द्वारा की जाती है।

3. **मार्ग निर्धारण (Routing) :** विक्रय प्रबन्ध द्वारा विक्रेताओं के विक्रय कार्य निर्धारित किये जाते हैं तथा उनके क्षेत्रों काभी निर्धारण किया जाता है। इनके निश्चित हो ने से कार्यों में दोहराव नहीं आता, विक्रेता समय से अपने कार्य क्षेत्रों में पहुँच जाते हैं तथा उन पर नियन्त्रण में सुविधा रहती है।

4. **पर्यवेक्षण (Supervising) :** विक्रेताओं के कार्य के निरीक्षण का कार्य विक्रय प्रबन्ध करता हैं इससे यह ज्ञात हो सकता है कि विक्रय कार्य निर्धारित लक्ष्यों, नीतियों व विक्रय कोटे के अनुसार चल रहा है या नहीं इसके लिए पत्र व्यवहार, प्रतिवेदन, व्यक्तिगत निरीक्षण आदि विधियों का प्रयोग किया जाता है।

5. **निर्देशन (Directing) :** उचित निर्देशन द्वारा विक्रय शक्ति का मनोबल बढ़ता है तथा विक्रय कर्मचारियों के प्रयास लक्ष्य की ओर प्रव त होते हैं। अतः उचित निर्देशन एवं नियन्त्रण भी प्रबन्ध का एक महत्त्वपूर्ण कार्य है।

6. **सम्प्रेषण व्यवस्था (Communicating) :** विक्रय प्रबन्ध के द्वारा एक सुद ढ़ संचार व्यवस्था को भी निर्मित किया जाता है ताकि अनुभागों, विक्रयकर्त्ताओं, विक्रय निरीक्षकों तथा उच्चाधिकारियों के साथ संवाद किये जा सकें तथा आवश्यक सूचनाएँ इधर से उधर बिना किसी बाधा के संप्रेषित की जा सके।

7. **चयन एवं नियुक्ति (Selection and Appointment) :** विक्रय प्रबन्ध के अन्तर्गत विक्रय प्रबन्धक चयन योग्यता के मापदण्ड तय करता है, चयन करने की कार्यपद्धति, शैक्षिणक योग्यता, तकनीकी ज्ञान आदि के स्तर का निर्धारण करता है, कर्मचारियों के साक्षात्कार तथा विभिन्न परीक्षणों का आयोजन करके प्रार्थी की उपयुक्तता का निर्धारण करता है। रोज़गार की शर्तें आदि निर्धारित करके चयनित प्रार्थियों के नियुक्ति पत्र देता है।

8. **निष्पादन एवं मूल्यांकन (Evaluating Performance) :** विक्रय प्रबन्धक विक्रेताओं के कार्यों का उचित रूप से निष्पादन का मूल्यांकन भी करताहै जिससे कार्य प्रगति, त्रुटियों, कठिनाइयों, सफलताओं तथा असफलताओं का ज्ञान होता है। इसके लिए प्रमाप निर्धारित किये जाते हैं, उनका मापन करके निष्पादन मूल्यांकन किया जता है, कमी पाये जाने पर सुधारात्मक उपाय किये जाते हैं।

9. **आन्तरिक तथा बाह्य सम्बन्ध (Establishing Internal and External Relations) :** विक्रय लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए विक्रय प्रबंधकों को आन्तरिक तथा बाह्य संबंधों को बनाए रखना आवश्यक होता है। अतः इनके द्वारा इन संबंधों की स्थापना संबंधी कार्य भी किये जाते हैं।

10. **विक्रय कोटा निर्धारण (Fixing the Sales Quota) :** विक्रय प्रबन्धक प्रत्येक विक्रेता के लिए विक्रय कोटा निर्धारित करता है ताकि विक्रेताओं का कार्य निष्पादन नियन्त्रित हो सके। इस कोटे का समय साप्ताहिक, मासिक, त्रैमासिक या वार्षिक हो सकता है।

III. अन्य कार्य (Other Functions)

1. **आर्थिक स्थिति की जानकारी लेना (To know about theEconomic Conditions of Customers) :** विक्रय प्रबन्ध द्वारा विक्रेताओं के माध्यम से ग्राहकों की आर्थिक स्थिति तथा उनकी उधार भुगतान क्षमता सम्बन्धी जानकारी प्राप्त की जाती है जिसके आधार पर साख नीति के सम्बन्ध में उपयुक्त निर्णय लिये जा सकते हैं। इनको गोपनीय रखा जाता है तथा ग्रहकों के हितों के विपरीत दुरुपयोग किया जाता है।

2. **विक्रय अनुसन्धान एवं शोध (Sales Investigation and Resarch) :** श्रेष्ठ विक्रय योजनाओं को निर्मित करने के लिए विक्रय अनुसन्धान एवं शोध की आवश्यकता होती है। अतः विक्रय प्रबन्धक विक्रय की नई तकनीकों, प्रणालियों, क्रेता व्यवहार, क्रेता मनोविज्ञान, आदि के बारे में निरन्तर अनुसन्धान कार्य करवा के उनसे अपने विभाग में कार्यरत् क्रेताओं को अवगत कराके विक्रय संवर्द्धन सम्भव बनाता है।

3. **उधार वसूली (Credit Collection) :** विक्रय प्रबन्ध अपने कार्यालय तथा विक्रेताओं के माध्यम से उधार बिक्री की राशि को वसूल करवाने का कार्य भी करता है जिसके लिए विक्रेताओं को अलग से पारिश्रमिक देने की व्यवस्था की जाती है।

4. **आँकड़ों का एकत्रण (Collection of Data) :** विक्रय योजनाओं तथा नीतियों के निर्माण के लिए विभिन्न सूचनाओं तथा आँकड़ों की आवश्यकता होती है जिनको एकत्रित करवाने का काम भी विक्रय प्रबन्ध द्वारा सम्पन्न किया जाता है।

विक्रय प्रबन्धक के गुण
(Qualities of a Sales Manager)

विक्रय प्रबन्धक विक्रय क्षेत्र का विशेषज्ञ होने के साथ ही उसको विभिन्न समूहों के साथ अन्तर्व्यवहार करना पड़ता है। उसे विभिन्न कर्मचारियों व व्यक्तियों के सम्पर्क में आना पड़ता है तथा वार्तालाप में प्रबधक को अपने व्यावसायिक ज्ञान, विक्रय कौशल, मानसिक गुणों, विक्रय कला, संभाषण योग्यता आदि का प्रभाव डालना होता है। अतः उसमें विभिन्न योग्यताओं, गुणों तथा कौशल आदि का होना आवश्यक है। इन योग्यताओं तथा गुणों का वर्णन निम्न प्रकार से हैं :

I. शारीरिक तथा मानसिक गुण (Physical and Mental Qualities)

एक विक्रय प्रबन्धक में शारीरिक तथा मानसिक द ष्टि से निम्न गुणों की विद्यमानता आवश्यक है :

1. **आशवादी (Optimist) :** विक्रय में विभिन्न तरह के उतार-चढ़ाव होते रहते हैं जिनके कारण माँग व लाभों में व द्धि या कमी का आ जाना स्वाभाविक होता है। उसे इस सम्बन्ध में निराशावादी नहीं होना चाहिये। उसे संगठन के भविष्य के बारे में आशावादी होना चाहिए।

2. **दूरदर्शिता (Farsightedness) :** विक्रय प्रबन्धक को दूरदर्शी होना भी आवश्यक है क्योंकि उसे केवल वर्तमान के बारे में ही नहीं सोचना होता बल्कि भविष्य के बारे में भी विचार करना होता है। उसमें भावी घटनाओं का मूल्यांकन करने, भावी प्रव त्तियों का पूर्वानुमान करने की योग्यता होनी चाहिये ताकि भावी अवसरों का लाभ लिया जा सके।

3. **स्मरण शक्ति (Good Memory) :** विक्रय प्रबन्धक को विक्रय निर्णयों तथा विक्रय व्यवहारों के सम्बन्ध में बहुत-सी बातें ध्यान में रखनी पड़ती हैं। यदि उसकी स्मरण शक्ति तीव्र है तो वह तुरन्त निर्णयों को लेकर व्यवसाय के लिए लाभ उत्पन्न कर सकता है।

4. **अच्छा स्वास्थ्य (Good Health) :** एक विक्रय प्रबन्धक में अधिक कार्यक्षमता होने के साथ-साथ अपने कार्य में रुचि रखने की योग्यता होनी आवश्यक है क्योंकि एक अच्छे स्वास्थ्य वाला व्यक्ति ही अपने दायित्वों का निर्वाह कर सकता है तथा कार्यक्षमता के आधार पर कार्यकुशलता को प्रदर्शित कर सकता है।

5. **बुद्धिमान (Intelligent) :** विक्रय प्रबन्धक में सामान्य चिन्तन प्रवाह, विचारों की सम द्धि, तार्किकता, कल्पना शक्ति तथा योग्यता होनी चाहिए तभी वह व्यक्ति बुद्धिमता कहलायेगा तथा अपने विक्रय प्रबन्ध सम्बन्धी निर्णयों को सही प्रकार से सही समय पर कर पायेगा।

6. **आकर्षक व्यक्तित्व (Attractive Personality) :** एक विक्रय प्रबन्धक के लिए आकर्षक व्यक्तित्व का होना भी आवश्यक है। आकर्षक व्यक्तित्व कई घटकों से बनता है जिसके लिए उसे प्रसन्न मुख मुद्रा वाला, अच्छे हाव-भाव, मधुर भाषी, सक्रिय, कर्मठ, स्फूर्ति, सुद श्य पोशाक पहनने वाला होना आवश्यक है।

7. **परिश्रमी (Hardworker) :** क्योंकि विक्रय प्रबन्धक को अपने विभाग को नेत त्व करना होता है, यदि वह स्वयं परिश्रमी है तो उसकी देखरेख में कार्य करने वाले व्यक्ति भी उसका अनुकरण करेंगे तथा परिश्रमी होंगे अन्यता उन पर भी दुष्प्रभाव होगा तथा परिश्रमी नहीं होंगे।

8. **अधिक कार्य क्षमता (More Stamina) :** एक विक्रय प्रबन्धक को लम्बे समय तक कार्य करना होता है। उसे कार्यालय, विक्रय स्थल तथा बाजारों में बार-बार जाना होता है तथा उन्हें लम्बा समय देना होता है जिसके लिए अधिक कार्य क्षमता का होना आवश्यक है।

9. **पहन शक्ति (Initiative) :** एक विक्रय प्रबन्धक में पहल करने की क्षमता होनी चाहिए क्योंकि विक्रय योजनाएँ, विक्रय नीतियाँ बिक्री तकनीकें तथा विक्रय व्यूह रचना आदि में विक्रय प्रबन्धक की पहल शक्ति ही काम आती है।

10. **कल्पनाशील (Imaginative) :** एक विक्रय प्रबन्धक में नए चिन्तन, विचारों, नई कल्पनाओं को उत्पन्न करने का भी गुण होना चाहिए। इस परिवर्तनशील व्यावसायिक युग में कल्पनाशील प्रबन्धक ही अपने उपक्रम को उन्नति की शिखर पर ले जा सकता है।

11. **तार्किकता (Logical) :** विक्रय प्रबन्धक के सभी निर्णय तर्कों पर आधारित हों।

12.. **आत्म विश्वास (Self Confidance) :** आत्म विश्वास से विक्रय प्रबन्धक अपने विक्रेताओं का अच्छा मार्गदर्शन व उत्साहवर्द्धन कर सकता है।

II. व्यवहारवादी गुण (Behavioural Qualities)

विक्रय प्रबन्धक को विक्रेताओं तथा कर्मचारियों के अतिरिक्त कई व्यापारियों, ग्राहकों, माध्यस्थों तथा विक्रय प्रतिनिधियों के सम्पर्क में आना पड़ता है। अतः उसमें व्यवहार कुशलता का होना आवश्यक बात है जिसके लिए उसे मिलनसार प्रकृति का होना चाहिए। अतः एक विक्रय प्रबन्धक में व्यवहार से सम्बन्धित निम्न गुणों की आवश्यकता होती है :

1. **सहयोगी (Co-operative) :** एक विक्रय प्रबन्धक को अपने कार्य से सम्बन्धित सभी अधिकारियों तथा कर्मचारियों के साथ सहयोगी बनकर कार्य करने वाला होना चाहिये।
2. **मिलनसारिता (Socialiability) :** विक्रय प्रबन्धक की रुचि से विभिन्न वर्ग के लोगों से मिलने-जुलने के अवसर बढ़ते हैं। इसका विक्रय की मात्रा पर अच्छा प्रभाव पड़ता है जोकि विक्रय प्रबन्ध का प्रथम उद्देश्य होता है।
3. **सचरित्र (Good Character) :** विक्रय प्रबन्धक का अपने कार्यों में ईमानदार, कर्मठ, आदर्शवान तथा अपने वचन का पालन करने वाला होना चाहिए।
4. **वैमनस्य मुक्त (Not Jealous) :** एक विक्रय प्रबन्धक को किसी के प्रति वैमनस्य नहीं रखना चाहिये। उसका व्यवहार अपने प्रतिद्वन्द्वियों तथा समान स्तर के अधिकारियों के साथ वैमनस्य रहित होना चाहिए।
5. **निष्ठावान (Loyal) :** विक्रय प्रबन्धक को अपने विक्रेताओं पर पूरा विश्वास करना चाहिये। उसे संस्था की प्रगति के लिए सदैव लाभप्रद विक्रय योजनाएँ तैयार करनी चाहिएँ तथा उसे अपने कार्य, संस्था, नियोक्ता व ग्राहकों के प्रति पूर्ण निष्ठा से कार्य करना चाहिए।
6. **सामाजिक भद्रता (Social Grace) :** विक्रय प्रबन्धक को अपने व्यवहार में सामाजिक मर्यादाओं, प्रथाओं व आचरण नियमों का पूरा ध्यान रखना चाहिये। उसका व्यवहार सभी के साथ भद्रतापूर्ण होना चाहिए।

III. प्रबन्धकीय गुण (Managerial Qualities)

विक्रय प्रबन्धक में प्रबन्धक के सामान्य प्रबन्धकीय गुणों का होना आवश्यक है, इनमें से प्रमुख निम्न हैं :

1. **नेतृत्व (Leading) :** विक्रय प्रबन्धक विक्रय विभाग का सर्वोच्च अधिकारी होने के कारण नेतृत्व का कार्य करता है। अतः उसमें योग्य मार्ग दर्शन, नेतृत्व, निर्देशन तथा परामर्श प्रदान करने की योग्यता होनी चाहिए।
2. **पूर्वानुमान (Forecasting) :** एक विक्रय प्रबन्धक में भावी घटनाओं को देखने, समझने व परखने की योग्यता होनी चाहिए। एक विक्रय प्रबन्धक को विक्रय योजना, विक्रय बजट, विक्रय कोटा, विक्रय नीतियों आदि के निर्माण में भावी घटनाओं के बारे में पूर्वानुमानों के आधार पर निर्णय लेना होता है। अतः उसके पूर्वानुमान तर्कसंगत होने आवश्यक हैं।
3. **नियन्त्रण योग्यता (Controlling Skill) :** एक विक्रय प्रबन्धक को विक्रय क्रियाओं पर नियन्त्रण तथा विक्रेताओं के कार्यों का पर्यवेक्षण तथा मूल्यांकन करना होता है। अतः उसमें नियन्त्रण करने की क्षमता का भी होना आवश्यक है।
4. **निर्णयन (Decision-making) :** विक्रय प्रबन्धक को विक्रय सम्बन्धी मामलों में निर्णय लेने होते हैं तथा इन निर्णयों को लेने के लिए उनके विश्लेषण व श्रेष्ठ विकल्प के चयन की विधि का ज्ञान होना चाहिए। इन निर्णयों का समयानुकूल होना भी आवश्यक है।

5. **नियोजन (Planning Skill) :** एक विक्रय प्रबन्धक को अपने विभाग में ठोस योजनाओं का निर्माण करना हाता है अतः उसमें नियोजन करने की क्षमता का होना आवश्यक है उसमें विक्रय सम्बन्धी प्रत्येक पहलू का कुशलतापूर्वक नियोजन करने की योग्यता होनी चाहिए।
6. **बजट निर्माण (Budgeting) :** एक विक्रय प्रबन्धक को विभिन्न घटकों पर विचार करते हुए संतुलित विक्रय बजट बनाना होता है अतः उसे बजट निर्माण प्रक्रिया का ज्ञान होना भी आवश्यक है।

IV. विक्रयकर्त्ता सम्बन्धी गुण (Salesmanship qualities)

विक्रय प्रबन्धक का प्रमुख कार्य-क्षेत्र विक्रय क्रियाओं तथा विक्रय दल के प्रबन्ध से सम्बन्धित होता है अतः विक्रय कार्यों को कुशलतापूर्वक चलाने के लिए विक्रय प्रबन्धक में निम्न योग्यताओं व कौशल का होना आवश्यक है :

1. विक्रय लक्ष्यों व विक्रय योजनाओं के निर्माण की योग्यता।
2. विक्रय-नीतियों, विक्रय शर्तों तथा मूल्य नीतियों आदि के निर्धारण का ज्ञान।
3. विक्रय नियन्त्रण सम्बन्धी तकनीकों का ज्ञान।
4. विक्रय क्षेत्रों का निर्धारण।
5. विक्रय पर्यवेक्षण तथा कार्य मूल्यांकन एवं उचित मार्ग दर्शन करने की योग्यता।
6. सरकारी नियमों, विदेशी मुद्रा, आयात, निर्यात, विक्रय, संगठनों आदि के सम्बन्ध में जानकारी।
7. ग्राहक परिवेदताओं का निपटारा करना, उनके आदेशों की पूर्ति करना, ग्राहक सम्बन्धों में सुधार लाने सम्बन्धी विधियों की जानकारी
8. विक्रय संगठन सम्बन्धी विभिन्न पहलुओं का ज्ञान।
9. नवीनतम विक्रय तकनीकों, विक्रय प्रक्रियाओं व विक्रय प्रणालियों का ज्ञान।
10. विक्रय बजट, विक्रय पूर्वानुमान व विक्रय कोटा निर्धारित करने की योग्यता।

विक्रय प्रबन्धक के कर्त्तव्य
(Duties of Sales Manager)

एक विक्रय प्रबन्धक, के कर्त्तव्य विभिन्न संस्थाओं के अन्तर्गत विभिन्न हो सकते हैं। विभिन्न संस्थाओं के आकार, उनमें विक्रय की जाने वाली वस्तुओं, उनके वितरण माध्यम तथा विक्रय प्रबन्धकों की सीमाएँ, विभिन्न होने के कारण प्रबन्धकों के कर्त्तव्य भी विभिन्न संस्थाओं में भिन्न-भिन्न पाए जाते हैं। एक सामान्य आकार की संस्था में विक्रय प्रबन्धक के कर्त्तव्य निम्न हो सकते हैं :

1. विक्रय सम्बन्धी, प्रशासनिक कार्य पद्धतियों का निर्माण।
2. निर्धारित नीतियों एवं बजट के अनुसार विक्रय कार्यक्रमों को कार्यन्वित करना।
3. विक्रय उद्देश्यों की पूर्ति के लिए आवश्यक कार्यवाही करना।
4. विक्रय योजनाओं एवं उपलब्धियों को निश्चित अवधि में प्राप्त करने का प्रयास करना।
5. शाखाओं एवं उप-शाखाओं के विक्रय खर्चों, यात्रा बिलों आदि को स्वीकृति देना।
6. विक्रय को प्रभावित करने वाले विक्रय घटकों से उच्च प्रबन्धकों को अवगत कराना।
7. विज्ञापन एवं विक्रय संवर्द्धन कार्यक्रमों के निर्धारण में परामर्श तथा सहायता देना तथा इनका निरीक्षण करना।

8. विक्रय सम्मेलनों का आयोजन करना।
9. सामाजिक उत्तरदायित्वों का निर्वाह करना।
10. संस्था के अन्य विभागों के साथ समन्वय बनाए रखना।
11. विक्रय संगठन का निर्माण करना तथा उसे नेत त्व एवं निर्देशन प्रदान करना।
12. विक्रय बजट का निर्माण करना।
13. कर्मचारियों की भर्ती, प्रशिक्षण आदि कार्यक्रमों का निर्धारण एवं निरीक्षण करना।

विक्रय प्रबन्धक के दायित्व
(Responsibilities of Sales Manager)

एक विक्रय प्रबन्धक को जहाँ अपने कर्त्तव्यों का निर्वाह करना पड़ता है उनके साथ विभिन्न वर्गों के प्रति अपने निम्नलिखित दायित्वों को भी निभाना पड़ता है।

1. **संगठन के प्रति दायित्व (Responsibilities Towards Institution) :** एक विक्रय प्रबन्धक को जिस संस्था में वह कार्य करता है उसके प्रति निम्न दायित्वों को निभाना होता है :
   - i. संस्था के प्रति निष्ठावान रहना (Loyal For the Institution)
   - ii. वस्तुओं की माँग व पूर्ति का नियन्त्रण (Control over Demand and Supply of goods)
   - iii. विक्रय लागत कम करने का प्रयास (Effort of Decrease the Selling Cost)
   - iv. विक्रय क्षेत्रों में होने वाले परिवर्तनों तथा विकास की उच्च अधिकारियों को सूचना देना (To give informations to the High officials for changes and development happening in the field of Sales)
   - v. प्रतिस्पर्द्धा संस्थाओं की क्रियाओं की उच्च अधिकारियों को सूचना देना। (To give informations to the top management regarding the activities of competitors)
   - vi. अभिलेखों तथा रिपोर्टों को विश्लेषित करके कार्यवाही करना (To take the remedial actions by analysing the record and reports)
   - vii. अन्य विभागों के साथ सहयोग करना (To co-operate with other departments)
2. **विक्रेताओं के प्रति दायित्व (Towards Salesmen) :** विक्रय-शक्ति या विक्रय विभाग में कार्यरत् विक्रेता ही विक्रय विभाग की क्रियाओं को संचालित करते हैं। अतः उनके प्रति विक्रय प्रबन्धक के प्रमुख उत्तर दायित्त्व निम्न हैं :
   1. विक्रेताओं को विक्रय नीतियों तथा कार्यक्रमों की जानकारी देना (To give informations regarding Sales Policy and Programmes to the Salesmen)
   2. माल प्रस्तुतिकरण संबंधी आवश्यकता साधन एवं उपकरण उपलब्ध कराना (To make available the required means and equipments for Product Presentation)
   3. ग्राहकों की शिकायतों का निपटारा (Adjustment of Customer's Complaints)
   4. पारिश्रमिक की दरों में संशोधन (Amendment in Remuneration Rates)
   5. विक्रताओं की पदोन्नति बनाना (To Formulate the Promotion Policies)

6. **विक्रेताओं की समस्याओं का निपटारा** (To settle the problems of Salesmen)
7. **विक्रय आदेशों की तत्कालपूर्ति की व्यवस्था** (Arrangement for Complaince of Sales orders)
8. **विक्रयकर्त्ताओं की प्रशिक्षण व्यवस्था** (Training Arrangement for Salesmen)
9. **विक्रेताओं की मानवीय व सामाजिक अवश्यकताओं की पूर्ति में योगदान** (To contribute in settling the human and Social needs of Salesmen)
10. **विक्रेताओं के कार्यों का सही मूल्यांकन तथा उन्हें इसका लाभ देना** (To evaluate the work performance of Salesmen and to remunerate them for it)
11. **विक्रय कमीशन, भत्तों व बोनस की भुगतान व्यवस्था** (Arrangement for payment of Sales Commission, Allowances and Bonus)

3. **स्वयं के प्रति दायित्व (Towards Himself) : विक्रय प्रबधक का अन्य दायित्वों के साथ-साथ अपने प्रति भी दायित्व होता है जो निम्नानुसार है :**
   1. **प्रबन्धकीय कौशल का विकास** (To develop the managerial Skil)
   2. **आत्म विकास करना** (Self Development)
   3. **अपनी कमजोरियों तथा क्षमताओं का विश्लेषण करके उनमें सुधार करना** (Self Appraisal and improvement if required)
   4. **विक्रय संबंधी योग्यता एवं कला कौशल में व द्धि करना** (To improve the Sales ability and its skill of Selling goods)
   5. **विक्रय सम्बन्धी नवीनतम जानकारियाँ लेना** (To obtain the new informations regarding Sales)
   6. **मानवीय चेतना बनाये रखना** (Upkeep of Human Awareness)

4. ग्राहकों के प्रति दायित्व (Towards Customers) :
   1. **ग्राहकों से सम्पर्क स्थापित कर घनिष्ट सम्बन्ध बनाना** (To make relations with customers by making contact with them)
   2. **ग्राहकों को मूल्यवान जानकारियाँ देना** (To give valuable informations to the customers)
   3. **विक्रय संवर्द्धन साधनों के द्वारा उत्पाद सम्बन्धी जानकारी देना** (To give informations regarding product by means of Sales Promotion)
   4. **ग्राहक नीतियों में परिवर्तन करना** (To make changes in Customer Policies)
   5. **ग्राहकों की शिकायतों को दूर करना** (To make adjustments of complaints of Customers)
   6. **ग्राहकों को विक्रय क्षेत्र में होने वाले परिवर्तनों की जानकारी देना** (To give informations to the customers regarding changes in the Sals Territories)
   7. **उत्पाद के नये मॉडलों व नवीन परिवर्तनों की जानकारी देना** (To give informations regarding new models and changes of Products)
   8. **उपभोक्ता को सन्तुष्टि प्रदान करना** (To provide Consumer Satisfaction)

उपयोगी प्रश्न

(Useful Questions)

1. **विक्रय प्रबन्ध को परिभाषित कीजिए। इसके कार्यों तथा महत्त्व की व्याख्या कीजिए।**
   Define Sales Management? Explain its need, importance and functions.

2. **'विक्रय प्रबन्ध' से क्या आशय है? विक्रय प्रबन्ध विपणन प्रबन्ध से कैसे भिन्न है?**
   What is Sales Management? How Sales management differs from Marketing Management?

3. **एक सफल विक्रय प्रबन्धक के गुणों का उल्लेख करें।**
   Mention the qualities of a successful Sales Manager.

4. **विक्रय प्रबन्ध के कार्यों का वर्णन कीजिए।**
   Explainh the Functions of Sales Management.

5. **विक्रय प्रबन्धक के कर्त्तव्यों एवं दायित्वों का वर्णन कीजिए।**
   Describe the duties and responsibilities of a Sales Manager.

अध्याय - 13
विक्रय - कला
(Salesmanship)

आज के जमाने में मशीनों के आविष्कार की वजह से उत्पादन अब समस्या नहीं रह गया है। लेकिन उसका विक्रय एक प्रमुख समस्या है। अब वस्तुएँ बहुत बड़े पैमाने पर बनाई जाने लगी हैं, यहाँ तक कि कभी-कभी अधिक उत्पादन (Over production) की भी स्थिति उत्पन्न हो जाती है। यातायात और संचार सुविधाओं में उन्नति होने से संसार के सभी देश एक-दूसरे के निकट आ गये हैं। इसलिए स्थानीय बाजार का महत्त्व पहले की तुलना में कम हो रहा है।

विक्रय कला का अर्थ एवं परिभाषायें
(Meaning and Definitions of Salesmanship)

'विक्रय-कला' शब्द दो शब्दों के योग से बना है— (i) विक्रय और (ii) कला। विक्रय का अर्थ किसी वस्तु के स्वामित्व का हस्तान्तरण होने से है, अर्थात् ''विक्रेता किसी मूल्य के प्रतिफल स्वरूप अपनी वस्तु के स्वामित्व का हस्तांतरण उस मूल्य देने वाले क्रेता को करता है जिसे हम 'विक्रय' कहते हैं।'' अगर इसका व्यापक अर्थ लगाया जाये तब कहा जा सकता है कि वास्तव में आधुनिक समाज का प्रत्येक व्यक्ति एक विक्रेता ही है। कोई अपनी वस्तु का हस्तांतरण करता है, कोई अपनी कुशलता का विक्रय करता है और कोई अपने ज्ञान को बाँटता है।

दूसरा शब्द है 'कला'। इसका तात्पर्य किसी निश्चित उद्देश्य को वैज्ञानिक ढंग से प्राप्त करना है। इसलिए हम कह सकते हैं कि विक्रय-कला वह कला है जिसके द्वारा स्थायी ग्राहक बनाये जाते हैं तथा वस्तुओं के प्रति क्रेताओं का विश्वास उत्पन्न किया जाता है।

दूसरे शब्दों में ''जिस व्यवस्थित एवं वैज्ञानिक विधियों को अपनाकर विक्रेता अपने निश्चित उद्देश्य में सफलता प्राप्त कर सके वही 'विक्रय-कला' है।''

परिभाषाएँ
(Definition)

विभिन्न विद्वानों ने विक्रय कला की परिभाषा विभिन्न ढंगों से दी हैं। जिसमें प्रमुख निम्नलिखित हैं :

1. **श्री रिपले (Ripley)** के अनुसार, ''विक्रय-कला एक तरह की शक्ति है जिसके द्वारा बहुत-से व्यक्तियों को आपसी वस्तु को लाभ पर प्रसन्नतापूर्वक तथा स्थायी रूप से क्रय करने के लिए जोर दिया जाता है।'' ("Salesmanship is the power, to persuade plenty of people to pleasurably and permanently purchase your product at a profit"—Ripley)
2. **श्री एच. डब्ल्यू. हफ्टन (H. W. Houghton)** के अनुसार, ''विक्रय-कला व्यक्तिगत सेवा है जो वस्तुओं के बेचने के कार्य में समाज को प्रदान की जाती है। यह उस तरह की सेवा है जो उत्पादक और वस्तु-वितरकों तथा

वस्तुओं के उपभोग करने वालों को आवश्यक है।'' (Salesmanship is a personal service rendered to the community in connection with the marketing of goods. It is a service which is essential to the producer and the distributor of goods, as well as to the consumer.—H. W. Houghton)

3. **श्री ह्वाइटहैड हैरोल्ड (Whithead Harold)** के अनुसार, ''विक्रय-कला वस्तुओं को प्रस्तुत करने तथा पेश करने की ऐसी कला है जिससे प्रभावित होकर सम्भावित ग्राहक उस वस्तु की आवश्यकता महसूस करने लगता है और तुरन्त पारस्परिक सन्तोषजनक खरीद हो जाती है।'' ("The art of presenting and offering that the prospect appreciates need for it and that a mutually satisfactory sale follows"—Whitehead Harold)

4. **श्री मेजर एस. डब्लयू. स्कॉट (Scott. H. W. Major)** के अनुसार, ''विक्रेता की क्रियाओं का एक उद्देश्य यह भी कहा जाता है कि वह माल दिखाकर किसी वस्तु की आवश्यकता को बताते हुए उसके प्रति माँग उत्पन्न कर दे, हालाँकि इसके पहले उस व्यक्ति को वस्तु की आवश्यकता की कोई चेतना भी न थी।'' ("It is a part of salesman's business to create demand by demonstrating that the need does exist, although before his visit there was no consciousness of that need"—Scott H. W. Major)

ऊपर लिखी गई परिभाषाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि विक्रय-कला एक तरह की प्रणाली है जिसकी मदद से वस्तुओं का विक्रय सरलतापूर्वक होता है और इससे दोनों पक्षों को पूर्ण रूप से सन्तोष प्राप्त होता है।

परिभाषाओं के विश्लेषण से यह बात स्पष्ट होती है कि विक्रय कला को विज्ञान न होकर दूसरों को प्रोत्साहित अथवा प्रभावित करने की 'कला', 'शक्ति', -योग्यता' अथवा 'गुण' के रूप में परिभाषित किया गया है। अतः विक्रय कला में विज्ञान होने की तुलना में कला के गुण अधिक मौजूद होते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि विक्रय कला व्यक्तिगत योग्यता तथा चातुर्य है जिसके द्वारा विक्रेता सम्भावित ग्राहकों की इच्छाओं, आवश्यकताओं व क्रय समस्याओं की जानकारी लेकर उनकी पूर्ति के लिए उचित वस्तु व सेवा को प्रस्तुत करके उन्हें क्रय के लिए प्रेरित तथा प्रोत्साहित करता है ताकि उन्हें अधिक से अधिक सन्तुष्टि दी जा सके।

निष्कर्ष (Conclusion) : ऊपर दी गई विभिन्न परिभाषाओं तथा विवेचन के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि विक्रय कला में निम्न तत्त्व होते हैं :

1. ''विक्रय कला क्रय कके लिए प्रोत्साहित करती है।''

   "Salesmanship persuades people for the purchase."

2. ''यह एक ऐसी 'शक्ति अथवा योग्यता' है जो व्यक्तियों को क्रय के लिए प्रभावित करती है।''

   "It has the power of ability to influence people for purchase"

3. ''यह अपने विचारों अथवा मतों को बेचने की कला है।''

   "It is the art of selling ideas or point of view."

4. ''ग्राहकों की आवश्यकताएँ पूरी करने की कला है।''

   It is the art of satisfying the need of the customers."

5. ''दूसरों की सेवा करने में वास्तविक रुचि।''

   "A genuine interest in serving others."

6. ''क्रेताओं की समस्याओं को निपटाने की योग्यता।''

   "It has the ability of solving the problems of buyer's."

विक्रय कला की प्रकृति एवं विशेषताएँ

Features or Characteristics or Nature of Salesmanship

विक्रय कला की प्रकृति का अध्ययन करने के लिए निम्न तत्त्वों को आधार के रूप में प्रयोग किया जा सकता है :

1. **विक्रय कला एक कला है (Salesmanship is an Art) :** किसी भी कार्य को श्रेष्ठतम विधि से करना ही कला कहलाता है। कला वह कुशलता तथा योग्यता है जिससे किसी निर्धारित उद्देश्य को पाने की विधि का ज्ञान कराया जाता है। विक्रय कला यह जानकारी देती है कि ग्राहक के साथ कैसे व्यवहार किया जाये तथा उसे कैसे अधिकतम सन्तुष्टि प्रदान की जाये तथा कैसे उसे स्थायी ग्राहक बनाया जाये। विक्रय कला ही विक्रेता तथा क्रेता के मध्य सामंजस्य स्थापित करते हुए दोनों के हित व लाभ की द ष्टि से विक्रय विधि का ज्ञान कराती है। अतः इसके द्वारा विक्रय के कार्य को श्रेष्ठतम विधि से करना सिखाती है जिसके आधार पर यह कला के रूप में प्रतीत होती है।

2. **विक्रय कला एक विज्ञान है (Salesmanship is a Science) :** किसी विषय का क्रमागत तथा विवेकपूर्ण अध्ययन विज्ञान कहलाता है। विक्रय कला में अध्ययन एवं विश्लेषण द्वारा निर्मित निश्चित नियमों तथा सिद्धान्तों का प्रयोग होता है। ये नियम तथा सिद्धान्त क्रेता, विक्रेता तथा वस्तु के सम्बन्ध में हर स्थान पर प्रभावशाली होने के कारण इसे विज्ञान के रूप में प्रकट करते हैं। अतः यह एक विज्ञान है जो ग्राहक के साथ किए गए व्यवहार के परिणाम को बोध कराते हैं।

3. **क्या विक्रय कला जन्म जात गुण है? (Is Salesmanship In-born Quality?) :** पहले ऐसा माना जाता था कि विक्रय कला एक जन्म जात गुण है, किन्तु आज यह सिद्ध हो चुका है कि यह जन्म के साथ मिला हुआ एक गुण होते हुए, इसको सीखा भी जा सकता है। आज के युग में विक्रय कला के प्रयोग-सिद्ध सिद्धान्त हैं जिन्हें प्रशिक्षण प्रदान करके सफल विक्रेताओं को तैयार करने में कार्यरत् हैं। अतः यह केवल जन्म जात गुण न होकर इसे सीखा भी जा सकता है।

4. **व्यक्तिगत सेवा (It is a Personal Service) :** विक्रय कला के द्वारा ग्राहकों से सीधा सम्बन्ध स्थापित करके विक्रेता द्वारा ग्राहकों को व्यक्तिगत सेवा प्रदान की जाती है। विक्रेता ग्राहकों की समस्याओं का अध्ययन करके वस्तुओं के गुणों तथा उपयोगिता के बारे में जानकारी देकर उसे ग्राहक द्वारा क्रय किये जाने में सहायता प्रदान करता है। विक्रय कला के माध्यम से ही विक्रेता क्रेताओं की शंकाएँ दूर करके वस्तु के प्रति आश्वस्त करता है। उसे वस्तु की उपयोग विधि बताता है तथा वस्तु का क्रियात्मक प्रदर्शन करके ग्राहकों को व्यक्तिगत रूप में सेवाएं अर्पित करता है।

5. **विक्रय कला एक पेशे के रूप में (Salesmanship as a Profession) :** आधुनिक विक्रय कला एक पेशे के रूप में परिवर्तित होती जा रही है। किसी भी पेशे के सफल संचालन के लिए सैद्धान्तिक ज्ञान तथा अनुभव की आवश्यकता होती है। अतः एक सफल विक्रेता को भी विक्रय कला के सिद्धान्तों, विधियों आदि का ज्ञान होना आवश्यक है।

   इसके साथ-साथ क्रियात्मक ज्ञान तथा अनुभव से एक कुशल विक्रेता बना जा सकता है। पेशेवर विक्रेता सदा इस सिद्धान्त का पालन करता है—''मैं अपने ग्राहकों के लिए क्या सेवा कर सकता हूँ?'' विक्रेता द्वारा ग्राहकों की आवश्यकताओं तथा समस्याओं पर तुरन्त ध्यान दिया जाता है। किसी भी पेशे में सेवा तत्त्व का पाया जाना आवश्यक होता है। आधुनिक विक्रय कला में पेशेवर विक्रेता का कार्य केवल वस्तु के विक्रय पर समाप्त नहीं होता। विक्रय के बाद दी जाने वाली सेवाएँ उसे पेशे के रूप में प्रस्तुत करती हैं। पेशेवर विक्रय कला का अन्तिम उद्देश्य क्रेता में आस्था तथा विश्वास स्थापित करना है ताकि वह चिरस्थायी ग्राहक बन सके।

6. **विक्रय कला सार्वभौमिक है (Salesmanship is Universal)** : विक्रय कला द्वारा अपनाये गए सिद्धान्त सभी जगहों तथा क्षेत्रों में समान रूप से लागू होते हैं। अब विक्रय कला का प्रयोग केवल विक्रय कार्य में ही नहीं होता बल्कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में इसका प्रयोग दिखाई देता है। आज विक्रय कला का प्रयोग, डॉक्टर, वकील, अध्यापक, अभिनेता, व्यापारी, कर्मचारी सभी अपने-अपने क्षेत्रों में कर रहे हैं। अतः यह एक सार्वभौमिक क्रिया है।

7. **विज्ञापन तथा विक्रय कला दोनों में भिन्नता है (Advertisement & Salesmanship are Different)** : सामान्यतः विज्ञापन तथा विक्रयकला को समान अर्थ में लिया जाता है। किन्तु विज्ञापन तथा विक्रय कला दोनों भिन्न हैं। विज्ञापन जहाँ समाप्त होता है वहाँ से विक्रय कला प्रारम्भ होती है। विज्ञापन ग्राहकों को क्रेता तक लाने में सहायता करता है इसके बाद विक्रेता की विक्रय कला वस्तु के अन्तिम विक्रय को सम्भव बनाती है।

विक्रय कला के प्रकार एवं आधुनिक अवधारणा
(Kinds and Modern Concept of Salesmanship)

विक्रयकर्त्ता के कार्यों की प्रकृति एवं विक्रय कार्य के प्रति उसके द ष्टिकोण के आधार पर विक्रय कला का निम्न 5 वर्गों में वर्गीकरण किया जा सकता है :

1. **माँग पूर्ति विक्रय कला (Demand Filling Salesmanship) :** इस श्रेणी की विक्रयकला में विक्रयकर्त्ता द्वारा क्रेताओं को केवल उनके द्वारा मांगी गयी वस्तुयें प्रदान की जाती हैं। विक्रयकला का यह अत्यन्त प्रारभिक व प्राचीनतम स्वरूप है। परम्परागत वस्तुओं के विक्रय में आज भी विक्रयकला का यही स्वरूप देखा जा सकता है। दैनिक उपयोग की प्रमापित वस्तुओं में भी विक्रयकला का यही स्वरूप देखा जा सकता है। सीमित आपूर्ति वाली वस्तुएँ जिनमें क्रेता के बाजार की स्थितियाँ हो उनमें भी यही स्वरूप देखा जा सकता है। इस प्रकार की विक्रयकला में निम्न लक्षण द ष्टिगोचर होते हैं :
   (i) क्रेता द्वारा मांगे जाने पर केवल मांगी गयी वस्तु प्रस्तुत करना।
   (ii) क्रय-निर्णय व क्रय मात्रा आदि में विक्रेता इस सम्बन्ध में कोई सुझाव या प्रेरणा आदि नहीं देता है।
   (iii) विक्रय कला का यह रूप परम्परागत वस्तुओं, दैनिक उपभोग व आम प्रचलन की प्रमापित वस्तुओं और सीमित आपूर्ति वाली वस्तुओं के संबंध में अपनाया जाता है।
   (iv) इसमें विक्रेता द्वारा उपयोग विधि का प्रदर्शन, व अन्य कोई सेवायें नहीं प्रदान की जाती हैं।
   (v) नव प्रचलित, सुधरी हुई एवं टिकाऊ वस्तुओं के लिए अनुपयुक्त है।
   (vi) इसके अन्तर्गत विक्रयकर्त्ता किसी वस्तु के प्रति इच्छा या अनुराग उत्पन्न करने की चेष्टा नहीं करता है, न ही माँग स जन का प्रयास करता है न अधिक मात्रा में क्रय को प्रेरणा देता है तथा अन्य कोई विशिष्ट सहायता प्रदान नहीं करता है।

2. **स जनात्मक विक्रयकला (Creative Salesmanship) :** किसी वस्तु या सेवा की माँग न भी हो तब भी माँग उत्पन्न कर वस्तु विक्रय में सफलता पाने के कारण इसे स जनात्मक विक्रयकला कहते हैं। औद्योगिक क्रान्ति के फलवरूप बढ़े हुए उत्पादन के विक्रय हेतु माँग स जन की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी जिससे अपनी वस्तुओं का अधिकतम विक्रय किया जा सके। अक्सर बेचने के उद्वेग या अति उत्साह में विक्रयकर्त्ता कभी-कभी यह देखना भी भूल जाता है कि माँग स जन कर जो वस्तु वह क्रेता को बेच रहा है, उसकी क्रेता को वास्तव में अवश्यकता है भी या नहीं और वह प्रस्तावित वस्तु/सेवा क्रेता के लिये उपयुक्त व उपयोगी है अथवा नहीं। इससे उस विक्रयकर्त्ता व उसके उपक्रम के दीर्घकालिक हितों एवं अस्तित्व पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

इस श्रेणी की विक्रयकला का जन्म विशेषतः औद्योगिक क्रान्ति के कारण हुआ। इससे उत्पादन में हुई भारी व द्धि हुई बढ़े हुए उत्पादन को बेचने के लिए माँग स जन को आवश्यक समझा गया। इसके संक्षिप्त लक्षण निम्नलिखित हैं :

(i) इस प्रकार मांग स जन व मांग व द्धि से विक्रय व द्धि में सहायता करना।

(ii) क्रेता को उसके द्वारा सोची गयी मात्रा से अधिक मात्रा में क्रय के लिये प्रेरित करना।

(iii) अति उत्साह से गलत आश्वासनों के आधार पर गलत वस्तुयें बेच देने पर विक्रयकर्त्ता व उसके उपक्रम के दूरगामी हितों पर विपरीत असर पड़ता है जिससे अन्ततः हानि ही होती है। इसलिये मिथ्या सुझाव या परामर्श व मिथ्या आश्वासन देने से बचना चाहिये।

(iv) इसमें सम्भावित क्रेताओं की पहचान कर प्रस्तावित वस्तु/सेवा के प्रति उनमें रुचि उत्पन कर उसके लिए मांग पैदा करना।

(v) विक्रयकला की इस अवधारणा के अन्तर्गत विक्रयकर्त्ता के पास जो भी वस्तुयें होती हैं उन्हें बेचने के वह सभी प्रयास करता है। ऐसा करने में वह कई क्रेताओं को उनके लिये अनुपयुक्त व अनुपयोगी वस्तुयें भी बेच देता है।

3. **प्रतिस्पर्द्धात्मक विक्रयकला (Competitive Salesmanship)**

प्रतिस्पर्द्धात्मक विक्रयकला का अर्थ, प्रतिस्पर्द्धियों का बाजार अंश घटाकर अपना अंश बढ़ाने के वैयक्तिक विक्रय प्रयासों से है। स्पष्ट शब्दों में प्रतिस्पर्द्धात्मक विक्रयकला से आशय प्रतिस्पर्द्धियों की विक्री घटाकर अपनी विक्रय व द्धि करने से है। जबकि स जनात्मक विक्रयकला में नवीन मांग का स जन किया जाता है। स जनात्मक प्रतिस्पर्द्धात्मक विक्रयकला में अन्तर नीचे दी गई तालिका से पूर्णतः स्पष्ट होता है :

स जनात्मक विक्रयकला एवं प्रबतिस्पर्द्धात्मक विक्रयकला में अन्तर

(Creative and Competitive Salesmanship)

	अन्तर का आधार	स जनात्मक विक्रयकला	प्रतिस्पर्द्धात्मक विक्रयकला
1.	आशय (Meaning)	स जनात्मक विक्रयकला के अर्न्तगत जन-साधारण का जीवन स्तर ऊँचा उठाने के लिए नयी-नयी वस्तुओं का उपभोग करने की प्रेरणा दी जाती है।	प्रतिस्पर्द्धात्मक विक्रयकला वह है जिसके अर्न्तगत ग्राहकों को इस बात के लिए प्रेरित किया जाता है कि यह बाजार में उपलब्ध विभिन्न प्रतिस्पर्द्धी वस्तुओं में से वस्तु विशेष का ही प्रयोग करेगा तो उसके लिए लाभकारी होगा।
2.	उद्देश्य (Object)	स जनात्मक विक्रयकला के अर्न्तगत जन-साधारण को उन नवीन वस्तुओं की जानकारी प्रदान की जाती है, जो कि बाजार में अभी अन्य वस्तुओं की तुलना में सबसे बाद में आयी है।	इसका उद्देश्य विद्यमान प्रतिस्पर्द्धी उत्पादों के तुलनात्मक गुण-दोषों की व्याख्या कर स्वयं की वस्तु बेचना है।

3.	साधन (Source)	नये बाजारों के स जन के लिए बाजार अनुसंधान, विज्ञापन, बाजार नियन्त्रण, व्यक्तिगत सर्म्पक आदि समस्त युक्तियों को प्रयोग में लिया जाता है।	इसके अर्न्तगत केवल उन्हीं साधनों का उपयोग किया जाता है। जिनसे उप-भोक्ताओं को स्वयं के ब्रान्ड के उत्पादों की किस्म की श्रेष्ठता सिद्ध होने में सफलता मिलती हो।
4.	प्रतिस्पर्द्धा (Competition)	रचनात्मक विक्रयकला में अपनी वस्तु की माँग का स जन करने का प्रयास किया जाता है। इसमें प्रतिस्पर्द्धी वस्तुओं की माँग पर ध्यान नहीं दिया जाता।	इसके अर्न्तगत प्रतिस्पर्द्धियों की बिक्री घटाकर अपनी बिक्री बढ़ाने के प्रयास किये जाते हैं।

विक्रय कला का एक अन्य वर्गीकरण

एक और अन्य प्रकार से भी विक्रयकला का वर्गीकरण किया जा सकता है, यथा-

1. **काउन्टर विक्रयकला (Counter Salesmanship)**- इसके अन्तर्गत विक्रयकर्त्ता दुकान पर आने वाले क्रेताओं को उनकी आवश्यकतानुसार वस्तु विक्रय करता है। इसके अन्तर्गत क्रेता वस्तु क्रय हेतु विक्रयकर्त्ता के पास जाता है। क्रेता की इस पहल के पीछे विज्ञापन या विक्रय प्रवर्तन अभियान की प्रेरणा भी हो सकती है।
2. **भ्रमणात्मक विक्रयकला (Touring Salesmanship)**- इसके अन्तर्गत विक्रयकर्त्ता स्वयं सम्भावित क्रेताओं का पता लगाकर उनसे सम्पर्क करके विक्रय के प्रयास करता है।
3. **प्रचारक विक्रयकला (Missionary-Salesmanship)**- जब विक्रेता विक्रय की जाने वाली वस्तु का स्वयं प्रचार करके विक्रय करे उसे प्रचारक विक्रय कला कहेंगे।
4. **पेशेवर विक्रयकला अथवा विक्रयकला की आधुनिक अवधारणा (Professional Salesmanship or Modern Concept of Salesmanship)**- उपक्रम के दीर्घकालिक अस्तित्व एवं विकास के लिए चाहे स जनात्मक विक्रयकला का उपयोग किया जाये अथवा प्रतिस्पर्द्धात्मक वर्तमान व्यावसायिक मूल्यों के सन्दर्भ में दोनों ही अनुपयुक्त हैं। केवल पेशेवर विक्रयकला ही एक मात्र ऐसी अवधारणा है जो क्रेताओं के साथ विश्वासाश्रित व दीर्घकालिक सम्बन्धों का निर्माण कर सकती है। यही विक्रयकला की आधुनिक अवधारणा भी है।
5. **प्रचारक विक्रयकला (Missionary Salesmanship)**- इस विक्रयकर्त्ता का उद्देश्य तत्काल कोई क्रयादेश प्राप्त करना न होकर क्रेताओं अथवा उनके परामर्शदाताओं में वस्तु का प्रचार करना होता है। जैसे :- एक पुस्तक विक्रेता अपने द्वारा छापी गई पुस्तक की विशेषताएँ बताते समय उसका कोई सीधा क्रयादेश न लेकर केवल उसका प्रचार करता है।

विक्रयकला के उद्देश्य

(Objectives of Salesmanship)

विक्रयकला का प्रमुख उद्देश्य भावी ग्राहक को प्रस्तावित वस्तु/सेवा की जानकारी देकर उसकी शंकाओं का समाधान करके उसे खरीदने के लिए प्रेरित करना है। **एच. डब्ल्यू. हाटन** के शब्दों में ''विक्रयकला वाणिज्य का आधार है जिसका

प्रथम एवं अन्तिम उद्देश्य वस्तुओं एवं सेवाओं का विपणन है जो क्रेता एवं विक्रेता दोनों के ही पारस्परिक लाभ एवं स्थायी सन्तोष के लिए होता है।'' विक्रयकला के विस्त त उद्देश्य निम्न हैं :

1. वस्तुओं का वैयक्तिक प्रदर्शन।
2. क्रेताओं की शंकाओं का समाधान करना।
3. विक्रय व द्धि।
4. विक्रय हेतु प्रस्तावित वस्तुओं के उपयोग विधि की जानकारी क्रेताओं को देना।
5. सम्भावित क्रेताओं को वस्तुओं एवं सेवाओं की जानकारी देना।
6. प्रतिस्पर्द्धियों के आरोपों का निवारण।

विक्रयकला का क्षेत्र

(Scope of Salesmanship)

विक्रयकला का क्षेत्र दिन प्रतिदिन विस्त त होता जा रहा है। इसका क्षेत्र वस्तु विक्रय तक सीमित न रहकर विपणन के अन्य कार्यों में भी फैलता जा रहा है। विक्रय कला के क्षेत्र के विस्त त होने के अनेक कारण हैं जैसे कि बाजारों का विस्तार होता जा रहा है, क्रेताओं की आवश्यकताओं तथा विभिन्न प्रकार के उत्पादों में व द्धि हुई है तथा उपभोकताओं के भी विभिन्न प्रकार देखने को मिलते हैं। अतः विक्रय कला के क्षेत्र का अध्ययन निम्न शीर्षकों के अन्तर्गत किया जा सकता है :

1. **व्यापार तथा विक्रय कला** (Trade & Salesmanship)
2. **वाणिज्यिक संगठन एवं विक्रयकला** (Commercial Organisations & Salesmanship)
3. **उद्योग तथा विक्रयकला** (Industries & Salesmanship)
4. **सेवा संस्थान एवं विक्रयकला** (Service Institutions & Salesmanship)
5. **गैर व्यावसायिक संगठनों में विक्रयकला** (Salesmanship in Non Business Organisation)
6. **व्यावसायिक उपक्रमों के विक्रय क्रियाओं से अतिरिक्त कार्यों में विक्रयकला** (Salesmanship in other than Selling activities of Business enterprises)

1. **व्यापार तथा विक्रयकला (Trade & Salsemanship)**- विक्रय कला ही व्यापार की सफलता का आधार होता है। विक्रयकला थोक-विक्रय, फुटकर विक्रय, काउन्टर पर विक्रय, बाजारों में भ्रमण करके विक्रय तथा पेशेवर परामर्शदाताओं आदि का सहयोग प्राप्त करने में सहायता करती है। उचित तर्कों के आधार पर सोची गई मात्रा में अधिक क्रय की प्रेरणा देकर विक्रय कला के माध्यम से विक्रय में व द्धि करते हैं तथा अपेक्षाकृत बड़े क्रयादेश प्राप्त करने में सहायक बने हैं।

   विक्रयकला के अन्तर्गत विक्रय उपरान्त सेवाएं भी प्रदान की जाती हैं जिससे व्यापार को बढ़ाने में सहायता प्राप्त होती है।

2. **वाणिज्यिक संगठन एवं विक्रय कला (Commercial Organisation & Salesmanship)**- व्यापार तथा व्यापार की सहायक क्रियाएं जैसे बैंकों, बीमा कम्पनियों, यातायात सेवाएं तथा भण्डारण सुविधाएं प्रदान करने वाली संस्थाओं के कार्यों में भी विक्रय कला की आवश्यकता होती है।

   विक्रय कला के माध्यम से ही यातायात सेवाएं तथा भण्डारण सुविधा देने वाली संस्थायें अधिक से अधिक व्यवयाय कर पाती हैं। अतः विक्रय कला के क्षेत्र से ऊपर वर्णित व्यावसायिक संगठनों की क्रियाएं भी अछूती नहीं हैं।

3. **उद्योग एवं विक्रय कला (Industries & Salesmanship)**- उद्योगों को थोक व फुटकर विक्रेताओं की प्राप्ति, उनसे लगातार सम्पर्क, क्रय आदेशों की प्राप्ति आदि कार्यों के लिए विक्रयकला का सहारा लेना पड़ता है। औद्योगिक उत्पादों के क्रेताओं के विशेषज्ञ परामर्शदाताओं से सम्पर्क रखकर अपने उत्पादों के पक्ष में परामर्श दिलाने हेतु भी विक्रय कला की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त अन्य औद्योगिक क्रेताओं व बड़े संस्थागत क्रेताओं के क्रयादेश प्राप्त करने के लिए भी औद्योगिक संस्थाओं को विक्रयकला का प्रयोग करना पड़ता है।

4. **सेवा संस्थान तथा विक्रयकला (Service Institutions & Salesmanship)**- कुछ संस्थाएं सेवा प्रदान करने का कार्य करती हैं जैसे परिवहन सेवाएं, विद्युत आपूर्ति करने वाली संस्थाएं, भण्डारण सेवाएं प्रदान करने वाली संस्थायें। इनको भी बड़े-बड़े आदेश प्राप्त करने के लिए विक्रयकला का प्रयोग करना पड़ता है।

5. **गैर व्यावसायिक संगठनों में विक्रयकला (Salesmanship in Non Business Organisations)**- ऐसे संगठन जो गैर व्यावसायिक कार्यों में संगल्गन हैं उन्हें भी विक्रयकला को प्रयोग करना पड़ता है जैसे पेशेवर संस्थायें चार्ट्रड एकाउन्टेंन्टस की फर्मे, लागत लेखांकक, चिकित्सक फर्मे, अधिवक्ता आदि के कार्य। ये संस्थायें बड़े-बड़े प्रतिष्ठानों का कार्य प्राप्त करने के लिए इनको भी विक्रय कला को अपनाना पड़ता है। धार्मिक उद्देश्यों से जुड़े मठाधीश विविध प्रलोभनों व लुभावने वक्तव्यों व लेखों के माध्यम से अधिक से अधिक लोगों को अपने साथ जोड़ते हैं तथा आर्थिक अंशदान आदि को प्राप्त करते हैं।

6. **व्यावासायिक उपक्रमों के विक्रय के बाद के कार्यों में विक्रयकला (Salesmanship in other than selling activities of business enterprises)**- विक्रय पूर्व की कई क्रियाएं भी विक्रय कला के विक्रय क्षेत्र में आती हैं। विक्रय कला के क्षेत्र में विक्रेताओं का चयन, प्रशिक्षण तथा उन्हें उचित विधि से पारिश्रमिक प्रदान करने सम्बन्धी क्रियाएं भी विक्रयकला के क्षेत्र माना जा सकता है। विक्रय नियोजन एवं नियन्त्रण भी विक्रयकला के क्षेत्र में शामिल किया जाता है। इनके अतिरिक्त विक्रय के बाद क्रेता को यह बताया जाता है कि उसका उपयोग किस प्रकार करना है। वस्तु खराब होने पर उन्हें उसके रख रखाव के तरीके से भी अवगत कराया जाता है।

विक्रयकला के सम्बन्ध में नये विचार
(New Concept of Salesmanship)

कुछ विद्वान विक्रय कला को पेशेवर विक्रयकला (Professional Salesmanship) भी कहने लगे हैं। उनका विचार है कि 'वर्तमान विक्रय कला पेशेवर विक्रय है।' (Modern salesmanship is professional selling) जिसमें क्रेता विक्रयकर्त्ता के सम्बन्ध में पेशे व सलाह पर आधारित है। जिस तरह एक डॉक्टर मरीज को देखकर उचित दवा देता है। उसी तरह एक विक्रयकर्त्ता अपने ग्राहक की आवश्यकता का अध्ययन करता है और फिर उसे उचित वस्तु या सेवा प्रदान करता है।

विक्रयकला का महत्त्व
(Importance of Salesmanship)

विक्रयकला आर्थिक विकास का एक महत्त्वपूर्ण स्तम्भ है। क्योंकि विक्रयकला वाणिज्य की आधारशिला है। अतः इसे आर्थिक विकास का आधार माना जा सकता है। विक्रयकला के इस महत्त्व को निम्नलिखित बिन्दुओं के अन्तर्गत विवेचित किया जा सकता है :

1. **वस्तुओं की मांग में व द्धि (Increase in Demand)**- विक्रयकला के माध्यम से विविध वस्तुओं के प्रति ग्राहकों में इच्छा जाग त की जाती है, और उसे प्रभावी मांग में परिणित किया जाता है। इस प्रकार समाज में उत्पादन व द्धि को प्रोत्साहन मिलता है और रोजगार विस्तार होता है।

2. **उपक्रम के उत्पादन में व द्धि (Increase in Production)**- विक्रयकला से बढ़ी मांग की पूर्ति हेतु अधिक उत्पादन करना पड़ता है। उत्पादन व द्धि से बड़े स्तर पर उत्पादन के लाभ मिलते हैं, प्रति इकाई लाकत कम आती है, अधिक लोगों को रोजगार प्राप्त होता है व राष्ट्रीय आय में व द्धि होती है।

3. **नई वस्तुओं के निर्माण को प्रोत्साहन (Promotes New Products)**- विक्रयकला के माध्यम से नई-नई वस्तुओं का विक्रय आसान हो जाता है। इसलिए उत्पादक नई-नई वस्तुओं का विकास व निर्माण करता रहता है। आधुनिक प्रौद्योगिकी के प्रयोग से अनेक नई वस्तुओं का निर्माण करने पर इन नवीन वस्तुओं को जन समूह में प्रचलित करने के लिए विक्रयकला की सर्वाधिक आवश्यकता पड़ती है।

4. **जीवन स्तर में सुधार (Increases Standard of Living)**- उपरोक्त विवरणानुसार विक्रयकला से मांग बढ़ती है जिससे उत्पादन बढ़ता है, वस्तुओं के प्रति इकाई लागत कम हो जाती है और रोजगार का विस्तार होता है तो समाज सदस्यों की आय व क्रय शक्ति भी बढ़ जाती है। इस अतिरिक्त क्रय शक्ति का प्रयोग वे नयी वस्तुओं के उपभोग में करते हैं। अतएव जिस वस्तु का प्रयोग वह क्रय शक्ति के अभाव में नहीं कर पा रहा था, बढ़ी हुई क्रय शक्ति से वह ऐसा कर सकता है। थाम्पसन के अनुसार, ''आज जो हम उच्च जीवन-स्तर बिता रहे हैं वह एक सीमा तक विक्रयकला की ही देन है।''

5. **व्यवसाय का विस्तार (Expansion of Business)**- विक्रयकला वस्तुओं या सेवाओं की मांग में व द्धि करती है, जिसे पूरा करने के लिए अधिक उत्पादन की आवश्यकता होती है। अधिक उत्पादन से उत्पादन साधनों का अनुकूलतम एवं अधिकतम उपयोग सम्भव होता है जो अन्ततः व्यवसाय का विस्तार, विविधीकरण, उत्पादन व द्धि, नये बाजारों में प्रवेश नयी वस्तुओं के उत्पादन आदि को सम्भव बनाता है।

6. **व्यापार चक्रों से सुरक्षा (Safety from Trade Cycles)**- विक्रयकला से उपभोग व उत्पादन का क्रय स्थापित करके व्यापार चक्रों के मन्दी के दौरों से व उससे होने वाली हानियों से बचा जा सकता है। विक्रयकला व्यक्तियों के मन में वस्तुओं को खरीदने व उपभोग करने की प्रेरणा देती है। इससे लोगों की आय का उपयोग विविध वस्तुओं को खरीदने में होता है, जिससे उत्पादन व द्धि की प्रेरणा मिलती है। उपभोग व उत्पादन में अनवरत व द्धि होते रहने से व्यापार चक्रों से बचा जा सकता है।

7. **प्रतिस्पर्द्धात्मक क्षमता का विकास (To Develop Competitive Strength)**- वर्तमान कड़ी स्पर्द्धा के दौर में प्रभावी विक्रयकला से ही व्यवसायी अपने उत्पादों का विक्रय कर सकते हैं। इस प्रकार उपक्रम के अस्तित्व रक्षा व विकास के लिए विक्रयकला अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

8. **अधिक लाभ (More Profits)**- विक्रयकला से विक्रय व द्धि होती है व अधिक विक्रय से अधिक लाभ प्राप्त होता है। व्यापारी कम मूल्य पर भी अधिक मात्रा में विक्रय करके अधिक लाभ कमा सकते हैं।

9. **क्रेताओं के ज्ञान में व द्धि (Increases Knowledge of Customers)**- विक्रयकला से क्रेताओं के ज्ञान में भी व द्धि होती है। विक्रयकर्त्ता द्वारा क्रेताओं को नयी-नयी वस्तुओं उनकी तकनीकी विशेषताओं व उपयोगिताओं की जानकारी दी जाती है। उन्हें समकालीन आधुनिक वस्तुओं की किस्म, मूल्य, गुण व दोषों व उनके प्रयोग आदि की जानकारी मिलती है।

10. **क्रेताओं को क्रय निर्णय में मार्ग दर्शन (Guidance to Buying Decisions)**- किसी ग्राहक के लिए कौन-सा उत्पाद व उसका कौन-सा प्रतिरूप (Model) उपयुक्त रहेगा। यह निर्णय करने में भी विक्रयकर्त्ता, अपने ज्ञान व अनुभव से सहायता करता है।

विक्रयकला के आवश्यक तत्त्व
(Chief Elements of Salesmanship)

अथवा

सफल विक्रयकला के आवश्यक तत्त्व
(Essential of Successful Salesmanship)

विक्रयकला में सफलता पाने के लिए विक्रेताओं में कुछ योग्यताओं तथा तत्वों का होना आवश्यक है। ये तत्त्व निम्न हैं :

1. **विक्रयकर्त्ता का प्रभावी व्यक्तित्व (Effective Personality of Salesman)**- विक्रयकर्त्ता की सफलता के लिए सबसे प्रमुख तत्त्व विक्रयकर्त्ता का प्रभावी व्यक्तिव होना है। अपने व्यक्तिगत गुणों के आधार पर वे ग्राहक के साथ बातचीत करते समय उसे प्रभावित करते हैं। उसके शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, नैतिक एवं व्यावसायिक गुण जितने उत्कृष्ट होते हैं, उतना ही वह ग्राहक को प्रभावित कर सकेगा। जिस विक्रयकर्त्ता में जितने अधिकाधिक गुण पाये जाते हैं वह विक्रयकर्त्ता उतना ही अधिक सफल माना जाता है।
2. **संस्था के बारे में ज्ञान (Knowledge of the Institute)**- विक्रेताओं की अपनी संस्था के बारे में भी पूरा-पूरा ज्ञान होना चाहिए जिससे कि ग्राहकों द्वारा पूछताछ करने पर वह उनको सही उत्तर दे सके। इसके लिए उसको संस्था के इतिहास, अन्य वस्तुओं, सभी संयन्त्रों व शाखाओं के स्थान, उच्च प्रबन्धक के नाम एवं पते, संस्था की प्रबन्धकीय वितरण, अनुसन्धान एवं विकास नीतियाँ एवं विधियां, सामाजिक उद्देश्यों, विशेष सेवाएं एवं सुविधाओं आदि के बारे में जानकारी होनी चाहिए। इनसे वह उपक्रम की अच्छी साख स्थापित कर सकता है।
3. **वस्तुओं का विस्त त ज्ञान (Perfect Knowledge of Products)**- विक्रयकला में सफलता के लिए व्यक्तिगत गुणों के साथ-साथ वस्तुओं का विस्त त ज्ञान भी आवश्यक है जैसे प्रतियोगी वस्तुओं की विभिन्न किस्मों, रंग, रूप, डिजायन, मूल्य तकनीकी व अन्य विशेषताओं, वस्तु के उत्पादन में प्रयोग आने वाला कच्चा माल, उत्पादन का तरीका, माल की पूर्ति, वस्तु का पैकिंग आदि का ज्ञान होना चाहिये। ऐसे ज्ञान के आधार पर वह अपने ग्राहकों को तुलनात्मक लाभों एवं कमियों को बताकर प्रभावित करने में विक्रेता सफल हो सकता है।
4. **ग्राहकों की जानकारी (Knowledge of Customers)**- विक्रयकला में सफलता के लिए आवश्यक है कि विक्रयकर्त्ता को ग्राहकों व उनकी रुचियों, पसंद, नापसंद, क्रय-क्षमता, क्रय आधार सामान्य प्रकृति आदि का भी ज्ञान हो। सफलता के लिए विक्रयकर्त्ता को उनके स्वभाव को ध्यान में रखकर बात करनी चाहिए। इसी प्रकार क्रेता के उद्देश्यों का भी एक विक्रयकर्त्ता द्वारा ध्यान में रखकर उनके अनुरूप वस्तु दिखानी व वार्ता करनी चाहिए। इस प्रकार ग्राहकों के स्वभाव एवं क्रय उद्देश्यों आदि का ज्ञान होने से उनके साथ उचित रूप से व्यवहार कर विक्रय में सफलता अर्जित की जा सकती है।
5. **विक्रय प्रक्रिया की जानकारी व उसमें दक्षता (Knowledge of the Selling Process & Profeciency in it)**- विक्रयकला में सफलता के लिए विक्रय विधि का भी ज्ञान होना चाहिए। विक्रयकला के विविध प्रकारों के अन्तर्गत भिन्न-भिन्न विक्रय प्रक्रिया अपनायी जाती है। विक्रेता को इस प्रक्रिया की जानकारी होनी चाहिए तभी वह दक्षता व प्रभावशीलता से कार्य कर सकेगा।

(अ) स्थायी काउन्टर विक्रयकर्त्ता द्वारा अपनायी जाने वाली प्रक्रिया के निम्नलिखित चार चरण होते हैं :

1. ध्यानाकर्षण एवं आगन्तुक क्रेता का स्वागत।

2. उनके व्यक्तित्व की पहचान।
3. विक्रयवार्ता के अन्तर्गत निम्न को ध्यान से रखें :
   (i) क्रेता की आवश्यकताओं व समस्याओं को जानना,
   (ii) उसकी आवश्यकता रूचि, पसन्द एवं क्रय क्षमता के अनुरूप वस्तुओं को दिखाना,
   (iii) उचित मार्ग दर्शन व चयन निर्णय में सहयोग,
   (iv) विश्वास उत्पन्न करना एवं
   (v) वार्ता समापन व आदेश प्राप्ति, वस्तु, प्रत्यावर्तन, भुगतान प्राप्ति इत्यादि।

(ब) भ्रमणशील विक्रयकर्त्ता द्वारा अपनायी जाने वाली प्रक्रिया के पांच चरण होते हैं :

1. भावी क्रेताओं का पता लगाना,
2. उनकी सम्भावित आवश्यकताओं का अनुमान लगाना,
3. मिलने का समय निश्चित करना,
4. मिलने हेतु नियुक्त समय पर उनसे मिलना,
5. विक्रय सम्बन्धी बातचीत करना। : इनमें निम्न बातों का ध्यान रखें।
   (i) क्रेता की आवश्यकताओं/समस्याओं की जानकारी लेना;
   (ii) उसकी आवश्यकता, रुचि, पसन्द एवं क्रय क्षमता का पता लगाना;
   (iii) वस्तुओं का प्रदर्शन करना;
   (iv) उचित मार्ग दर्शन व चयन निर्णय में सहयोग करना;
   (v) विश्वास उत्पन्न करना,
   (vi) वार्ता समापन व आदेश प्राप्ति वस्तु प्रत्यावर्तन, भुगतान प्राप्ति इत्यादि।
6. आत्मीयता के साथ ग्राहक से विदा लेना।

विक्रयकला एवं विज्ञापन

(Salesmanship and Advertising)

विज्ञापन एवं विक्रयकला दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। विज्ञापन से क्रेता को काफी जानकारी अग्रिम मिल जाती है। जिससे विक्रयकर्त्ता उसे आसानी से प्रभावित कर लेता है। विज्ञापन का लाभ भी विक्रय से ही प्राप्त होता है। यदि कोई व्यापारी खूब विज्ञापन करके अच्छी ख्याति बना लेता है तो भी बिना निपुण विक्रयकला के बिक्री नहीं बढ़ाई जा सकती है। चाहे जितना विज्ञापन कर लिया जाये, लेकिन यदि विक्रयकर्त्ता का व्यवहार क्रेता के साथ अच्छा नहीं होता या वह उसे प्रभावित नहीं कर सकता, तो विक्रय में सफलता नहीं मिल सकती। जबकि विक्रयकला और विज्ञापन दोनों ही का लक्ष्य विक्रय व द्धि है। विक्रयकला विक्रय हेतु वस्तु/सेवा का वैयक्तिक प्रस्तुतिकरण है जबकि विज्ञापन, अवैयक्तिक प्रस्तुतीकरण है।

वस्तुतः जहाँ विज्ञापन की भूमिका समाप्त होती है, वहीं से विक्रयकला की भूमिका आरम्भ होती है। विक्रयकला का कार्य विक्रय करना है जबकि विज्ञापन का कार्य ग्राहक को वस्तु के बारे में सूचना देकर आकर्षित करना है। इस प्रकार विज्ञापन एवं विक्रयकला एक-दूसरे के सहयोगी या पूरक हैं। विज्ञापन से क्रेता के मन में जो आकर्षण उत्पन्न होता है उसे विक्रयकला द्वारा विक्रय में बदला जाता है।

विक्रयकला एवं विज्ञापन में अन्तर

(Distinction Between Salesmanship and Advertising)

	अन्तर का आधार (Basis of Difference)	विक्रयकला (Salesmanship)	विज्ञापन (Advertisement)
1.	उद्देश्य	विक्रयकला का उद्देश्य ग्राहकों की रूचि एवं इच्छा के अनुरूप विक्रय करना है।	विज्ञापन का उद्देश्य वस्तुओं की सूचना देना व उन्हें अपनी ओर आकर्षित करना है।
2.	कार्य	विक्रयकला का कार्य दुकान पर आये ग्राहकों या ग्राहकों के कार्यालय या निवास पर जाकर व्यक्तिगत रूप से वस्तुओं/सेवाओं का विक्रय करना है।	विज्ञापन का कार्य जन-सामान्य को आकर्षित कर उन्हें क्रय प्रेरणा देकर विक्रय के लिए आधार तैयार करना है।
3.	व्यक्तिगत सम्पर्क	विक्रयकला में ग्राहक के साथ व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करना आवश्यक है।	विज्ञापन में ग्राहक से व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित नहीं किया जा सकता है।
4.	लक्षित समूह	विक्रयकला में एक साथ कई ग्राहकों से बातचीत नहीं की जा सकती है।	विज्ञापन में एक साथ बहुत से ग्राहकों को वस्तु क्रय का संदेश दिया जाता है।
5.	विषय सामग्री	विक्रयकला में विक्रयवार्ता द्वारा ग्राहक विशेष की आवश्यकतानुसार वस्तु की श्रेष्ठता एवं उपयोगिता पर प्रकाश डाला जाता है।	विज्ञापन में किसी खास क्रेता को ध्यान नहीं रखकर वस्तु के सभी प्रमुख गुणों एवं उपयोगिता पर बल दिया जाता है।
6.	प्रभाव	विक्रयकला विज्ञापन द्वारा आकर्षित व्यक्ति को वस्तु क्रय करने के लिए प्रेरणा प्रदान करती है।	विज्ञापन की सहायता से ग्राहकों को सन्देश सम्प्रेषित किये जाते हैं।
7.	माध्यम	यह मौखिक होती है।	यह लिखित, मुद्रित, श्रव्य अथवा चित्रित होता है।

विक्रय-कला कला अथवा विज्ञान

(Salesmanship-an Art or Science)

विक्रयकला कला है अथवा विज्ञान, इस सम्बन्ध में विद्वान एकमत नहीं हैं। कुछ विद्वान इसको कला मानते हैं जबकि कुछ विज्ञान।

क्या विक्रय कला एक कला है ? (Is Salesmanship an Art?) -

''कला'' से अर्थ वैयक्तिक कौशल से किये जाने वाले कार्य से है। **टैरी** के शब्दों में, *''चातुर्य के प्रयोग से इच्छित परिणाम प्राप्त करना ही कला है।''*

इस द ष्टि से विक्रयकला भी एक कला है। इसको भी व्यक्तिगत योग्यता, कौशल, परिश्रम एवं लगन से सम्पादित किया जाता है।

विक्रयकला को कला मानने के और भी कारण हैं- (1) विक्रयकला पूर्णतः हस्तान्तरणीय नहीं है। (2) इसके सम्बन्ध में आज तक त्रुटिरहित नियमों का निर्माण नहीं हुआ है। (3) इनका निष्पादन व्यक्तिगत कौशल पर भी निर्भर करता है।

विक्रयकला विज्ञान के रूप में (Salesmanship as a Science)

कुछ विद्वानों का कहना है कि विक्रयकला एक विज्ञान है। इस सम्बन्ध में कुछ कहने से पहले हमें विज्ञान का अर्थ समझना होगा। किसी विषय-वस्तु के बारे में सुनिश्चित सिद्धान्तों से युक्त व्यवस्थित ज्ञान के भण्डार को ही विज्ञान कहते हैं। यह व्यवस्थित ज्ञान प्रयोगों एवं निरीक्षणों द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। यह कारण (Cause) तथा परिणामों (Effects) के बीच सम्बन्ध स्थापित करता है। विक्रयकला का अध्ययन करने पर ज्ञात होगा कि इसमें कोई भी ऐसा नियम नहीं है जिसकी तुलना विज्ञान के किसी सर्वशुद्ध नियम से की जा सके। अतएव विक्रयकला को विशुद्ध विज्ञान तथा भौतिक शास्त्र अथवा रसायन शास्त्र की श्रेणी में तो सम्मिलित नहीं किया जा सकता। विक्रयकला के सिद्धान्त भी ग्राहकों के मनोविज्ञान व आर्थिक व्यवहारों से सम्बन्धित हैं। मनोविज्ञान, आर्थिक व सामाजिक सिद्धान्तों पर आधारित होने से और इसमें भी कारण का सिद्धान्त लागू होने से विक्रयकला को सामाजिक विज्ञान (Social Sciences) जेसे समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र आदि की श्रेणी में सम्मिलित किया जा सकता है।

निष्कर्ष (Conclusion)- विक्रयकला 'कला' तथा 'विज्ञान' दोनों ही है—उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि विक्रयकला 'कला' भी है तथा 'विज्ञान' भी। इसके वैज्ञानिक तथा कलात्मक रूप को विभक्त करना सम्भव नहीं है। यह अंशतः अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र व मनोविज्ञान आदि समाजिक विज्ञानों पर आधारित है पर इन सामाजिक विज्ञानों के सिद्धान्तों को प्रभावी ढंग से व्यवहार में प्रयुक्त करने में व्यक्तिगत कौशल की भी आवश्यकता होती है। इसलिये यह अंशतः विज्ञान व अंशतः कला है।

विक्रयकला की सीमाएँ
(Limitations of Salesmanship)

विक्रयकला विक्रय व द्धि के लिये परम आवश्यक है फिर भी इसकी कुछ निम्नलिखित सीमायें हैं :

1. **वस्तु की खराब किस्म (Bad Quality opf Product)**- वस्तु की किस्म खराब है तो विक्रयकला भी अल्प प्रभावी रहेगी। ऐसी दशा में प्रारम्भ में चाहे वस्तुयें बेची जा सकती हों, लेकिन दीर्घकाल में उस वस्तु का विक्रय सम्भव नहीं है। इस प्रकार वस्तु की खराब किस्म विक्रय कला की सीमा को बांध देती है।
2. **वस्तु का अभाव (Scarcity of Goods)**- यदि बाजार में वस्तु की माँग अधिक है तथा पूर्ति कम है तो वस्तु स्वयं ही बिक जायेगी जिसमें विक्रयकला का कोई महत्त्व नहीं होगा।
3. **उच्च मूल्य (High Price)**- यदि वस्तु का मूल्य क्रेता की क्रय क्षमता से बाहर है तो विक्रय कला भी वस्तु के लिए मांग उत्पन्न नहीं कर सकती।
4. **एकाधिकार (Monopoly)**- यदि बाजार में किसी वस्तु का एक ही उत्पादक व विक्रेता है तो उसका बाजार पर एकाधिकार हो जाता है ऐसी स्थिति में बिना विक्रयकला के ही वस्तु बिक जायेगी।
5. **व्ययशीलता (Expensive)**- क्रेताओं की संख्या अधिक होने पर वैयक्तिक विक्रय बहुत खर्चीला साबित होता है।
6. कुशल विक्रयकर्त्ताओं की कमी।
7. **असंख्य क्रेताओं से सम्पर्क में कठिनाई**— विक्रयकला क्रेता तथा ग्राहक की व्यक्तिगत भेंट पर आधारित है। यदि क्रेताओं की संख्या बहुत अधिक और व्यापक है तो विक्रेता को सभी के पास नहीं भेजा जा सकता।

8. आन्दोलनात्मक कार्यवाहियों की दशा में मानवीय सम्बन्धों के प्रबन्ध की समस्या भी विक्रय कला को प्रभावहीन करती है।

विक्रयकला एवं मनोविज्ञान

(Salesmanship and Psychology)

विक्रयकला एवं मनोविज्ञान एक-दूसरे से सम्बन्धित हैं। एक सफल विक्रयकर्त्ता को उपभोक्ता की जानकारी आवश्यक है। विक्रयकर्त्ता क्रेता की मनोव ति क्रय प्रेरणाओं व क्रय आधारों को ध्यान में रखकर ही कार्य करता है। यद्यपि मनोव त्ति का पता लगाना कठिन है लेकिन फिर भी क्रेता की पोशाक, बातचीत के ढंग एवं उसके द्वारा मांगी गयी किस्त चेहरे के भाव, उसकी प्रतिक्रियाओं आदि से उसकी मनोव त्ति का पता लगाया जा सकता है।

उपयोगी प्रश्न

(Useful Questions)

1. विक्रयकला से क्या आशय है? इसके महत्त्व को बताइए।
   What is salesmanship? What are its characteristics? Explain.
2. विक्रय कला की परिभाषा दीजिए और इसके क्षेत्रों व उद्देश्यों का उल्लेख कीजिए।
   Define Salesmanship and describe its scope and objectives.
3. विज्ञापन तथा विक्रयकला में अन्तर कीजिये तथा समझाइये कि ये दोनों किस प्रकार से एक-दूसरे के पूरक हैं।
   Distinguish between Advertising and salesmanship and explain how they are complementary to each other.
4. विक्रयकर्त्ता किसे कहते हैं? इसकी विशेषताएँ कौन-कौन सी हैं? बताइए।
   What is salesmanship? What are its characteristics? Explain
5. विक्रयकला के सिद्धान्तों का वर्णन कीजिए। विक्रयकला एवं मनोविज्ञान किस प्रकार एक-दूसरे से सम्बन्धित हैं? बताइए।
   Describe the principles of salesmanship. How are salesmanship and psychology related to one another? Explain
6. क्या विक्रयकला कला है अथवा विज्ञान? विवेचना कीजिए।
   Is salesmanship an art or science? Discuss.
7. निम्न में से किन्हीं दो को समझाइये :
   Explain any two of the following :
   (i) स जनात्मक विक्रयकला
   (Creative Salesmanship)
   (ii) प्रतिस्पर्द्धात्मक विक्रयकला
   (Competitive Salesmanship)
   (iii) पेशेवर विक्रयकला
   (Professional salesmanship)
   (iv) विक्रयकला की सीमाएँ
   (Limitation of Salesmanship) !

अध्याय - 14
वैयक्तिक विक्रय – अर्थ एवं स्वभाव
(Personal Selling — Meaning & Nature)

वैयक्तिक विक्रय विक्रयकला से विस्त त अवधारणा है। यह विपणन के अन्य तत्त्वों जैसे मूल्य निर्धारण, विज्ञापन, उत्पाद विकास तथा अनुसन्धान तथा वस्तुओं के भौतिक वितरण को लागू करने का एक साधन है। विक्रय कला वैयक्तिक विक्रय का एक पहलू है। यह वैयक्तिक विक्रय में प्रयोग की जाने वाली कला कौशल है। **स्टिल एवं कंडिफ** के अनुसार, "व्यक्तिगत विक्रय में प्रयोग की जाने वाली विभिन्न निपुणताओं में से विक्रयकला एक निपुणता है जिसे ग्राहक की व्यक्तिगत सेवा के लिए प्रयोग किया जाता है।" वस्तुतः विक्रयकला विक्रयकर्त्ता एवं ग्राहक के मध्य एक व्यक्तिगत सम्बन्ध स्थापित करता है। व्यक्तिगत विक्रय समस्त विपणन कार्यक्रम को संचालित करने में एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। विक्रय के अन्य तरीकों में से सर्वाधिक प्रभावशाली तरीका वैयक्तिक विक्रय है क्योंकि इसके अन्तर्गत समस्त प्रयत्न वास्तविक क्रेता तथा भावी क्रेता पर केन्द्रित किए जाते हैं। वैयक्तिक विक्रय में क्रेता-विक्रेता आमने-सामने होते हैं तथा वस्तु का प्रत्यक्ष प्रदर्शन किया जाता है। परिणामस्वरूप क्रेता अपनी शंकाओं तथा समस्याओं का समाधान प्रत्यक्ष रूप से विक्रेता से कर सकता है। इससे वस्तु की बिक्री अधिक होती है। इसी प्रकार क्रेताओं की रूचि, फैशन, आवश्यकताओं आदि की जानकारी संस्था के संबन्धित अधिकारियों को देता है। इसमें विक्रय नये तथा पुराने दोनों प्रकार के ग्राहकों को दिया जाता है।

इस प्रकार की विक्रय पद्धति में वस्तु के निर्माता द्वारा विक्रयकर्त्ताओं की नियुक्ति की जाती है। ये विक्रयकर्त्ता समय-समय पर सम्भावित ग्राहकों से सम्पर्क स्थापित करते हैं और उनको ग्राहक बना लेते हैं। यदि वस्तु छोटी है या उपभोग योग्य वस्तु है तो विक्रयकर्त्ता उसको अपने साथ एक गाड़ी में उचित प्रकार से रखकर सम्भावित ग्राहकों के यहाँ जाकर रूकता है, माल बेचता है और तुरन्त भुगतान ले लेता है। **इस प्रणाली को घर-घर में विक्रय** भी कहते हैं।

वैयक्तिक विक्रय
(Features of Characteristics of Personal Selling)

1. **व्यक्तिगत संबंध** - इस विधि की यह विशेषता है कि इसमें विक्रयकर्ता तथा ग्राहक के मध्य सीधा संबंध स्थापित होता है। इसमें वस्तु का प्रत्यक्ष प्रदर्शन करके क्रेता की शंकाओं का तुरंत समाधान संभव होता है।
2. **समस्त प्रयत्न वास्तविक तथा भावी क्रेता पर केंद्रित** - वैयक्तिक विक्रय का केंद्र बिन्दु वास्तविक तथा भावी क्रेता होता है। इस विधि में आमने-सामने होकर विक्रेता क्रेता की आवश्यकता, रूचि, व्यवहार आदि का अध्ययन करके उसे क्रय के लिए प्रेरित करता है। विक्रेता अपने विक्रय प्रयत्नों को इस प्रकार करता है कि क्रेता अपनी शंकाओं का समाधान करके तुरन्त क्रय के लिए तैयार हो जाए या भावी क्रय के लिए उत्प्रेरित हो जाये।
3. **संस्था की नीतियों तथा वस्तुओं के गुणों की जानकारी** - इस विक्रय के अर्न्तगत विक्रेता केवल क्रेताओं की

रूचि, फैशन, आवश्यकता आदि की जानकारी ही नहीं लेता है वरन् क्रेताओं को अपने उपक्रम की नीतियों तथा वस्तुओं की जानकारी भी देता है।

4. **शंकाओं का समाधान –** इस विधि में क्रेता तथा विक्रेताओं के आमने-सामने होने से वस्तुओं का प्रत्यक्ष प्रदर्शन संभव होता है। परिणामस्वरूप क्रेता अपनी शंकाओं तथा समस्याओं का समाधान प्रत्यक्ष रूप से कर सकता है। इससे वस्तु की बिक्री अधिक संभव होती है।

5. **अधिक प्रभावशाली –** विक्रय के अनेक तरीकों में से यह सबसे अधिक प्रभावशाली तरीका है क्योंकि इसके अर्न्तगत क्रेताओं का शंका समाधान तुरंत हो जाता है।

6. **लोचदार विक्रय व्यवस्था –** यह विधि विक्रय व्यवस्था की बहुत अधिक लोचपूर्ण व्यवस्था है। इसमें विक्रेता क्रेता की आवश्यकताओं, उनके व्यवहारों तथा परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन कर सकता है।

7. **संचार व्यवस्था के अवरोध नहीं –** इस विधि में विक्रेता तथा क्रेता आमने-सामने होकर संवाद करते है। अतः कोई संचार व्यवस्था का अवरोध विक्रय के मामले में आड़े नहीं आता।

8. **लाभों में व द्धि से विस्तार सम्भावनाएं –** वैयक्तिक विक्रय से अधिक विक्रय संभव होता है जिसके परिणामस्वरूप लाभों में अभिव द्धि होने से व्यवसाय के विस्तार की संभावनाएं बढ़ती हैं।

9. **ग्राहकों की सेवा –** इस विधि में क्योंकि विक्रेता घर-घर जाकर क्रेता से संर्पक करता है इससे ग्राहकों की सेवा संभव होती है उन्हें विक्रेताओं से उचित मार्ग-दर्शन तथा क्रय निर्णयों के करने में सहायता प्राप्त होती है।

विक्रय कला तथा वैयक्तिक विक्रय में अन्तर

(Difference Between Salesmanship & Personal Selling)

क्र. स.	विक्रय कला (Salesmanship)	वैयक्तिक विक्रय (Personal Selling
1.	विक्रयकला का क्षेत्र वैयक्तिक विक्रय से संकुचित है।	वैयक्तिक विक्रय का क्षेत्र विक्रयकला से अधिक व्यापक एवं विस्त त है।
2.	विक्रयकला वैयक्तिक विक्रय का एक पहलू है।	वैयक्तिक विक्रय विपणन तत्त्वों सहित प्रयोग किया जाता है। अर्थात् वैयक्तिक विक्रय के अनेक पहलुओं में से विक्रय कला एक पहलू है।
3.	विक्रयकला वैयक्तिक विक्रय में प्रयोग होने वाले अनेक कला कौशलों में से एक कौशल है।	वैयक्तिक विक्रय में अनेक कला कौशलों का प्रयोग होता है।
4.	विक्रयकला में ग्राहक को केवल क्रय के लिए उत्प्रेरित किया जाता है।	वैयक्तिक विक्रय में ग्राहकों को वस्तुओं के गुण बताकर, सुझावात्मक विक्रय संभव बनाया जाता है।
5.	विक्रयकला में सेवा की तुलना में लाभ को अधिक महत्त्व दिया जाता है।	वैयक्तिक विक्रय में लाभ के साथ-साथ ग्राहक की सेवा का तत्त्व भी उतना ही महत्त्वपूर्ण होता है।

6. विक्रयकला में विक्रय की प्रधानता होती है।	वैयक्तिक विक्रय में वस्तु के गुण दोषों के आधार पर क्रेता को प्राप्त होने वाले लाभ विक्रय की तुलना में प्रधान होते हैं।
7. विक्रयकला में लोचशीलता का तत्त्व वैयक्तिक विक्रय की तुलना में कम होता है।	वैयक्तिक विक्रय में विक्रयकला की तुलना में अधिक लोचशीलता पाई जाती है।
8. विक्रयकला में सैद्धान्तिक बातों को अधिक ध्यान में रखा जाता है।	वैयक्तिक विक्रय में सैद्धान्तिक तथा क्रियात्मक दोनों पहलुओं को ध्यान में रखा जाना आवश्यक है।
9. विक्रयकला में विक्रेता का केन्द्र बिन्दु उपस्थित क्रेता होता है।	वैयक्तिक विक्रय का केन्द्र बिन्दु केवल उपस्थित क्रेता न होकर भावी क्रेता भी होता है।

विक्रय प्रक्रिया
(Selling Process)

प्रायः वस्तुओं के विक्रय के लिए सभी विक्रयकर्ताओं द्वारा एक ही रास्ता अपनाया है; जैसे भावी ग्राहकों का पता लगाना व उनके बारे में जानकारी प्राप्त करना, फिर उनसे सम्पर्क स्थापित करना व वस्तु को उनके समक्ष करना, वस्तु की अच्छाइयों को बताना और यदि ग्राहकों द्वारा आपत्तियाँ उठाई जाती हैं तो उनका समाधान कर विक्रय करना। यदि वस्तु का विक्रय करना उस समय सम्भव न हो तो बाद में उसका अनुगमन करना। यह सभी विक्रय प्रक्रिया की अवस्थाएँ हैं। यह अवस्थाएँ एक-दूसरे में अन्तर्व्याप्त हैं तथा इनको अलग पहचानना कठिन है। साथ ही विक्रय प्रक्रिया की कितनी अवस्थाएँ होती हैं इस सम्बंध में विद्वान एक मत नहीं हैं।

आज के युग में ग्राहकों को राजा माना जाता है। इस युग में वस्तुएँ स्वतः नहीं बिकती हैं बल्कि उनको बेचने के लिए एक तरीका अपनाया जाता है इस तरीके को ही विक्रय प्रक्रिया कहा जाता है।

विक्रय प्रक्रिया (Sales Process)

प्रथम कदम	ध्यान आकर्षित करना	→	विक्रय से पूर्व की तैयारी
द्वितीय कदम	रुचि जाग त करना	→	ग्राहक का स्वागत, विक्रय प्रारम्भ व विक्रय वार्तालाप
त तीय कदम	इच्छा से प्रेरित करना	→	वस्तु की प्रस्तुति, प्रदर्शन व क्रय प्रेरणाएँ
चतुर्थ कदम	विश्वास दिलाना	→	ग्राहक की आपत्तियाँ एवं शिकायतों का निवारण
पाँचवां कदम	समापन (विक्रय)		

विक्रय प्रक्रिया की भिन्न-भिन्न अवस्थाएँ (Elements of Sales Process & Sales Procedure) :

1. **एडविन चार्ल्स ग्रीफ (Edwin Charles Grief)** ने अपनी पुस्तक "Modern Salesmanship : Principles and Problems" में निम्नलिखित पाँच अवस्थाएँ बतलायी हैं -
   1. **ध्यानाकर्षण** (Attention)
   2. **रूचि उत्पन्न करना** (Creating Interest)

3. **इच्छा उत्पन्न करना** (Creating Desire)
4. **विश्वास** (Conviction)
5. **समापन** (Close)

2. **हरबर्ट एन. केसन (Herbert N. Cassan)** ने अपनी पुस्तक "Up-to date Salesmanship" में 6 अवस्थाएँ बतलाई हैं। इन अवस्थाओं को बतलाने वाला फार्मूला "RIDSAC" के नाम से जाना जाता है :

(R) = Reception (स्वागत करना),
(I) = Inquiry (पूछताछ करना),
(D) = Demonstration (प्रर्दशन करना),
(S) = Selection (चुनाव करना),
(A) = Addition (संवर्द्धन),
(C) = Commendation (प्रशंसा एवं विदाई)

3. **चार्ल्स एटकिन्सन किर्क पैट्रिक (Charles Atkinson Kirkpatrick)** के अनुसार :
   1. ग्राहक की पहचान (Know your Customer)
   2. वस्तु की पहचान (Know what you sell)
   3. बिक्री की योजना बनाना (Plan how you will sell)
   4. सूची बनाना (Setup a Schedule)
   6. योजना से कार्य करना (Work by Plan)

उपरोक्त विद्वानों द्वारा बताए गए विभिन्न विक्रय प्रक्रिया के तत्वों के आधार पर एक सर्वमान्य प्रक्रिया का निर्माण निम्न तत्वों से होता है :

1. ध्यानाकर्षण (Attention)
2. स्वागत करना (To welcome)
3. अभिरूचि पैदा करना (To arouse interest)
4. खरीदने के लिए प्रेरित करना (Inducing to Purchase)
5. विश्वास जगाना (To Convince)
6. क्रय इच्छा जाग त करना (To create will to Purchase)
7. बिक्री सम्पन्न करना (Closing the Sale)
8. अन्तिम अभिवादन करना (Last Salutation)

उपरोक्त का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :

1. **ध्यानाकर्षण** – जब तक ग्राहक विक्रेता की दुकान के अंदर ना जाए, तब तक विक्रय का प्रश्न ही नहीं उठता। अतः विक्रयकर्ता का सबसे पहला प्रयास ग्राहक के ध्यान को आकर्षित करना है। ग्राहक का ध्यान आकर्षित करने के लिए विक्रयकर्ता को अपने व्यापार-ग ह की बाहरी और आन्तरिक सजावट, रख-रखाव इत्यादि को आकर्षक एवं कलात्मक बनाना होगा।
2. **स्वागत करता** – जैसे ही कोई ग्राहक दुकान में प्रवेश करे, मधुर शब्दों से उसका स्वागत किया जाना चाहिए।

ग्राहक दुकानदार के लिए अतिथि है। अतः उसका पूरा अतिथि के साद श स्वागत होना चाहिए। स्वागत के ये शब्द इस प्रकार हो सकते हैं- आइये बहिन जी, माता जी, भाई साहब, सर। इन शब्दों के बाद पुनः आदरपूर्वक पूछना चाहिए-" मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ ? कौन-सी या किस प्रकार की वस्तु आप लेना पसन्द करेंगे?" इत्यादि शब्दों से ग्राहक के साथ बिक्री के लिए वार्तालाप प्रारम्भ करना चाहिए।

3. **अभिरूचि पैदा करना** – ग्राहकों का ध्यान आकर्षित कर लेना एवं उनका स्वागत कर लेना ही पर्याप्त नहीं है वरन् सम्भावित ग्राहक की वस्तुओं की अभिरूचि पैदा करना भी जरूरी है। प्रायः क्रेता के मन में पहले से ही किसी विशेष वस्तु को क्रय करने की इच्छा होती है परंतु विशेष परिस्थितियों में उसकी रूचि अवरूद्ध हो जाती है। ऐसी परिस्थिति में विक्रयकर्ता ग्राहक की मनः स्थिति को देखकर अपने चातुर्य से ग्राहक के मन में किसी विशेष वस्तु के बारे में अभिरूचि पैदा करता है।

4. **खरीदने के लिए प्रेरित करना** – ग्राहक में किसी वस्तु के प्रति रूचि उत्पन्न हो जाने के बाद ग्राहक को वस्तु खरीदने के लिए प्रेरित किया जाता है। इस कार्य को करने के लिए उसे भिन्न-भिन्न प्रलोभन दिये जाते हैं, जैसे-मुफत उपहार देना, विशेष छूट देना, बोनस देना इत्यादि। इस प्रकार की योजनाओं को जानकर ग्राहक वस्तु खरीदने के लिए तत्पर हो जाता है।

5. **विश्वास जगाना** – ग्राहक जब वस्तु खरीदने के लिए लालायित हो जाता है, तब उसे विक्रय के लिए प्रेरित किया जाता है। ग्राहक जब वस्तु के गुणों, मूल्य इत्यादि के बारे में सन्तुष्ट हो जाता है, तभी वह उस वस्तु को खरीदना चाहता है। ग्राहक के मन में विश्वास जगाना विक्रय के लिए नितान्त आवश्यक है। बिना विश्वास जागे ग्राहक भी वस्तु लेने के लिए आतुर नहीं होगा।

6. **क्रय-इच्छा जाग त करना** – जब ग्राहक पूर्ण रूप से सन्तुष्ट हो जाता है, तभी वह वस्तु को खरीदने की इच्छा प्रकट करता है। **हरबर्ट कैसन** महोदय ने ठीक ही कहा है कि वस्तु के सम्पूर्ण गुणों से परिचित होने पर उसका मूल्य नगण्य हो जाता है क्योंकि वस्तु अपने गुणों पर बिकती है, न कि अपने मूल्य पर।

7. **ब्रिक्री सम्पन्न करना** – विक्रय-कला की अन्तिम सीढ़ी बिक्री सम्पन्न करना है। जब तक बिक्री सम्पन्न नहीं हो जाती, तब तक ग्राहक की मनःस्थिति के अनुसार कार्य करते रहना चाहिए क्योंकि कभी-कभी ऐसा हो जाता है कि ग्राहक वस्तु खरीदते-खरीदते या मूल्य का भुगतान करते-करते रूक जाता है और बिना क्रय किये ही वापस चला जाता है। ऐसा इसलिए हो जाता है कि ग्राहक विक्रेता के आचरण, मूल्य एवं वस्तु के गुणों से संतुष्ट नहीं हो पाता है। अतः विक्रय सम्पन्न करने में विक्रयकर्ता को तत्परता से कार्य करना होता है।

8. **अन्तिम अभिवादन** – वस्तु का विक्रय सम्पन्न हो जाने के बाद ग्राहक को हर द ष्टिकोंण से संतुष्ट करके पूर्ण सम्मान के साथ विदा कर देना चाहिए। विदा करते समय आदरसूचक शब्दों का प्रयोग करना चाहिए, जैसे-सेवा का अवसर देना। विक्रेता को यह नहीं भूलना चाहिए कि सन्तुष्ट ग्राहक चलता फिरता विज्ञापन होता है।

वैयक्तिक विक्रय के लाभ (Advantages of Personal Selling) :

वैयक्तिक विक्रय के मुख्य लाभ निम्नलिखित हैं :

1. भावी ग्राहकों का पता लगाया जा सकता है।
2. क्रेताओं की शंकाओं का समाधान उचित रूप से किया जा सकता है।
3. ग्राहक के समक्ष वस्तु का प्रत्यक्ष प्रदर्शन किया जाता है और वस्तु प्रयोग का उचित अवसर प्रदान किया जाता है जो वस्तु विक्रय की संभावनाएँ बढ़ाता है।

4. वैयक्तिक विक्रय, क्रेता एवम् विक्रेता के मध्य समय सांमजस्य स्थापित करता है।
5. वैयक्तिक विक्रय, क्रेता एवम् उत्पादक के मध्य संचार माध्यम का कार्य करता है।
6. वैयक्तिक विक्रय द्वारा गैर-विक्रय कार्य जैसे बाजार अनुसंधान, आंकड़ों का एकीकरण एवम् ग्राहकों की शिकायतों का निवारण आदि भी संभव है।

वैयक्तिक विक्रय की हानियाँ या सीमाएँ (Disadvantages & Limitations of Personal Selling) :

1. इस विधि का सबसे बड़ा दोष यह है कि यह विधि बहुत खर्चीली है। यह वस्तु की विक्रय लागत को बहुत अधिक बढ़ा देती है।
2. इस विधि को सफल बनाने के लिए कुशल एवम् अनुभवी विक्रयकर्त्ताओं की बहुत आवश्यकता होती है। ऐसे प्रशिक्षित विक्रयकर्त्ताओं की कमी बहुत बड़ी समस्या है।
3. इस विधि में विक्रयकर्त्ता क्रेता के पास उस समय उपस्थित नहीं हो पाता जब वह वस्तु क्रय सम्बन्धी वास्तविक निर्णय लेता है।

वैयक्तिक विक्रय का स्वभाव अथवा कार्य

(Nature & Function of Personal Selling)

1. **बिक्री करना –** वैयक्तिक विक्रय का यह मुख्य कार्य है जिसको एक विक्रयकर्ता को करना पड़ता है। विक्रय नये व पुराने दोनों प्रकार के ग्राहकों को किया जाता है। नये ग्राहकों के आदेश नये आदेश व पुराने ग्राहकों के आदेश पुनः आदेश कहलाते हैं।
2. **ग्राहकों की सेवा करना –** वैयक्तिक विक्रय का दूसरा कार्य ग्राहकों की सेवा करना है। इसके लिए वह प्रर्दशन करता है व ग्राहकों को उचित सलाह देता है।
3. **बिक्री का रिकार्ड रखना** - यह बिक्री का रिकार्ड रखता है अर्थात् बिक्री किसको व किस मात्रा में व कब की गयी है इसका लेखा रखता है। यदि वह विक्रयकर्त्ता यात्री विक्रयकर्त्ता है तो इसको अपनी रिपोर्ट भी विक्रय कार्यालय को भेजनी पड़ती है। इस रिपोर्ट में बहुत-सी बातें होती हैं।
4. **प्रशासनिक कार्य** - इसको अपने अल्पकालिक व दीर्घकालिक प्रोग्राम बनाने पड़ते हैं। यह अपने नये साथी विक्रयकर्त्ताओं को अपने साथ प्रशिक्षण देता है। यह बाजार परिस्थिति का अध्ययन कर प्रबन्ध को अपने सुझाव देता है।
5. **अपनी एवं संस्था की ख्याति में वद्धि करना** - विक्रयकर्त्ता अन्य बहुत-से कार्य और करता है जिनसे उसकी व संस्था की ख्याति बढ़ती है; जैसे, फुटकर विक्रेताओं की माल को प्रदर्शित करने में सहायता करना उनकी लगातार सेवा करते रहना, आदि।

वैयक्तिक विक्रयकर्त्ता के प्रकार

(Types of Salesman in Personal Selling)

1. **आदेश प्राप्त करने वाले विक्रयकर्त्ता** - एक विक्रयकर्त्ता को अपने ऊपर पूर्ण विश्वास होना चाहिए। वह ईमानदार, परिश्रमी, प्रभावी व्यक्तित्व एवं साहसी, चतुर तथा नम्र होना चाहिए। ऐसे विक्रयकर्त्ता संभावित क्रेताओं का पता लगाकर अपनी विक्रयकला से प्रभावित करके वस्तुओं का आदेश प्राप्त करने में सफल होते हैं। इस प्रकार के विक्रयकर्त्ता तीन प्रकार के होते हैं -

(i) **निर्माता के लिए आदेश प्राप्तकर्त्ता** - इनका प्रमुख कार्य औद्योगिक तथा कच्चे माल की खरीद करने वाली संस्थाओं से सम्पर्क करके अपने निर्माताओं के लिए भारी आदेश प्राप्त करना है।

(ii) **थोक विक्रेताओं के लिए आदेश प्राप्तकर्त्ता** - इस प्रकार के विक्रयकर्त्ता अपने थोक व्यापारियों के लिए घूम-घूमकर फुटकर विक्रेताओं से आदेश प्राप्त करते हैं।

(iii) **फुटकर विक्रेताओं के लिए आदेश प्राप्तकर्त्ता** - ये विक्रयकर्त्ता अपने फुटकर विक्रेताओं के लिए क्रेताओं के घर-घर घूम कर उपभोक्ताओं को समझाकर अपने फुटकर विक्रेताओं के लिए आदेश प्राप्त करते हैं।

2. **आदेश लेने वाले विक्रयकर्त्ता** - जब किसी वस्तु की मांग विज्ञापन, विक्रय प्रवर्तन या अन्य किसी प्रकार से बन गई है तो उस वस्तु के आदेश लेने वाले यही विक्रयकर्त्ता होते हैं। व्यक्तिक विक्रय का अधिकांश विक्रय यही लोग करते हैं। ये विक्रयपूर्ण करते हैं। कभी-कभी यही लोग माल की तुरंत सुपुर्दगी करके उसका भुगतान भी ले लेते हैं। यह भी तीन प्रकार के होते हैं - (i) निर्माता के, (ii) थोक व्यापारी के, व (iii) फुटकर विक्रेता के।

3. **सहायता देने वाले विक्रयकर्त्ता** - इस प्रकार के विक्रयकर्त्ता किसी के लिए भी माल का न आदेश लेते हैं और न विक्रय कार्य करते हैं। अपितु सामान्य रूप से ये विक्रयकर्त्ता वस्तु की बिक्री में निर्माता की सहायता करते हैं। ये अपने क्षेत्र के विक्रयकर्त्ता होते हैं। यह विक्रयकर्त्ता दो प्रकार के होते हैं -

(i) **मिशनरी विक्रयकर्त्ता** - यह विक्रयकर्त्ता वस्तु के निर्माता तथा थोक एवं फुटकर व्यापारियों के बीच संचार माध्यम का कार्य करता है। यह वस्तुओं की मांग का स जन करके संस्था की ख्याति में चार-चाँद लगाता है।

(ii) **यांत्रिक विशेषज्ञ विक्रयकर्त्ता** - यह विक्रयकर्त्ता उच्च शिक्षा प्राप्त इंजीनियर यानि यांत्रिक विशेषज्ञ विक्रयकर्त्ता होते हैं। इन विशेषज्ञों को उन क्रेताओं/उपभोक्ताओं के पास भेजा जाता है जिनको वस्तु विशेष के प्रति शिकायत, कठिनाई तथा समस्या होती है। यह विशेषज्ञ ऐसे क्रेता/उपभोक्ताओं की समस्याओं को दूर करके वस्तु के प्रति विश्वास एवं संतुष्टि प्रदान करते हैं।

वैयक्तिक विक्रय रीति-नीति निश्चित करना

(Determination of Policy of Personal Selling)

वैयक्तिक विक्रय का प्रबन्ध कार्य विक्रय प्रबन्धक द्वारा किया जाता है और वही विक्रय शक्ति के नियोजन, प्रशिक्षण व उनके उपयोग के लिए उत्तरदायी होता है। इन उत्तरदायित्वों को पूरा करने के लिए उसको चार कार्य करने पड़ते हैं जो निम्नलिखित हैं :

1. **वैयक्तिक विक्रय व्यय** - वैयक्तिक विक्रय रीति-नीति में सर्वप्रथम वैयक्तिक विक्रय व्ययों को निर्धारित/निश्चित किया जाता है। इसका आधार विपणन उद्देश्य लक्षित विक्री (Targeted Sales) होते है। यदि प्रबंध का लक्षित विक्री उद्देश्य पूर्व की विक्री से अधिक है तो हो सकता है कि अधिक विक्रयकर्ताओं को भी नियुक्त करने की आवश्यकता हो और निरीक्षको को भी नियुक्त करना पड़े। इन निरीक्षकों व विक्रयकर्ताओं को उनके पारिश्रमिक के अलावा कुछ अन्य व्यय भी देने पड़ते है जैसे मार्ग व्यय। इस प्रकार वैयक्तिक विक्रय व्ययों को निर्धारित करते समय प्रबंध दो कार्य करता है - (i) प्रत्येक क्रिया द्वारा संपादित किये जाने वाले कार्य का अनुमान, व (ii) उन अनुमानों को रूपयों के अनुमानों में परिवर्तित करना।

2. **कार्य-विवरण** — "कार्य-विवरण एक विशिष्ट कार्य के उद्देश्य, कर्तव्य एवं उत्तरदायित्वों का व्यापक कथन है।" इनमें

मुख्य रूप से- (i) कार्य-सारांश-कर्तव्यों और दायित्वों का विवरण, (ii) प्रशिक्षण, (iii) कार्य की दशाऐं (iv) कार्य के लिये वांछित उपकरणों, मशीनों एवं सामग्रियों का विवरण, (v) शारीरिक एवं मानसिक गुण एवं (vi) वेतन एवं भत्ते आदि, बातें लिखित रूप से आती है।

विक्रय प्रबंध का प्रथम व सबसे महत्वपूर्ण कार्य-विवरण तैयार करना है। यह कार्य-विवरण बिल्कुल स्पष्ट, पूर्ण एवं उचित होना चाहिए। वैयक्तिक विक्रय रीति-नीति का यह बहुत ही महत्वपूर्ण अंग है। इसी के आधार पर प्रबंध के द्वारा उन गुणों एवं योग्यताओं का निर्धारण किया जाता है जिनका एक विक्रयकर्ता में होना अनिवार्य है। इसी के आधार पर पारिश्रमिक एवं निरीक्षण योजनाऐं बनायी जाती है और यही कार्य-विवरण प्रबंध के लिए मार्ग-प्रदर्शन का कार्य करता है।

3. **विक्रय शक्ति के बदलने की दर** – साधारणतया प्रत्येक संस्था में प्रतिवर्ष कुछ विक्रयकर्ता इस्तीफा दे जाते है या रिटायर हो जाते है या कुछ को किन्हीं कारणों से अलग कर दिया जाता है। वैयक्तिक विक्रय के नियोजन में इस बात का भी ध्यान रखना पड़ता है कि प्रति वर्ष इन उपर्युक्त वर्णित कार्यो से कितने प्रतिशत विक्रयकर्ता संस्था से निव त होंगे जिससे कि उनके स्थान पर नये विक्रयकर्ता नियुक्त करने के लिए पहले से ही उचित प्रबंध कर लिया जाय। जिस दर से विक्रयकर्ता निव त होते है उसी दर को विक्रय शक्ति के बदलने की दर कहते है। इस दर को प्रतिशत में निकालने के लिये निम्नलिखित सूत्र काम में लगाया जाता है :

$$\text{विक्रय शक्ति के बदलने की प्रतिशत दर} = \frac{\text{अलग होने वाले विक्रयकर्ताओं की संख्या}}{\text{विक्रय शक्ति का औसत आकार}} \times 100$$

यदि किसी संस्था में औसतन 500 विक्रयकर्ता है और प्रतिवर्ष औसतन 25 विक्रयकर्ता सेवानिव त हो जाते है तो प्रतिशत दर निम्न प्रकार से निकाली जाएगी :

$$\text{प्रतिशत पर दर} = \frac{25}{500} \times 100 = 5\% \text{ प्रतिशत}$$

नये नये विक्रयकर्ताओं को प्रशिक्षित करने में व्यय होता है। अतः विपणन प्रबंधक को इस विक्रय शक्ति के बदलने की दर कम से कम रखनी चाहिए। यदि दर बढ़ती है तो विक्रय शक्ति के प्रबंध व्यय भी बढ़ते है।

अकुशल विक्रयकर्ताओं को हटाया जाना चाहिए तथा कुशल को उन्नति का अवसर दिया जाना चाहिए। प्रबंध का यह कर्तव्य है कि वह समय समय पर विक्रयकर्ताओं की विक्री का मूल्यांकन करता रहे जिससे कि इस बात का पता लगता रहे कि कुशल विक्रयकर्ता तो संस्था को छोड़कर नहीं जा रहे है ? प्रबंध को विक्रय शक्ति पर हर समय निगाह रखनी चाहिए और इस बात का पता अवश्य ही लगाते रहना चाहिए कि विक्रयकर्ता दूसरी संस्थाओं में क्यों जाते है अथवा जाना चाहते हैं जिससे कि उस ओर उचित कदम उठाये जा सके और कार्य-विवरण में भी आवश्यकता अनुसार परिवर्तन किया जा सके।

4. **विक्रय शक्ति का आकार** – विक्रय शक्ति का आकार कितना बड़ा हो यह संस्था की अनुमानित विक्री व उसके लाभ संबंधी उद्देश्यों पर निर्भर है। इसके साथ साथ एक विक्रयकर्ता का कार्य-विवरण भी आवश्यक है जिससे कि यह तय किया जा सके कि एक विक्रयकर्ता कितने रूपये की बिक्री कर सकता है। यदि हम कुल अनुमानित बिक्री में एक विक्रयकर्ता की बिक्री का भाग दे दें तो यह निकाला जा सकता है कि कितने विक्रयकर्ताओं कि

आवश्यकता है। लेकिन ऐसा करते समय विक्रय शक्ति के बदलने की दर का भी ध्यान रखा जाना चाहिए। इस प्रकार विक्रय शक्ति को निकालने के लिए निम्न सूत्र काम में लाया जा सकता है -

$$N = \frac{S}{P} (1+T)$$

N = विक्रयकर्ताओं की संख्या

S = बिक्री का पूर्वानुमान

P = एक विक्रयकर्ता की विक्रय क्षमता

T = विक्रय शक्ति बदलने की दर

यदि किसी संख्या की पूर्वा अनुमानित बिक्री 80,00,000 रूपये है तथा एक विक्रयकर्ता की विक्रय क्षमता 1,00,000 है तथा विक्रय शक्ति के बदलने की दर 10 प्रतिशत है तथा वर्तमान में विक्रयकर्ताओं संख्या 60 हो तो हमें कितने विक्रयकर्ताओं की आवश्यकता होगी निम्न प्रकार ज्ञात की जा सकती है :

$$N = \frac{S}{P}(1+T)$$

$$= \frac{80,000,00}{1,00000}\left(1+\frac{10}{100}\right)$$

$$= \frac{80}{1} \times \frac{110}{100} = 88$$

अतः 80,00,000 की बिक्री के लिये हमें 88-60 = 28 विक्रयकर्ताओं कि आवश्यकता होगी।

उपयोगी प्रश्न
Useful Question

1. वैयक्तिक विक्रय से आपका क्या आशय है ? इसकी विशेषताओं का वर्णन करें।
   What is means by Personal Selling ? Explain its features.
2. वैयक्तिक विक्रय का क्या अर्थ है ? वैयक्तिक विक्रय के गुण तथा दोषों का समझाइयें ?
   What is Personal Selling ? Explain the merits and demerits of Personal Selling.
3. वैयक्तिक विक्रय तथा विक्रयकला में क्या अंतर है ? वैयक्तिक विक्रयकर्ताओं के प्रकार बताइये।
   What is the difference between Personal Selling and Salesmanship ? Explain the types of Salesman in Personal Selling.
4. वैयक्तिक विक्रय के अर्थ को समझाते हुए वैयक्तिक विक्रय की रीति-नीति की विवेचना कीजिए।
   Explain how the Personal Selling policy is determined by discussing the meaning of Personal Selling.
5. विक्रय प्रक्रिया क्या है ? विभिन्न विद्वानों ने विक्रय प्रक्रिया की कौन कौन सी अवस्थायें बताई है ?
   What is Selling Process ? What are the different phases of Selling Process indicated by different scholars.

अध्याय - 15
विक्रय प्रयासों (विभाग) का संगठन
(Organisation of Sales Efforts Department)

विक्रय विभाग के संगठन का अर्थ एवं परिभाषाऐं
(Meaning And Definitions of Organisation of Sales Department)

व्यवसाय में सफलता पाने के उद्देश्य से ही व्यावसायिक संगठनों द्वारा सतत् प्रयास किये जाते हैं। इन प्रयासों में सफल होने के लिए संस्थाओं द्वारा विक्रय विभाग का गठन किया जाता है क्योंकि विक्रय के कार्यकलापों को संगठित रखना तथा विक्रय सम्बन्धों कार्यों को व्यवस्थित रखना आवश्यक है। विक्रय कार्यों एवं दायित्वों के निष्पादन के लिए भी एक सुद ढ़ संगठन की आवश्यकता है। विक्रय संगठन, संस्था के विक्रय प्रयत्नों एवं क्रियाओं को श्रंखलावद्ध, संयोजित तथा समन्वित करता है। विक्रय शक्ति तथा उसमें प्रयोग होने वाले साधनों को प्रभावशाली ढंग से समन्वित एवं उत्प्रेरित करने के लिए विक्रय विभाग को संगठित किया जाता है।

अतः विक्रय (विभाग) संगठन व्यक्तियों का एक ऐसा समूह है जो पूर्व-निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए विक्रय प्रबन्धक के नेत त्व में कार्य करता है। इस प्रकार विक्रय संगठन, विक्रय प्रयासों, सम्बन्धों, साधनों तथा कार्य पद्धतियों को समन्वित करता है ताकि विक्रय उद्देश्यों को न्यूनतम लागत पर अधिकतम कुशलता के साथ प्राप्त किया जा सके। विक्रय संगठन की विभिन्न विद्वानों ने निम्न परिभाषाऐं दी हैं :

1. **स्टिल, कण्डिफ एवं गोवानी** (Still, Cundiff and Govani) के शब्दों में, "किसी अन्य संगठन की भांति विक्रय संगठन व्यक्तियों का एक समूह है जो किसी सामान्य उद्देश्य की प्राप्ति के लिए संयुक्त रूप से कार्य करता है और उनमें आपस में औपचारिक सम्बन्धों के साथ ही साथ कुछ अनौपचारिक सम्बन्ध भी होते हैं।" ("A sales organisation, like any organisation, is a group of individuals striving jointly to reach certain goals and bearing informal as well as formal relations to one-another" - Still, Cundiff and Govani)
2. **एच. आर. टोस्डल** (H.R. Tosdal) के शब्दों में "विक्रय संगठन उन व्यक्तियों द्वारा निर्मित होता है जो संस्था द्वारा निर्मित अथवा पुनः विक्रय हेतु क्रय की गई वस्तुओं के विपणन के कार्य करते है।" ("A sales organisation consists of human being working together for marketing of products manufactured by the firm or the commodities which have been purchased for resale. **— H.R. Tosdal.**

संक्षेप में विक्रय संगठन किसी व्यावसायिक उपक्रम के सामान्य संगठन के उस भाग के पदों, व्यक्तियों व उनके अन्तसंम्बधों की संरचना है जो विक्रय कार्यों के प्रबन्ध, नियमन एवं नियन्त्रण से सम्बन्ध रखता है।

विक्रय संगठन की विशेषताएँ या तत्व या लक्षण
(Characteristics or Features or Elements of Sales Organisation)

एक विक्रय संगठन के प्रमुख लक्षण निम्न है :

1. इसमें संलग्न व्यक्तियों के आपस में औपचारिक एवं अनौपचारिक सम्बन्ध होते हैं।

2. यह संस्था के सम्पूर्ण संगठन का एक भाग है जिसका सम्बन्ध विक्रय क्रियाओं से होता है।
3. विक्रय संगठन विक्रय सम्बन्धी क्रियाओं को न्यूनतम लागत पर अधिकतम कार्यकुशलता से पूरा करने के लिए प्रयास करता है।
4. यह व्यक्तिओं का एक समूह होता है जो विक्रय कार्य में लगे होते है।
5. विक्रय संगठन में क्रियाओं का समूहीकरण करके विभागों को स्थापित किया जाता है।
6. विक्रय कार्यों के लिए आवश्यक साधनों को एकत्र किया जाता है।
7. इसमें संलग्न व्यक्तियों के मध्य कर्त्तव्य, उत्तरदायित्व तथा अधिकारों को स्पष्ट रूप से विभाजित किया जाता है।
8. यह विक्रय से सम्बन्धित लक्ष्यों को प्राप्त करने के उद्देश्य से कार्य करता है।

विक्रय संगठन के प्रमुख विभाग

(Departments of Sales Organisation)

1. **विक्रय विभाग** (Sales Department)
2. **विज्ञापन विभाग** (Advertising Department)
3. **विपणन अनुसन्धान विभाग** (Marketing Research Department)
4. **विक्रय संवर्द्धन विभाग** (Sales Promotion Department)
5. **लेखा एंव साख विभाग** (Accounts and Credit Collection Department)
6. **प्रशिक्षण विभाग** (Training Department)

1. **विक्रय विभाग** – विक्रय विभाग विक्रय संगठन का बहुत महत्वपूर्ण विभाग होता है। इस विभाग द्वारा कर्मचारियों की नियुक्ति की जाती है, उनकी सेवा की शर्तें तय की जाती है तथा उनका पारिश्रमिक निश्चित किया जाता है। इस विभाग में एकाउण्टेण्ट, टाइपिस्ट, कलर्क, यात्री विक्रयकर्ता कार्य करते हैं। विक्रयकर्ताओं को कार्य क्षेत्र में बांटा जाता है। इस विभाग द्वारा शाखाओं पर नियन्त्रण रखा जाता है तथा उन्हें नीति सम्बन्धी आदेश दिये जाते हैं। इस विभाग द्वारा विक्रय की शर्तें तय की जाती हैं तथा आदेशानुसार माल को पैक करवा के परिवहन साधनों से क्रेता के पास भेजा जाता है। विक्रय का भुगतान प्राप्त किया जाता है तथा क्रेता के साथ किसी मतभेद की दशा में उसका निपटारा भी किया जाता है।

2. **विज्ञापन विभाग** – विज्ञापन क्रेताओं को उत्प्रेरित करने का सशक्त साधन है। इसका उद्देश्य माल, सेवाओं या विचारों को सम्भावित क्रेताओं के बड़े समूहों को बेचना है। इसके द्वारा जन-समूह को वस्तु के बारे में अवगत कराया जाता है तथा उसे क्रय के लिए मानसिक रूप से तैयार किया जाता है। जिन संस्थाओं का आकार छोटा होता है वहाँ विज्ञापन कार्य के लिए अलग से विभाग न बनाकर यह कार्य विक्रय विभाग द्वारा ही किया जाता है।

   विज्ञापन विभाग का कार्य विज्ञापन प्रति तैयार करवा के विज्ञापन योजना बनाना है। विज्ञापन विभाग, विज्ञापन एजेन्सी व विज्ञापन माध्यम से सम्पर्क करके विज्ञापन की व्यवस्था करता है। विज्ञापन छपने के बाद विज्ञापन कितना प्रभावकारी रहा इसके बारे में अनुसंधान सम्बधित कार्य भी इसी विभाग द्वारा किया जाता है।

3. **विपणन अनुसन्धान विभाग** – जिन संस्थाओं का आकार व हत होता है उन्हें अपने यहाँ इस विभाग की स्थापना करनी होती है ताकि आधुनिक तरीकों से अधिक लाभ लिया जा सके। इस विभाग द्वारा (i) बाजारों के सम्बंद्ध में अनुसन्धान, (ii) विक्रय नीतियों एवं तरीकों के सम्बन्ध में अनुसन्धान, (iii) वस्तुओं तथा सेवाओं के सम्बन्ध में

अनुसन्धान, (iv) नई वस्तुओं के सम्बन्ध में अनुसन्धान, (v) उपभोक्ता अनुसन्धान, (vi) नई वस्तुओं का पूर्व-परिक्षण तथा (vii) पैकेजिगं अनुसन्धान आदि करने होते हैं।

इस प्रकार इस विभाग द्वारा इन अनुसन्धानों के आधार पर एकत्रित जानकारियों से प्रबन्ध को अवगत कराया जाता है ताकि भावी कठिनाईयों से बचा जा सके तथा समयानुसार निर्णय लिये जा सकें। इससे उपभोक्ता को वस्तु उसकी आवश्यकतानुसार उपलब्ध हो जाती है तथा उत्पादन व पूर्ति में आवश्यक समन्वय स्थापित हो जाता है।

4. **विक्रय संवर्द्धन विभाग** – कुछ संस्थाओं द्वारा विज्ञापन के अतिरिक्त विक्रय संवर्द्धन पद्धति को भी अपनाया जाता है। इसमें उपभोक्ता को क्रय के लिए प्रेरित करने के लिए वस्तुओं के मुफ्त नमूनें व कूपन बांटे जाते हैं।

   यही नहीं, क्रेताओं को क्रय का सबूत देने पर धन वापसी का प्रस्ताव भी किया जाता है। कुछ समय के लिए मूल्य में कमी करके या एक वस्तु के क्रय पर कोई अन्य वस्तु प्रीमियम के रूप में मुफ्त प्रदान करके भी विक्रय संवर्द्धन किया जा सकता है। प्रतियोगिताएँ आयोजित कर उनमें भाग लेने वाले व्यक्तियों को जीतने पर मुफ्त विदेश यात्रा या धन या वस्तु देने का लालच देना भी विक्रय संवर्द्धन का एक तरीका है। विक्रेताओं की अधिक बिक्री करने पर क्रय भत्ता आदि का लाभ दिया जाता है। ये सभी कार्य इसी विभाग द्वारा सम्पन्न किये जाते हैं।

5. **लेखा एवं साख विभाग** – जिन संस्थाओं का आकार अत्यंत विस्त त होता है उनके द्वारा अपने यहाँ लेखा एंव साख विभाग की स्थापना की जाती है। जिन संस्थाओं का आकार छोटा होता है वहाँ यह कार्य विक्रय विभाग ही करता है। इस विभाग द्वारा विक्रय विभाग द्वारा की गई नकद व उधार बिक्री का हिसाब-किताब रखा जाता है। इसी विभाग द्वारा यह निश्चित किया जाता है कि किसी व्यापारी को कितनी मात्रा में उधार विक्रय किया जा सकता है। यदि ग्राहकों को साख सुविधाएँ दी जाती हैं तो वे किस प्रकार दी जाँएगी। (किश्त या किराया-क्रय पद्धति) इसका निर्धारण इसी विभाग द्वारा किया जाता है।

6. **प्रशिक्षण विभाग** – कर्मचारियों को व्यवसाय की आवश्यकताओं के अनुरूप तैयार करने की व्यवस्था प्रशिक्षण विभाग द्वारा की जाती है। यह विभाग कर्मचारियों को प्रशिक्षण देकर उन्हें विक्रय कार्य में निपुण बनाता है। इसके लिए व्याख्यानों की व्यवस्था, प्रदर्शन, नाटक या रोल अदा किये जाते हैं। विचार गोष्ठी व सम्मेलन आदि आयोजित किये जाते हैं। अपने प्रशिक्षणार्थीयों को सैद्धांतिक बातों से अवगत कराने के लिए कॉलेज व विश्वविद्यालयों में प्रवेश दिलाकर तथा कार्य प्रशिक्षण देकर कर्मचारियों को विक्रय कार्य के लिए दक्ष बनाया जाता है।

विक्रय संगठन की स्थापना या गठन की प्रक्रिया

(Process of Constituting or Setting Up a Sales Organisation)

एक विक्रय संगठन की स्थापना के लिए सामान्यतः निम्न प्रक्रिया को अपनाया जाता है :

1. **उद्देश्यों को निश्चित करना** – विक्रय संगठन की स्थापना के लिए पहला कदम विक्रय विभाग के उद्देश्यों को परिभाषित या निश्चित करना है। इन उद्देश्यों को संस्था के सामान्य उद्देश्यों या दीर्घकालीन उद्देश्यों के आधार पर निश्चित किया जाता है।

   यदि बाजार विस्तार व बाजार पर अधिकतम नियन्त्रण व अधिकार का उद्देश्य है तो विक्रय विभाग का लक्ष्य कम से कम लाभ पर अधिकतम बिक्री से बाजार के बड़े अंश पर द ढ़ अधिकार बनाये रखने व इसके विस्तार का होगा।

2. **क्रियाओं का निर्धारण करना** – विक्रय विभाग के उद्देश्यों के निश्चित हो जाने के बाद विक्रय संगठन को स्थापित

करने के लिए उनके सम्बन्ध में की जाने वाले क्रियाओं की सूची बनायी जाती है। विक्रय विभाग में कितने उपविभाग व कितने अधिशासी स्तर होंगे, इसमें कौन-कौन से पद होंगे तथा उनके क्या उत्तरदायित्व होंगे तथा अन्य पदों या स्थितियों से उनके क्या सम्बन्ध होंगे, इन सभी का निर्धारण कार्यो की सूची या क्रियाओं के निर्धारण के आधार पर ही किया जा सकेगा।

विक्रय विभाग का अन्य विभागों से सम्बन्ध

(Relation of Sales Department with Other Departments)

एक विक्रय संगठन में स्थापित विक्रय विभाग का अन्य विभागों के साथ गहरा सम्बन्ध होता हैं जो निम्न प्रकार से पाया जाता है :

(1) **उत्पादन विभाग से सहयोग** – किसी संस्था में उत्पादन उत्पादों की मांग के अनुसार होना चाहिए। विक्रय विभाग उत्पादन विभाग को माँग के बारे में जानकारी प्रदान करके उत्पादन की मात्रा के निर्धारण में सहयोग करता है। अतः विक्रय विभाग व उत्पादन विभाग के बीच समन्वय व सहयोग आवश्यक है। ग्राहक की क्या आवश्यकता है, उनकी रूचियाँ क्या हें आदि को ध्यान में रखकर उत्पादन में आवश्यक फेर बदल किये जा सकते हैं जिनकी सूचना विक्रय विभाग उत्पादन विभाग को प्रदान करता है।

(2) **कर्मचारी विभाग से सहयोग** – विक्रय विभाग में विक्रय अधिकारी व कर्मचारी उपयुक्त संख्या में उपलब्ध होने चाहिएँ जिन्हें कर्मचारी विभाग के सहयोग से उपलब्ध कराया जाता है। इनकी नियुक्ति व प्रशिक्षण व्यवस्था कर्मचारी विभाग द्वारा ही की जाती है। अतः विक्रय विभाग का कर्मचारी विभाग से उचित समन्वय होना आवश्यक है।

(3) **वित्त विभाग से सहयोग** – विक्रय विभाग की वित्त सम्बन्धी आवश्यकता को वित्त विभाग ही पूरा करता है। वित्त विभाग द्वारा वित्तीय व्यवहारों का नियमन व नियन्त्रण किया जाता है। विक्रय विभाग, विभाग की विक्रय लागतों पर नियन्त्रण के लिए वित्त विभाग व विक्रय विभाग के मध्य सहयोग, सम्पर्क व समन्वय की आवश्यकता होती है।

(4) **क्रय विभाग से सहयोग** – उत्पादन विभाग को अपना कार्य पूरा करने के लिए कच्चे माल की नियमित आपूर्ति की आवश्यकता होती है जिसे क्रय विभाग पूरा करता है तथा उत्पादन का निर्धारण विक्रय विभाग पूर्वानुमानों के आधार पर करता है। अतः इन तीनों विभागों में परस्पर सहयोग होना आवश्यक है।

(5) **विज्ञापन विभाग से सहयोग** – विज्ञापन व विक्रय परस्पर पूरक हैं अतः इनमें सहयोग व समन्वय आवश्यक है।

(6) **अन्य विभागों से सहयोग** – विक्रय मात्रा व विक्रय प्रयासों की प्रभावशीलता उपक्रम के सभी क्रियाकलापों पर प्रभाव डालती है तथा विक्रय के स्तर पर ही उपक्रम की सारी गतिविधियों का स्तर निर्भर करता है। अतः विक्रय विभाग का उपक्रम के अन्य विभागों के साथ सहयोग व समन्वय आवश्यक है।

एक अच्छे विक्रय संगठन के लक्षण

(Features of a Sound Sales Organisation)

(1) एक श्रेष्ठ संगठन के उद्देश्य स्पष्ट रूप से परिभाषित होने चाहिएँ।

(2) विक्रय संगठन के कार्यों का समूहीकरण एवं आबंटन उचित आधारों पर हो।

(3) एक श्रेष्ठ संगठन में अधिकारों व दायित्वों में सन्तुलन होना आवश्यक है।

(4) एक संगठन में विभिन्न उप-विभागों में उचित सन्तुलन होना चाहिए।

(5) विभिन्न विभागों, अधिकारियों, कर्मचारियों एवं कार्यों में उचित समन्वय होना चाहिए।

(6) विक्रय संगठन में पर्याप्त साधनों की उपलब्धता रहनी चाहिए।

(7) विक्रय अधिकारियों एवं कर्मचारियों के मध्य सम्बन्धों का स्पष्ट निर्धारण होना चाहिए।

(8) विक्रय प्रबन्धक का नेत त्व प्रभावशाली होना चाहिए।

(9) विक्रय संगठन में नियन्त्रण का उचित विस्तार हो।

(10) विक्रय संगठन की कार्यप्रणाली लोचशील हो।

(11) कर्मचारियों का मनोबल श्रेष्ठ संगठन में सदैव ऊँचा रहे।

विक्रय विभाग के संगठन के उद्देश्य

(Objective of Organisation of Sales Department)

विक्रय विभाग के संगठन के लक्ष्य एवं उद्देश्य संस्था के सामान्य उद्देश्यों के अनुपूरक होते हैं अर्थात् उनकी पूर्ति में सहयोग देते हैं परन्तु ये उद्देश्य काफी व्यापक एवं विविधतापूर्ण होते हैं। विक्रय संगठन के कुछ विशिष्ट उद्देश्य यहाँ पर दिये जा रहे हैं :

(1) विक्रय विभाग के कार्यों का नियोजन, निर्देशन एवं नियंत्रण करना जिससे कार्यों के दोहराव तथा छूट जाने की सम्भावना न रहे।

(2) विक्रय विभाग के सामान्य लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को निर्धारित करना ताकि इसके आधार पर विक्रय-योजनाएँ एवं कार्यक्रम बनाए जा सकें।

(3) विक्रय विभाग के कर्मचारियों, विक्रेताओं एवं संस्था के अन्य व्यक्तियों की कार्यकुशलता में व द्धि के लिए प्रेरणाएँ देते रहना।

(4) विक्रय कर्मचारियों के बीच स्वस्थ प्रतिस्पर्द्धा के साथ-साथ सहकारिता एवं सौहार्द्रपूर्ण वातावरण पैदा करना।

(5) उपक्रम के प्रबन्ध को बाजार एवं प्रतिस्पर्द्धा से सम्बन्धित सूचनाएँ उपलब्ध करना।

(6) विक्रय विभाग का नेत त्व एवं मार्गदर्शन करना तथा उसे प्रभावी पर्यवेक्षण, निर्देशन एवं अभिप्रेरणा प्रदान करना।

(7) विक्रय संगठन के अन्तर्गत विभिन्न विभागों के अभिकार्यों व कर्मचारियों को उनके अधिकारों एवं दयित्वों से अवगत करा दिया जाए।

(8) विक्रय विभाग के अधिकारों एवं दायित्वों का स्पष्ट विभाजन करना, ताकि कार्यों के छूट जाने की सम्भावना न रहे।

(9) उपक्रम की उत्क ष्ट छवि बनाना।

(10) व्यवसाय, विक्रेता एवं उपभोक्ता तीनों के हितों की रक्षा हेतु समय-समय पर विक्रय-शक्ति का मार्ग-दर्शन करना।

विक्रय विभाग के संगठन की विधियाँ

(Methods of Organising Sales Department)

विक्रय विभाग के संगठन का प्रारूप व्यवसाय की प्रक ति, आकार एवं आवश्यकताओं पर निर्भर करता है। एक विक्रय विभाग के संगठन के निम्न प्रारूप हो सकते हैं :

1. रेखा संगठन।
2. रेखा एवं कर्मचारी संगठन।
3. क्रियात्मक संगठन।
4. समिति संगठन।

1. **रेखा संगठन** – रेखा संगठन के सभी दायित्व विक्रय-प्रबन्धक या अन्य विक्रय अधिकारी में केन्द्रित होते हैं। अधिकार सीधी रेखा में सोपानिक क्रम से प्रत्येक व्यक्तिगत विक्रयकर्ता तक पहुँचते हैं। इसमें विशेषज्ञों की कमी होती है तथा सभी अधिकारियों को अपने-अपने कार्य-क्षेत्र में अन्तिम निर्णय लेने का अधिकार होता है। विक्रय संगठन का यह सबसे पुराना एवं सरल रूप है। महाविक्रय प्रबन्धक (General Sales Manager) इसका सर्वोच्च अधिकारी होता है। उसमें सत्ता उसमें ऊपर से नीचे की ओर एक सरल रेखा के रूप में प्रवाहित होती है। महाविक्रय प्रबन्धक (General Sales Manager) क्षेत्रीय विक्रय प्रबन्धक को आदेश देता है और क्षेत्रीय विक्रय प्रबन्धक विक्रय-निरीक्षक को एवं विक्रय-निरीक्षक विक्रयकर्त्ताओं को आदेश देता है। ऊपर का अधिकारी नीचे के अधिकारी के लिए उत्तरदायी होता है एवं उन्हें आदेश देने का पूरा अधिकार होता है।

रेखा संगठन में अधिकार एवं दायित्व का प्रवाह

रेखा संगठन की विशेषताएँ

1. प्रत्येक कर्मचारी को आदेश उसके निकटतम अधिकारी द्वारा प्राप्त होते हैं तथा वह इसके प्रति ही उत्तरदायी होता है।
2. संगठन का यह सबसे आसान प्रकार है।
3. इसमें अधिकारियों व अधीनस्थों के बीच प्रत्यक्ष लम्बवत सम्बन्ध होते हैं।
4. अधिकारी योजना बनाने और उसको कार्यान्वित कराने के लिए भी उत्तरदायी होते हैं।
5. इस संगठन में आदेश ऊपर से नीचे की और एक रेखा में चलते हैं तथा प्रार्थना व निवेदन (Request) नीचे से ऊपर की और पहुँचाए जाते हैं।
6. आदेश केवल एक अधिकारी द्वारा दिए जाते हैं इसलिए आदेश में एकरूपता रहती है।
7. प्रत्येक अधिकारी के नियंत्रण में अधीन कर्मचारियों की संख्या सीमित होती है।

8. इस संगठन की प्रणाली में समन्वय करना सुविधाजनक होता है।
9. अधिकार सत्ता सर्वोच्च अधिकारी के पास केन्द्रित होती है।

रेखा संगठन के लाभ

1. यह सबसे सरल संगठन है।
2. इस संगठन में प्रत्येक अधिकारी एवं कर्मचारी के उत्तरदायित्व की प्रक ति सुनिश्चित तथा एकीक त होती है।
3. इसमें कर्मचारियों के अधिकार व नियन्त्रण-क्षेत्र निश्चित होने के कारण अनुशासन बना रहता है।
4. इस संगठन में अधिकारी शीघ्र निर्णय ले सकते हैं।
5. इसमें प्रत्येक अधिकारी का अपने अधीन कर्मचारियों से सीधा सम्बन्ध होता है।
6. संगठन का यह सबसे अधिक लोचशील प्रारूप है।
7. इस व्यवस्था में संगठनात्मक व्यय कम होते हैं।

रेखा संगठन की हानियाँ (Desadvantages of Line Organisation) –

(1) नियन्त्रण व अनुशासन का अभाव।

(2) बड़ी संस्थाओं में उपयुक्त नहीं।

(3) अत्यधिक कार्यभार।

(4) पक्षपात की संभावना।

(5) विशिष्टिकरण का अभाव।

उपयुक्तता (Sitability) – रेखा संगठन उन विक्रय संगठनों के लिए उपयुक्त है :

1. जिनका आकार अधिक बड़ा नहीं हैं।
2. जहाँ विशेषज्ञों की आवश्यकता नहीं है।
3. जहाँ कर्मचारियों की सख्यां सीमित है।
4. जिन उद्योगों में विशेष प्रतिस्पर्धा नहीं है।

2. **रेखा एवं कर्मचारी संगठन (Line and Staff Organisation)** – विक्रय क्रियाओं में विस्तार के साथ-साथ उपक्रम की विक्रय सम्बन्धी समस्याएँ भी जटिल होने लगती हैं। ऐसी परिस्थिति में रेखा विक्रय संगठन पर्याप्त नहीं है। उच्च विक्रय अधिकारी भी इस बात का अनुभव करते हैं कि उनकी सहायता के लिए कार्यकारी स्तर पर अन्य विशेषज्ञ होने चाहिए। अतः रेखा अधिकारियों की सहायता एवं परामर्श हेतु विज्ञापन, विक्रय संवर्द्धन, प्रशिक्षण, अनुसंधान, वितरण आदि के लिए विशेष योग्यता वाले कर्मचारी अधिकारियों की नियुक्ति की जाती है। संगठन के इस प्रारूप में रेखाधिकारियों के साथ-साथ कर्मचारी अधिकारियों की नियुक्ति की जाती है, अतः यह प्रारूप रेखा व कर्मचारी विक्रय संगठन कहलाता है। कर्मचारी अधिकारी वे हैं जिन्हें अन्तिम निर्णय का अधिकार न होकर रेखाधिकारियों को परामर्श व सहायता देने का अधिकार होता है।

रेखा एवं कर्मचारी संगठन पर आधारित विक्रय विभाग के संगठन का रेखाचित्र इस प्रकार होगा -

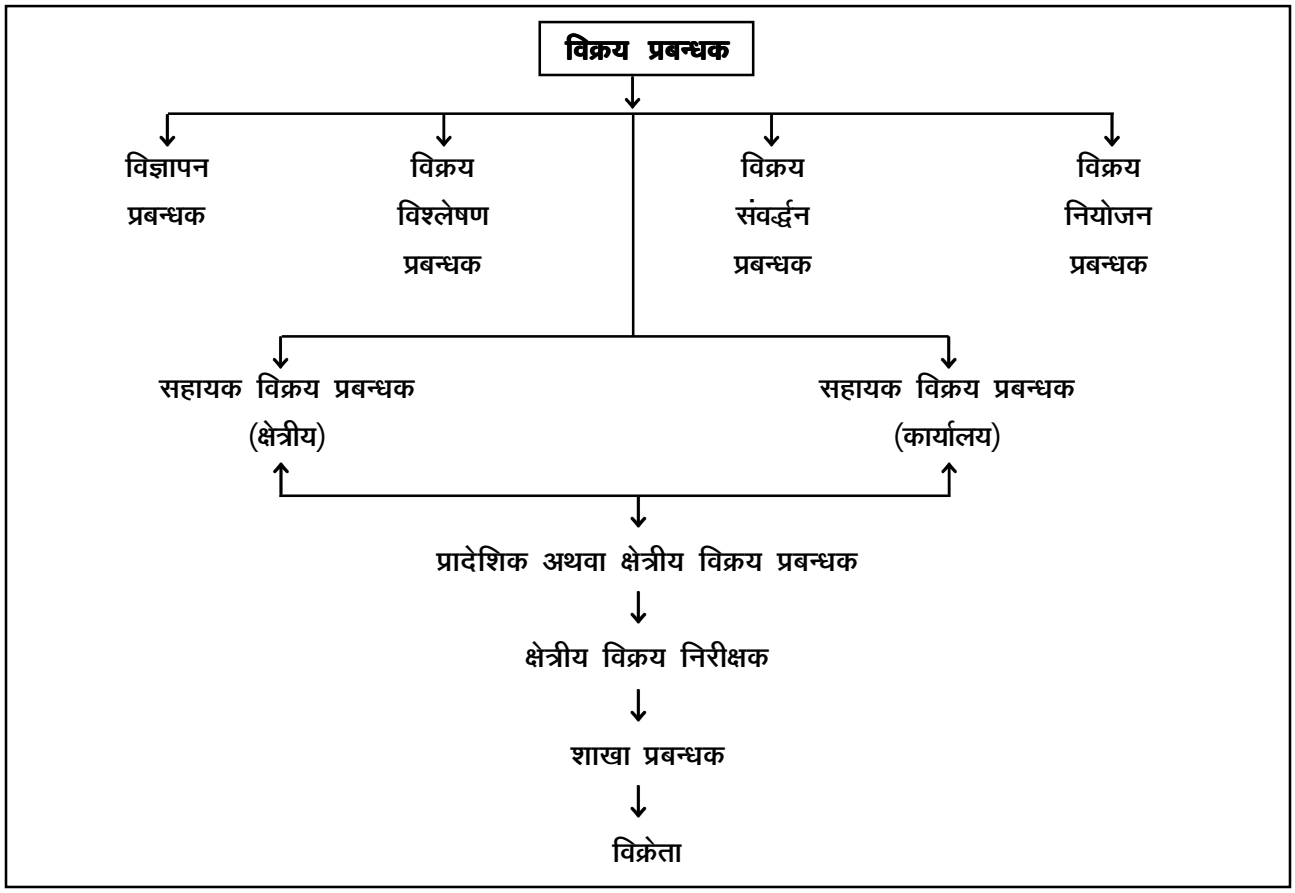

उपर्युक्त चार्ट से स्पस्ट है कि विक्रय प्रबन्धक को विशेष कार्यों में सलाह-मशविरा देने के लिए विशेषज्ञ नियुक्त किये गये हैं। ये विज्ञापन प्रबन्धक, विक्रय विश्लेषण प्रबन्धक, विक्रय संवर्द्धन प्रबन्धक, विक्रय नियोजन प्रबन्धक आदि हैं। क्षेत्रीय स्तर पर भी विशेषज्ञों की नियुक्ति की जा सकती है।

रेखा एवं कर्मचारी संगठन की विशेषताएँ (Characteristics of Line and Staff Organistion) :

1. **'सोचने'** व **'करने'** का कार्य अलग-अलग व्यक्तियों द्वारा किया जाता है।
2. अधिकार का क्रम भी बना रहता है और साथ ही विशेषज्ञों को परामर्श भी प्राप्त हो जाता है।
3. अधिकार तथा उत्तरदायित्व का प्रवाह ऊपर से नीचे की ओर सीधी रेखा में होता है।
4. स्टाफ को केवल परामर्श देने का अधिकार होता है। उन्हें आदेश देने, निर्णय लेने अथवा अपने निर्णय को लागू करने का अधिकार नहीं होता।
5. इस संगठन में भी आदेश की एकता रहती है।
6. इस संगठन में अधिकारियों व आदेशों का प्रवाह ऊपर से नीचे की ओर होता है।

रेखा एवं कर्मचारी संगठन के लाभ (Advantages of line and Staff Organistion) :

1. इस संगठन में श्रम विभाजन व विशिष्टीकरण के लाभ प्राप्त हो जाते हैं।
2. विशेषज्ञों की सलाहों से सुविचारित निर्णय लिए जा सकते हैं।
3. यह प्रारूप संगठन में प्रबन्धकीय योग्यताओं का विकास करता है।

4. इसमें आदेशों की एकता बनी रहती है क्योंकि विशेषज्ञ परामर्श देने की स्थिति में होते हैं।
5. इसमें अच्छे व सुविचारित निर्णय लिये जा सकते हैं।

रेखा एवं कर्मचारी संगठन की हानियाँ (Disadvantages of Line and Staff Organisation) :

1. उच्च अधिकारी व विशेषज्ञों में मतभेद की अधिक सम्भावनाएँ।
2. यह विधि काफी खर्चीली है।
3. इसमें एक अधिकारी अपने दायित्वों को दूसरे पर डाल सकता है।
4. निर्णय में विलम्ब रहता है।

उपयुक्तता (Suitability) :

1. मध्यम व बड़े आकार के उपक्रम के लिए।
2. प्रतिस्पर्द्धी उपक्रम के लिए, एवं
3. जहाँ अधिकारी पारस्परिक मतभेद की अपेक्षा सहयोग से कार्य कर सकें।

3. **क्रियात्मक संगठन (Functional Organisation) –** यह संगठन का वह प्रारूप है जिसके अर्न्तगत क्रियाओं के लिए भिन्न-भिन्न विशेषज्ञ अधिकारियों को उसके विषय-क्षेत्र के सम्बन्ध में निर्णय लेकर उन्हें क्रियान्विति करने हेतु आदेश प्रसारित करने के अधिकार रेखा अधिकारियों की भाँति होते हैं। रेखा संगठन से इस प्रारूप की प्रमुख भिन्नता यह है कि रेखा अधिकारी को उसके अधीनस्थों के समस्त कार्यो पर निर्णय लेने का अधिकार होता है क्योंकि उसकी कोई विशेषता नहीं होती। क्रियात्मक संगठन में प्रत्येक अधिकारी वही निर्णय ले सकता हैं जो उसके विषय-क्षेत्र या विशेषज्ञता के अर्न्तगत आते हैं। इस प्रारूप में एक ही अधिनस्थ को उसके भिन्न-भिन्न प्रकार के कार्यो के सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न अधिकारियों से आदेश प्राप्त होते हैं। परिणामस्वरूप आदेशों का प्रवाह सीधी रेखा या सीधे सोपानिक क्रम में नही वरन् तिरछे सोपानिक श्र खंला में होता है।

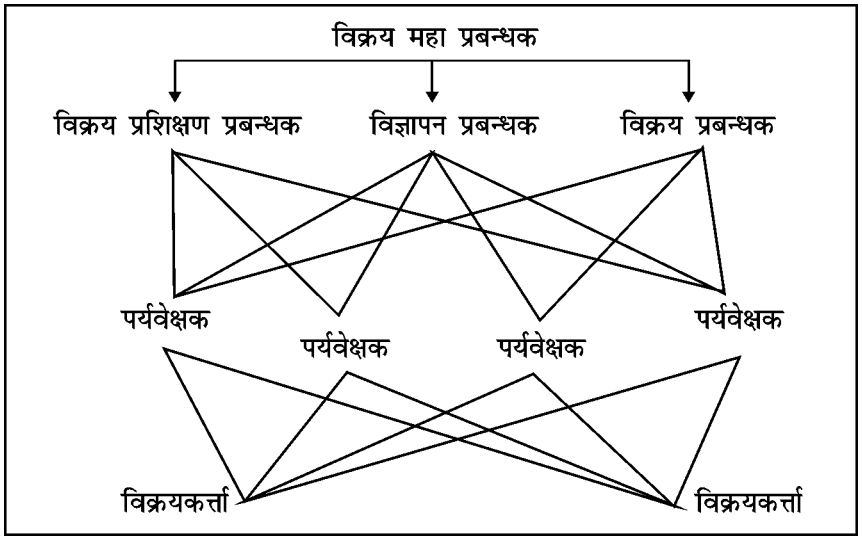

उपरोक्त चित्र में महा प्रबन्धक के अधीन प थक्-प थक् कार्यो के लिए विशिष्ट विशेषज्ञों को प्रबन्धकों के रूप में नियुक्त किया जाता हैं। इनमें से प्रत्येक कर्मचारी प्रबन्धक इसके प्रत्येक अधीनस्थ अधिकारी को उन कार्यो के सम्बन्ध में आदेश दे सकता है जो उस विशेषज्ञ के विशिष्ट विषय क्षेत्र से संबधित हों। इस तरह प्रत्येक अधिकारी सभी अधीनस्थों को आदेश देने की स्थिति में होता है जिससे आदेशों का प्रवाह तिरछे सोपानिक क्रम में होता है।

4. **समिति संगठन (Committee Organisation)** – इस संगठन में विक्रय योजना का कार्य एक समिति को सौंप दिया जाता है। विक्रय योजना को सुचारू रूप से चलाने के लिए कार्य विक्रय प्रबन्धक के निर्देशन में सहायक विक्रय प्रबंधक, क्षेत्रीय विक्रय प्रबन्धक, क्षेत्रीय विक्रय निरिक्षक, शाखा प्रबन्धक एंव विक्रेताओं के प्रयासों से क्रियान्वित किया जाता है। विक्रय प्रबन्धक भी समिति का सदस्य होता है। समिति में विशेषज्ञों को भी शामिल किया जाता है एवं समिति में समस्त निर्णय बहुमत के आधार पर लिये जाते हैं। इस समिति की सहायता के लिए छोटी-छोटी उप-समितियाँ भी गठित की जाती हैं।

समिति विक्रय संगठन के लक्षण या विशेषताएं (Characteristics or Features of Committee Organisation) :

(1) इसमें एक विक्रय समिति होती है।

(2) इस समिति में विभिन्न विभागों के प्रबन्धक होते हैं।

(3) समिति का कार्य विक्रय नियोजन एंव विक्रय नीति निर्धारण है।

(4) समिति समय-समय पर अपनी बैठकों में निर्णय लेती है।

(5) यह समिति आवश्यकतानुसार विभिन्न उपसमिति भी बना सकती है।

(6) इन समितियों में विशेषज्ञों को भी सम्मिलित किया जाता है।

(7) इसमें नीतियों एवं कार्यक्रमों को कार्य रूप में परिणित करने का उत्तरदायित्व विभागों के प्रबन्धकों का होता है।

समिति विक्रय संगठन के लाभ (Advantages of Committee Organisation) :

(1) इसके निर्णय अपेक्षाक त **तर्कपूर्ण** एंव **न्यायसंगत** होते हैं।

(2) इसमें सभी विभागों के प्रबन्धक होते हैं अतः **नीतियों को कार्यरूप में परिणित करने में कठिनाई नहीं** होती है।

(3) इस प्रकार के संगठन में सभी विभागों से **पूर्ण सहयोग** मिलता है।

(4) इस प्रणाली में **नवीन विचारों को प्रोत्साहन** दिया जाता है।

(5) समिति के **निर्णय भेदभाव रहित** होते हैं।

(6) यह ढ़ंग बड़े **व्यवसायों के लिए अति उत्तम** है।

(7) इसमें **विशिष्ट ज्ञान का लाभ** मिल जाता है।

(8) सभी विभागों के अध्यक्ष उपस्थित होने के कारण **निर्णय शीघ्रता से लिये जा सकते हैं।**

(9) इस प्रारूप में **सन्देशवाहन सरल** होता है।

(10) यह प्रणाली **लोक तान्त्रिक व्यवस्था पर आधारित है।**

समिति विक्रय संगठन के दोष (Disadvantages of Committee Organisation) :

(1) यह प्रारूप **छोटे व्यवसायों के लिए उपयुक्त** नहीं है।

(2) समिति के निर्णयों के लिए **किसी एक को उत्तरदायी नहीं** बनाया जा सकता है।

(3) इसमें **निर्णय गुप्त नहीं** रह सकते हैं।

(4) समिति के निर्णय के लिए महत्वपूर्ण निर्णय टाल दिए जाते हैं जिससे **निर्णय में देरी** होती है।

(5) समिति के निर्णय में साधारणतया आपसी समझ से निर्णय होता है।

(6) समिति में **राजनिति आने का भय** बना रहता है।

(7) यह अपेक्षाक त **अधिक खर्चीला एवं समय बर्बाद करने वाला** संगठन हैं।

(8) इसमें अल्पमत के साथ **उचित व्यवहार ना होने की सम्भावनाएँ** अधिक रहती है।

(9) अधिक तेज बोलने वाले सदस्य इन समितियों में अपनी धाक जमा लेते हैं और समिति के **निर्णयों को अनुचित रूप से प्रभावित** करते हैं।

विक्रय संगठन के कार्य

(Functions of a Sales Organization)

यदि व्यवसाय छोटे आकार का होता है तो विक्रय संगठन के कार्य भी कम होते हैं। जबकि बड़े आकार के व्यवसाय के कार्य भी अधिक होते हैं। यदि बेची जाने वाली वस्तु का बाजार विस्त त है तो विक्रय संगठन के कार्य भी अधिक होते हैं। संक्षेप में, विक्रय संगठन के कार्यो को निम्न तीन भागों में बाटां जा सकता है :

1. प्रशासनिक कार्य (Administrative Functions)
2. परिचालन कार्य (Operative Functions)
3. स्टॉफ कार्य (Staff Functions)

बड़ी व्यावसायिक संस्थाओं में उपर्युक्त तीन कार्यो के लिए तीन अलग-अलग प्रबन्धक या अधिकारी नियुक्त किए जाते है। छोटी संस्थाओं में यह तीनों कार्य एक ही प्रबन्धक या अधिकारी के द्वारा सम्पादित किये जाते हैं। कभी-कभी कुछ कार्य इस प्रकार के होते हैं जिनको उपर्युक्त वर्गीकरण के अनुसार एक दूसरे से बिल्कुल अलग नहीं किया जा सकता है। वहाँ यह कार्य तीनों के ही द्वारा किए जाते हैं।

1. **प्रशासनिक कार्यमय (Administrative Functions) :** विक्रय संगठन का प्रमुख कार्य व्यवसाय की विक्रय नितियों का निर्धारण करना एंव कर्मचारियों का उत्तरदायित्व तय करना है। इन कार्यो के अतिरिक्त विभिन्न विभागों में समन्वय स्थापित करना, कार्य-मूल्यांकन करना एवं लागत को नियंत्रित करना भी है। यदि इन कार्यो का विस्त त विश्लेषण किया जाये तो हम पाते हैं कि अधिकार का हस्तांतरण, बजटों की स्वीक ति, नये बाजारों की खोज, वस्तु का विकास, नीतियों की व्याख्या, प्रतियोगिता का विश्लेषण, डीलर संबंध आदि इसमें सम्मिलित होते हैं।

   कुछ विद्वान प्रशासनिक कार्य में निम्न चार प्रकार के कार्यो को शामिल करते हैं :

   (i) **उत्पादन नियोजन** में विक्रय के अनुकुल उत्पादन मात्रा का निर्धारण, उत्पादन किस्म में उपभोक्ता की रूचि के अनुरूप परिवर्तन व नवीन वस्तु का बाजार में प्रस्तुत करना शामिल होता है।

   (ii) **सामान्य नियोजन** में विक्रय कार्यालय की स्थापना, विक्रयकर्ता का चुनाव, गोदामों की स्थापना, विज्ञापन नियोजन, उपभोक्ता अनुसंधान, उत्पादन अनुसंधान, विपणन अनुसंधान व सांख्यिकीय आंकड़ों का संकलन, सारणीयन विश्लेषण आता है।

   (iii) **पूंजी नियोजन** में बजट नियंत्रण, उधार नियंत्रण व उधार वसूली आदि को शामिल किया जाता है।

   (iv) **प्रशासनिक नियोजन** में वे सभी कार्य आते हैं जिनके माध्यम से विक्रय विभाग पर नियंत्रण रखा जाता है।

(2) परिचालन कार्य – ऐसे कार्य विक्रय प्रबन्धकों के द्वारा किये जाते हैं। फील्ड में कार्य क्षेत्रीय विक्रय प्रबन्धक, प्रान्तीय विक्रय प्रबन्धक, जिला विक्रय प्रबन्धक, शाखा विक्रय प्रबन्धक एवं निरीक्षको के द्वारा किये जाते हैं। ऐसे कार्यों में विक्रयकर्ता की नियुक्ति एवं प्रशिक्षण, स्थानान्तरण एवं उनका निरीक्षण शामिल है। इनके कार्यों में विक्रय बैठकें,

विक्रय क्षेत्रों का बंटवारा, विज्ञापन एवं विक्रय में समन्वय, निरीक्षण सेवाऐं, विक्रयकर्ताओं के तबादले एवं उनकी पदोन्नति तथा प्रशासन की नीतियों, नियंत्रण, वस्तु एवं विधि, आदि में परिवर्तन करने के लिये सलाह देना भी शामिल हैं।

परिचालन कार्यों के अन्तर्गत ही (i) विक्रय एजेन्सियों की स्थापना, प्रतियोगी संस्थाओं की वस्तु का अध्ययन, (ii) गोदामों की व्यवस्था, उचित पैकिंग, परिवहन व्यवस्था, (iii) विज्ञापन एजेन्सी का चुनाव, विज्ञापन साधन का चुनाव, विक्रय प्रवर्तन कार्यक्रम बनाना व लागू करना एवं (iv) साधन शिकायतों पर ध्यान देना, आदि शामिल होते हैं।

(3) स्टॉफ कार्य - इसके अन्तर्गत प्रशासन एवं फील्ड में कार्य कर रहे विक्रयकर्ता को उचित सलाह दी जाती है। यह सलाह बाजार विश्लेषण, बाजार अनुसंधान एवं वितरण अध्ययन के आधार पर दी जाती है। एक अच्छे विक्रय विभाग में विपणन अनुसंधान, विज्ञापन एवं विक्रय-संवर्द्धन, विक्रय नियोजन, विक्रय विश्लेषण, डीलर सम्बन्ध, विक्रय पत्र-व्यवहार एवं वस्तु का विकास, आदि कार्य किये जाते हैं।

विक्रय संगठन संरचना को निर्धारित करने वाले घटक

(Factors Determining The Structure of Sales Organisations)

विक्रय संगठन की रचना कुछ सिद्धांतों एवं नियमों पर आधारित होती है। प्रत्येक व्यवसाय की आक ति, आर्थिक स्थिति, व्यवसायिक परम्परा, क्रेता, देश की आर्थिक व सामाजिक एवं वैधानिक परिस्थितियों पर आधारित है जो समय-समय पर बदलती रहती है।

बी.आर. केनफील्ड के अनुसार संगठन की संरचना को निर्धारित करने वाले छः घटक होते है- (1) विक्रय की जाने वाली वस्तुयें। (2) प्रबन्धकों की योग्यताऐं (3) कम्पनी का आकार (4) वितरण की विधियाँ (5) कम्पनी की वित्तीय स्थिति व (6) कम्पनी की विक्रय नीतियाँ।

लेकिन **एल0के0जाहन्सन** ने अपनी पुस्तक Sales and Marketing Managerment में संगठन की संरचना को निर्धारित करने वाले बारह घटक बतायें है- (1) व्यवसाय की प्रक ति। (2) व्यवसाय का आकार। (3) व्यवसाय की वस्तुओं की विविधता। (4) व्यवसाय बाजारों के प्रकारों की विविधता। (5) विक्रय नीतियाँ। (6) वितरण नीतियाँ। (7) प्रतिस्पर्धा। (8) कर्मचारियों की योग्यतायें एवं शक्तियाँ। (9) वित्तीय साधन। (10) प्रबन्धकों की विचारधारा (11) राजनीति एवं (12) परम्पराऐं।

इस प्रकार एक विक्रय संगठन की संरचना को निम्न घटक प्रभावित करते हैं :

(1) **परम्पराऐं एवं प्रथाऐं** – किसी विक्रय संगठन की संरचना उस व्यवसाय की परम्पराओं एवं प्रथाओं पर मुख्य रूप से आधारित रहती है। यदि कोई व्यवसाय आज स्थापित किया जाता है तो व्यवसाय को स्थापित करने वाला वैसा ही विक्रय-संगठन अपना भी बना लेता है जैसा कि अन्य पुराने व्यवसायों का है। इस प्रकार के विक्रय-संगठन को अपनाने का कारण नये प्रयोग (Experiment) की निश्चितता से दूर रहना है। उदाहरण के लिये, यदि अलीगढ़ में ताले बनाने का कोई नया कारखाना खोलता है तो कारखाने का मालिक उसी प्रकार का विक्रय संगठन अपना लेता है जैसा कि आजकल अलीगढ़ में पाया जाता है।

(2) **प्रबन्ध की संगठन नीति** – प्रत्येक संस्था का प्रबन्ध अपनी स्वयं की विक्रय संगठन नीति निर्धारित करता है और फिर उसी के अनुसार कार्य करता है। यदि विक्रय संगठन की नीति केन्द्रीयकरण की है तो विक्री सम्बन्धी समस्त क्रियाओं के लिये एक केन्द्रीय संगठन बनाया जायेगा जिससे नीतियों सम्बन्धी निर्णय केन्द्रीय कार्यालय द्वारा लिया

जा सके व अन्य अधिनस्थ कार्यालयों पर नियंत्रण रखा जा सके। इसके विपरीत, यदि केन्द्रीयकरण की नीति नहीं अपनायी जाती है तो शाखा कार्यलयों पर कार्य का दबाव बढ़ जायेगा और वे अपने निर्णय लेने में स्वतंत्र रहेंगे। इस प्रकार प्रबन्ध की संगठन नीति से भी विक्रय संगठन प्रभावित होता है।

(3) **वस्तु का स्वभाव** – यदि वस्तु औद्योगिक उपयोग की है तो उसके क्रेताओं की संख्या भी कम होने के कारण उसका विक्रय संगठन भी छोटा होगा। इसी प्रकार यदि वस्तु सामान्य उपयोग की है तो उसके क्रेताओं की संख्या अधिक होगी। अतः विक्रय संगठन भी बड़ा होगा। यदि वस्तु शीघ्र नाशवान् है तो ऐसा विक्रय संगठन चाहिए जो उत्पादन को तुरन्त उपभोक्ता तक पहुंचा सके। यदि क्रेता भिन्न-भिन्न स्थानों पर फैले हुए हैं तो विक्रय संगठन भी बड़ा होगा।

(4) **प्रबन्ध की वित्तीय स्थिति** - किसी उपक्रम की वित्तीय स्थिति उसके विक्रय संगठन की संरचना को प्रभावित करती है। उदाहरण के लिए, जिस उपक्रम के वित्तीय साधन कम हैं वह अपना विक्रय संगठन बड़ा नहीं बना सकेगा और उसको मध्यस्थों की सहायता से माल को बेचना होगा। इसके विपरीत यदि उसके वित्तीय साधन काफी हैं तो वह अपना निजी विक्रय-संगठन बना सकता है।

(5) **इकाई का आकार** - विक्रय संगठन की संरचना इकाई के आकार पर भी आधारित होती हैं क्योंकि बड़ी इकाईयों का उत्पादन बड़ी मात्रा में होने के कारण अधिक बिक्री की आवश्यकता है और इसके लिये बड़े आकार का विक्रय संगठन बनाना अनिवार्य होता है। यदि आकार छोटा होता है तो विक्रय संगठन की संरचना भी उसी प्रकार से छोटी ही होती है।

(6) **विपणन क्षेत्र** - यदि विपणन क्षेत्र स्थानीय हैं तो छोटे विक्रय संगठन की संरचना होगी। इसके विपरीत यदि विपणन क्षेत्र, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय है तो विक्रय संगठन क्रमशः बढ़ता हुआ चला जायेगा।

(7) **वस्तु का मूल्य** - वस्तु का मूल्य भी उसके विक्रय संगठन की संरचना को प्रभावित करता है। यदि वस्तु ऊंचे मूल्य की है जैसे मोटर कार, रेफ्रीजिरेटर, तो उसके विक्रय के लिए अपेक्षाक त एक छोटे विक्रय संगठन की आवश्यकता होगी। इसका कारण यह है कि उसका विक्रय क्षेत्र सीमित होगा।

(8) **विक्रय नीति** - यदि विक्रय नीति किसी एक प्रतिनिधि (Agent) के माध्यम से बेचने की है तो विक्रय संगठन छोटा होगा। भारत में कुछ ऐसी भी मिलें हैं जो अपनी दुकानों के माध्यम से ही अपने उत्पाद को बेचती हैं; जैसे, टाटा ग्रुप के मिल, मफतलाल ग्रुप के मिल, आदि। ऐसी मिलों का विक्रय संगठन बड़ा होता है :

(9) **वस्तुओं की संख्या एवं मात्रा** - यदि किसी संस्था द्वारा उत्पादित वस्तुओं की संख्या एवं मात्रा बहुत अधिक है तो ऐसी संस्था को अपना विक्रय संगठन बड़ा बनाना होगा। वस्तुओं की संख्या एवं मात्रा सीमित या कम है तो छोटा विक्रय संगठन ही उपयुक्त होगा।

(10) **प्रतिस्पर्धा** – यदि प्रतिस्पर्धा नहीं है या कम मात्रा में है तो छोटा विक्रय संगठन बनाकर काम चला सकते हैं। लेकिन जब प्रतिस्पर्धा तीव्र होती है तो विक्रय संगठन का भी बड़ा होना आवश्यक है।

(11) **कर्मचारियों की उपलब्धता** - यदि व्यवसाय के पास अपनी आवश्यकता के अनुसार प्रशिक्षित कर्मचारी हैं तो विक्रय संगठन बनाया जा सकता है, और यदि प्रशिक्षित कर्मचारियों का अभाव है तो संगठन आकार छोटा रखना होगा।

(12) **प्रबन्धकों की योग्यताएँ एवं क्षमताएँ** - यदि अधिकारी योग्य एवं सक्षम हैं तो वे रेखा संगठन का निर्माण कर सकते हैं और सभी निर्णय स्वयं ले सकते हैं। उन्हें विशेषज्ञों की सेवाओं की आवश्यकता नहीं होती। इसके विपरीत

यदि उनमें उच्च किस्म की योग्यताओं की कमी है तो रेखा संगठन के स्थान पर अन्य कार्य संगठन बनाना होगा जिसमें कार्यों को पूरा करने एवं निर्णयों के लेने के लिए सहायकों की सेवाएं लेनी होगी।

विक्रय विभाग के संगठन का महत्त्व या आवश्यकता या लाभ

(Importance or Necessity or Advantages of Sales Organisation)

व्यवसाय को बनाये रखने के लिए व्यवस्थित बिक्री परम आवश्यक है जिसको एक विक्रय संगठन के माध्यम से ही बनाये रखा जा सकता है। एक अच्छे विक्रय संगठन की स्थापना से निम्न लाभ मिलते हैं। इन्हीं लाभों को अच्छे विक्रय संगठन के महत्त्व या आवश्यकता के लिए भी बताया जा सकता है :

(1) **उपक्रम की कार्यकुशलता में व द्धि** - एक अच्छे एवं प्रभावी विक्रय संगठन से सम्पूर्ण उपक्रम में गतिशीलता आ जाती है जिससे उपक्रम की कार्यकुशलता में व द्धि हो जाती है। विक्रयकर्त्ता, विक्रेता प्रतिनिधि, आदि सभी अपना-अपना कार्य कुशलता से करने लगते हैं। विभागीय प्रबन्धक भी उत्साह एवं योग्यता के साथ कार्य करने लगते हैं।

(2) **विशिष्टीकरण को प्रोत्साहन** - एक प्रभावी विक्रय संगठन के अन्तर्गत व्यवसाय में विभिन्न प्रकार के विशेषज्ञों की नियुक्ति की जाती है। इससे विशिष्टीकरण को प्रोत्साहन मिलता है।

(3) **समन्वय में सुविधा** - एक अच्छे विक्रय संगठन से एक लाभ यह मिलता है कि संगठन की सभी क्रियाओं में समन्वय करने में सुविधा रहती है तथा विभागों, उपविभागों, कर्मचारियों, अधिकारियों, आदि के मध्य उचित समन्वय स्थापित किया जा सकता है।

(4) **नियन्त्रण में सुविधा** - प्रभावी विक्रय संगठन में प्रत्येक अधिकारी, विक्रयकर्ता, विक्रेता प्रतिनिधि, आदि के कार्यक्षेत्र उनकी योग्यता के अनुसार पहले से ही निश्चित कर दिये जाते हैं तथा उन्हें स्पष्ट रूप से बता दिया जाता है कि उनके कर्त्तव्य एवं दायित्व क्या हैं तथा उनको किस अधिकारी के आदेशों का पालन करना है। इससे उनको नियन्त्रण में रखने में सुविधा होती है।

(5) **अधिकार प्रत्यायोजन में सुविधा** - एक अच्छे विक्रय संगठन में यह पहले से ही बता दिया जाता है कि कौन अधिकारी किस अधिकारी के प्रति उत्तरदायी है। इससे जब कभी भी कोई अधिकारी छुट्टी पर जाता है तो वह अपने अधिकारों को आसानी से दूसरे को दे सकता है। इससे संस्था के कार्य बिना बाधा के चलते रहते हैं।

(6) **विकास एवं उन्नति को बढ़ावा** - एक अच्छे विक्रय संगठन में विक्रय व द्धि होती है। लाभों में भी व द्धि होती है। इससे नवीन विकास योजनाएं क्रियान्वित की जा सकती हैं। संस्था का विकास व विस्तार किया जा सकता हैं तथा लाभों में और व द्धि की जा सकती है।

(7) **मनोबल में व द्धि** - एक स्वस्थ विक्रय संगठन में अधिकारियों, कर्मचारियों, आदि के दायित्व एवं क्रिया-क्षेत्र निश्चित होने से उन्हें अपने अस्तित्व का ज्ञान हो जाता है जिससे उनके मनोबल में व द्धि होती है।

(8) **प्रशिक्षण कार्य में सुविधा** - एक अच्छा विक्रय संगठन कर्मचारियों, विक्रयकर्त्ताओं व अधिकारियों के प्रशिक्षण की व्यवस्था करता है जिससे उनकी कार्य-कुशलता बढ़ती है तथा लाभों में व द्धि होती है।

(9) **भ्रष्टाचार की समाप्ति** - एक प्रभावी एवं स्वस्थ विक्रय संगठन कर्मचारियों व अधिकारियों को परिश्रमी, निष्ठावान एवं उच्च चरित्र वाला व्यक्ति बनाने में सहायता प्रदान करता है जिससे भ्रष्टाचार पनपने नहीं पाता तथा यदि कोई भ्रष्टाचार होता भी है तो उसके समाप्त करने में सहायता प्रदान करता है।

(10) अन्य लाभ - अच्छा विक्रय संगठन होने से (i) प्रतियोगिता से प्रभावी ढंग से निबटा जा सकता है। (ii) वस्तुओं का उचित वितरण किया जा सकता है (iii) विपणन अनुसन्धान करके उपभोक्ता की रूचि के अनुरूप उत्पादन किया जा सकता है। (iv) विक्रय कर्मचारियों की सेवा का अधिकतम उपयोग किया जा सकता है।

विक्रय संगठन का विक्रय विभाग की संगठन संरचना

(Structure of Sales Department or Sales Organisation)

विक्रय संगठन संरचना का विवेचन निम्नलिखित तीन शीर्षकों के अधीन किया जा सकता है :

(I) **विक्रय संगठन का विभागीकरण** - विक्रय संगठन या विभाग का पुनः विभागीकरण कई आधारों पर किया जा सकता है। यही नहीं वरन् एक ही उपक्रम के भिन्न-भिन्न स्तरों पर विभागीकरण भिन्न-भिन्न आधार पर किया जा सकता हैं कभी-कभी एक ही स्तर पर विविध विभागों का उप-विभागीकरण भी भिन्न आधारों पर किया जा सकता है। विक्रय संगठन के विभागीकरण के प्रमुख आधार निम्नलिखित हैं :

(1) कार्यों के आधार पर (2) वस्तुओं अथवा उत्पाद के आधार पर (3) क्षेत्रीय आधार पर (4) ग्राहकों के आधार पर (5) संयुक्त आधार पर (6) आव्यूह विभागीकरण।

(I) **कार्यों के आधार पर (On the Basis of Functions) –** इसके अन्तर्गत क्रियाओं के आधार पर विक्रय संगठन का विभागीकरण किया जाता है जैसे - विज्ञापन एवं विक्रय संवर्द्धन विभाग, बाजार विश्लेषण विभाग, विक्रय नियोजन विभाग आदि। इस प्रकार के विक्रय संगठन में क्रियात्मक विशिष्टीकरण का लाभ मिलता है। विक्रय क्रियाओं को विभिन्न विभागों के अन्तर्गत विभाजित करके प्रत्येक विभाग का अलग-अलग प्रबन्धक नियुक्त कर दिया जाता है। विक्रय संगठन के विभागीकरण को निम्न चार्ट द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है :

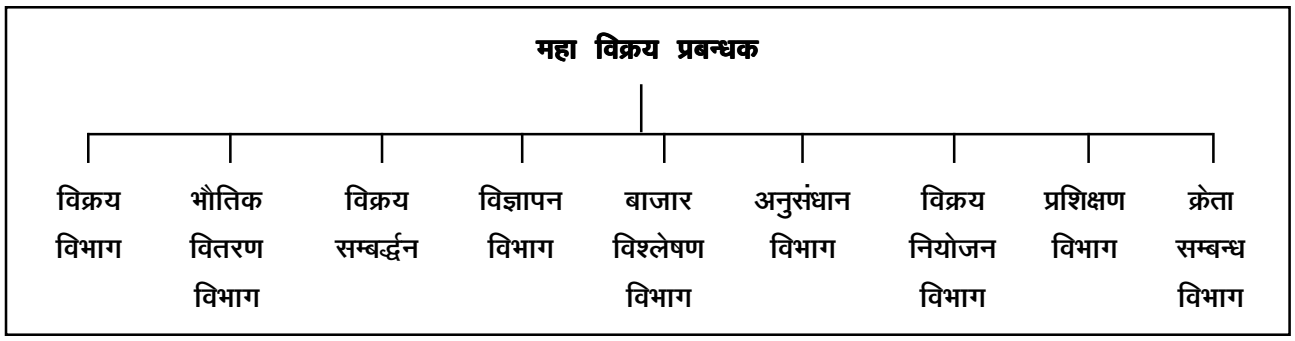

लाभ :

1. इससे क्रियात्मक विशिष्टीकरण के सभी लाभ प्राप्त होते हैं।
2. निर्णय शीघ्रता से होने के कारण तथा क्रियान्वयन भी शीघ्रता से हो जाते हैं।
3. पर्याप्त लचीलेपन के कारण विभागों की संख्या उपक्रम की आवश्यकतानुसार निर्धारित की जा सकती है।
4. समान क्रियाओं को एक ही विभाग के अन्तर्गत रखा जाता है।
5. आदेश देने वाला तथा कार्य करने वाला दोनों के एक स्थान पर होने के कारण आदेश में एकता बनी रहती है।
6. सभी विभागों में सहयोग का विकास होता है क्योंकि सबका लक्ष्य संयुक्त होता है। जबकि उत्पादानुसार या क्षेत्रानुसार विभागीकरण में अवांछित उत्पन्न प्रतिस्पर्धा हो सकती है।

7. अपव्यय पर नियन्त्रण स्थापित होता है और मितव्ययिता रहती है।
8. विक्रय, विज्ञापन आदि क्रियाओं में दक्षता विकसित होती है।
9. कार्य अधिकतम कुशलता के साथ सम्पन्न होते है क्योंकि विभाग में कार्य विशेषज्ञ होते हैं।

दोष :

1. विभिन्न विभागों की क्रियाओं में समन्वय स्थापित करने में कठिनाई आती है।
2. इस प्रणाली में उत्पादानुसार या क्षेत्रानुसार विशिष्टीकरण नहीं विकसित होता।
3. परिणामों के लिये सामूहिक उत्तरदायित्व ही निश्चित किया जा सकता है वैयक्तिक नहीं। जिससे प्रतिकूल परिणामों की दशा में उत्तरदायित्व निश्चित करना कठिन हो जाता है।
4. कभी-कभी विभिन्न विभाग अन्य विभागों के अच्छे सुझावों को भी नकार देते हैं।
5. वैयक्तिक निष्पादन मूल्यांकन में कठिनाई होती है।
6. विशेषज्ञों की अधिकता के कारण परिव्ययों में व द्धि होती है।
7. अन्तर्विभागीय निर्णयों में समन्वय की समस्या रहती है।

(2) **वस्तुओं अथवा उत्पाद के आधार पर (On the Basis of Product) –** जब किसी उपक्रम में विविध प्रकार की वस्तुओं श्रेणियों का उत्पादन/विक्रय किया जाता है और प्रत्येक वस्तु श्रेणी के विक्रय में विशिष्टतापूर्ण प्रयास किये जाते हैं तो विक्रय संगठन के अन्तर्गत अलग-अलग वस्तुओं या वस्तु के अलग-अलग समूहों के लिये अलग-अलग विभागों का गठन किया जाता है। सभी क्रियात्मक विशेषज्ञों को इन वस्तु विभागों के प्रभारियों के अधीन कार्य प्रदान किया जाता है। प्रत्येक वस्तु विभाग में सभी क्रियात्मक कार्यों के लिये क्रियात्मक कार्यों के लिये क्रियात्मक उपविभागों का गठन किया जा सकता है। इस प्रकार के विभागीकरण को निम्नांकित चित्र से स्पष्ट किया जा सकता है :

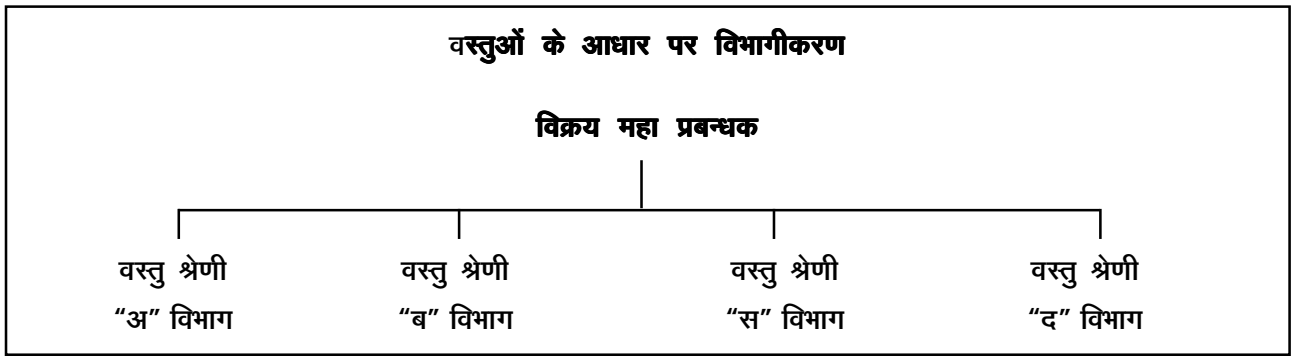

उदाहरणार्थ, यदि किसी उपक्रम द्वारा, फर्नीचर सौन्दर्य प्रसाधन व वस्त्रों का उत्पादन किया जाता है तो इन तीनों ही वस्तु श्रेणियों के लिये प थक्-प थक् विक्रय विभाग गठित किये जा सकते हैं जो निम्न चित्र में स्पष्ट किये गये हैं :

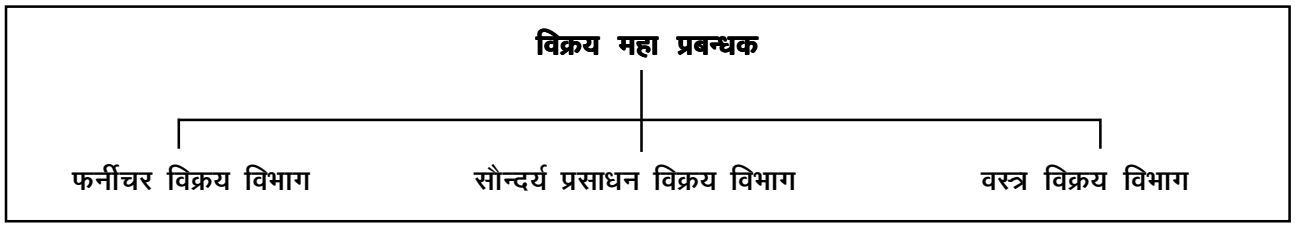

लाभ या गुण (Advantages or Merits)

वस्तुओं के आधार पर विभागीकरण के निम्नलिखित लाभ हैं :

1. इस प्रकार के विभागीकरण से विविध वस्तुओं या वस्तु श्रेणियों के विक्रय में विशिष्टीकरण को प्रोत्साहन मिलता है।
2. आदेशों में एकता के सिद्धान्त का पालन होता है। प्रत्येक वस्तु विभाग प्रभारी को समुचित स्वायत्तता होती है तथा सारे आदेश उसके द्वारा ही दिये जाते हैं। क्रियात्मक विशेषज्ञ भी उसके अधीन होते हैं अतएव कर्मचारियों को एक ही अधिकारी से आदेश प्राप्त होता है।
3. विक्रय संगठन में लोचशीलता विकसित होती है, जितने चाहे वस्तु विभाग बनाये जा सकते हैं।
4. प्रत्येक वस्तु विभाग के कार्य निष्पादन का मूल्यांकन उसके विक्रय स्तर से सुगमता से किया जा सकता है। न्यून परिणामों के लिये प्रत्येक विभाग की उत्तरदेयता का भी सुगमता से निर्धारण किया जा सकता है।
5. इस प्रकार के विभागीकरण में शीघ्र निर्णय सम्भव हैं, क्योंकि प्रत्येक वस्तु विभाग प्रभारी को अपने अपने कार्य क्षेत्र में निर्णय लेने की समुचित स्वतन्त्रता होती है जबकि क्रियात्मक विभाग द्वारा दूसरे क्रियात्मक विभागों से विचार-विमर्श के बाद निर्णय लेने होते हैं।
6. कार्यकुशलता में व द्धि।

अवगुण या दोष (Demerits or Disadvantages) :

इस प्रकार के विभागीकरण के निम्नलिखित दोष हैं :

1. **कार्यों का दोहराव** — सभी वस्तु विभागों में विज्ञापन, बाजार शोध, वितरण आदि कार्यों का दोहराव होता है।
2. **अन्तर्विभागीय समन्वय में कठिनाई** — प्रत्येक वस्तु विभाग स्वतन्त्र-रूप से कार्य करता है, इसलिए इनके बीच समन्वय स्थापित करने में कठिनाई आती है।
3. **समरूपता का अभाव** — प थक्-प थक् वस्तु विभागों के गठन से विविध वस्तुओं के विक्रय हेतु गठित विभागों की नीतियों व कार्यवाहियों में समरूपता का अभाव उत्पन्न हो जाता है।
4. **मितव्ययिता का अभाव** - कार्यो के दोहराव के कारण परिव्ययों में व द्धि होती है।
5. छोटे उपक्रमों के लिए अनुपयुक्त है।
6. वस्तु विभागों में अवांछित प्रतिस्पर्द्धा की सम्भावना रहती है।
7. क्रियात्मक विशिष्टीकरण का अभाव पाया जाता है।

(3) **क्षेत्रीय आधार पर (On the basis of Region)** — जब संस्था के विक्रय क्षेत्र में भौगोलिक द ष्टि से काफी व द्धि हो जाती है अर्थात् व्यवसाय द्वारा उत्पन्न वस्तुओं की मांग राष्ट्रीय व अर्न्तराष्ट्रीय होने लगती है और मांग में क्षेत्रीय गहनता भी आ जाती है तो विक्रय संगठन को क्षेत्र के आधार पर विभाजित कर दिया जाता है। इसके साथ ही यदि कार्य और बढ़ जाता है तो प्रत्येक क्षेत्र को उप-क्षेत्रों में भी विभाजित कर दिया जाता है।

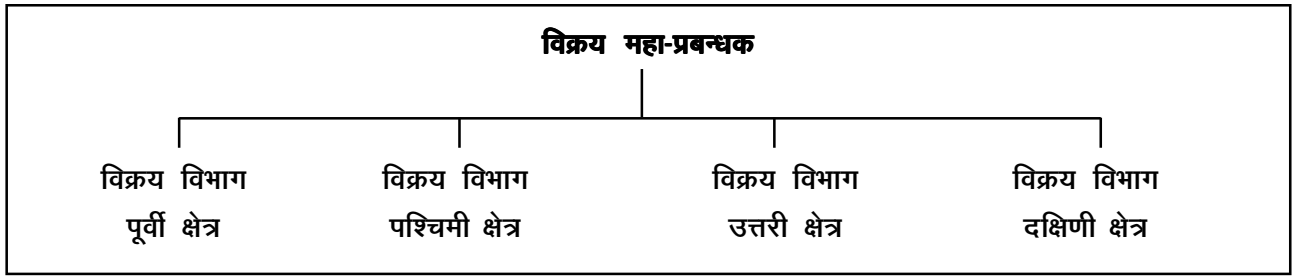

अक्सर कभी-कभी क्रियात्मक विभागों का प थक् गठन कर लिया जाता है। लेकिन यह फिर मिश्रित विभागीकरण हो जाता है। यह निम्न स्वरूप में हो सकता है :

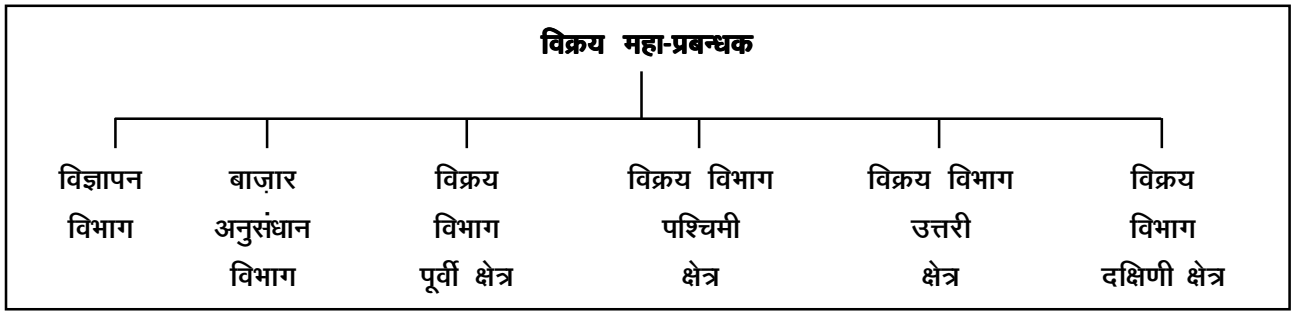

विशुद्ध क्षेत्रानुसार विभागीकरण के प्रमुख गुण दोष निम्नलिखित है :

1. स्थानीय विक्रयकर्ताओं की नियुक्ति करके विक्रय में व द्धि।
2. स्थानीय प्रतिस्पर्द्धा पर सरलता से विजय।
3. स्थानीय समस्याओं का तत्काल हल।
4. ग्राहकों की उचित प्रकार से सेवा सम्भव।
5. सभी क्षेत्रों में विक्रय व द्धि पर समुचित बल।
6. क्षेत्रानुसार विक्रय विशिष्टीकरण।
7. शीघ्र निर्णय।
8. क्षेत्रीय कार्य निष्पादन मूल्यांकन में सुविधा।
9. क्षेत्रीय समन्वय में सुविधा।

दोष (Disadvantage) :

1. अत्यधिक खर्चीली प्रणाली।
2. कार्यों में दोहराव।
3. क्रियात्मक विशिष्टीकरण का अभाव।
4. समन्वय करने में कठिनाई।
5. छोटे उपक्रमों के लिए अनुपयुक्त।

4. **ग्राहकों के आधार पर विभागीकरण (Departmentalisation Based on Customers) —** ग्राहकों के आधार पर भी विक्रय संगठन का विभागीकरण किया जा सकता है, जैसे - उपभोक्ताओं को विक्रय के लिए प थक् विभाग बनाया जा सकता है, औद्योगिक क्रेताओं के लिए एक प थक् विभाग बनाया जा सकता है, संस्थागत क्रेताओं व राजकीय क्रेताओं के लिए भी अलग-अलग विभाग बनाए जा सकते हैं। इस प्रकार यदि ग्राहक थोक व्यापारी या फुटकर व्यापारी है तो उनके लिए भी वितरण श्र ख्लाओं के अनुसार विक्रय संगठन का विभागीकरण किया जा सकता है। इस विभागीकरण को निम्न तालिका द्वारा स्पष्ट किया गया है -

ग्राहकों के आधार पर विभागीकरण — उदाहरण के लिए एक टायर निर्माता टायरों का विक्रय वैयक्तिक वाहनधारियों को, वाहन निर्माताओं एवं परिवहन निगमों सभी को करता है, वह इनमें से प्रत्येक वर्ग उपभोक्ताओं, औद्योगिक क्रेताओं व संस्थागत क्रेताओं के लिए प थक्-प थक् विक्रय विभाग गठित कर सकता है।

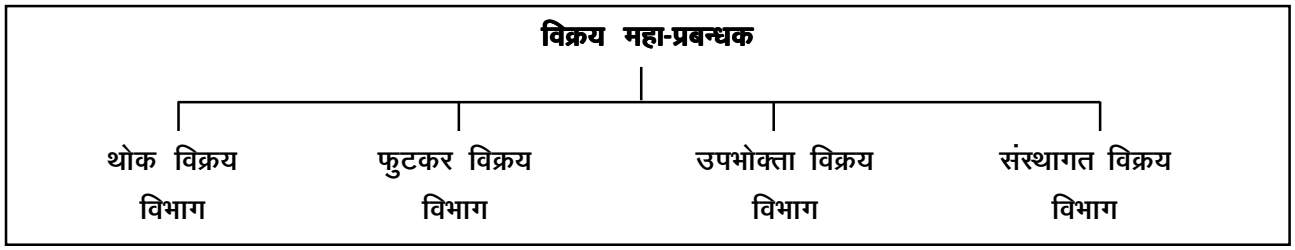

लाभ (Advantage) :

1. प्रत्येक प्रकार के ग्राहकों को आर्कषित करने व उन्हें पूर्ण सन्तुष्टि प्रदान करने के लिए यह विभागीकरण उपयुक्त है।
2. क्रेताओं के आधार पर विभागीकरण में तदनुसार विशिष्टीकरण का विकास होता है।
3. विविध क्रेता वर्गो के क्रय समंकों से प्रत्येक विभाग का निष्पादन मूल्यांकन भी सुगम हो जाता है।
4. यह बड़े आकार वाले उपक्रम के लिए श्रेष्ठ है।

दोष (Disadvantages) :

1. यह खर्चीली प्रणाली है। प्रत्येक विभाग में कई क्रियाओं का दोहराव होता है।
2. यह प्रणाली छोटे आकार वाले उपक्रम के लिए अनुपयुक्त है।
3. क्रियात्मक विशिष्टीकरण का अभाव होता है।
4. सभी भौगोलिक क्षेत्रों में प्रत्येक विभाग को स्वतन्त्र रूप से कार्य करना होता है जिससे परिवहन आदि परिव्यय बढ़ जाते हैं।

5. **सयुक्तं या मिश्रित आधार पर –** एक विशाल आकार वाले उपक्रम में जिसका विक्रय क्षेत्र अत्यधिक विस्त त होता है तथा विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का निर्माण होता है, उसमें संयुक्त आधार पर विक्रय संगठन संरचना की जा सकती है। इसकी स्थापना कार्य क्षेत्र तथा उत्पादन तीनों प्रकार के विक्रय संगठनों की विशेषताओं को मिलाकर की जाती है। विशिष्टीकरण की योजना विस्त त रूप में लागू की जाती है। इसमें भिन्न-भिन्न स्तरों पर या एक ही स्तर पर भिन्न-भिन्न विभागों का भिन्न-भिन्न आधार पर विभागीकरण किया जा सकता है। इसका एक प्रतिरूप नीचे चित्र में दर्शाया गया है :

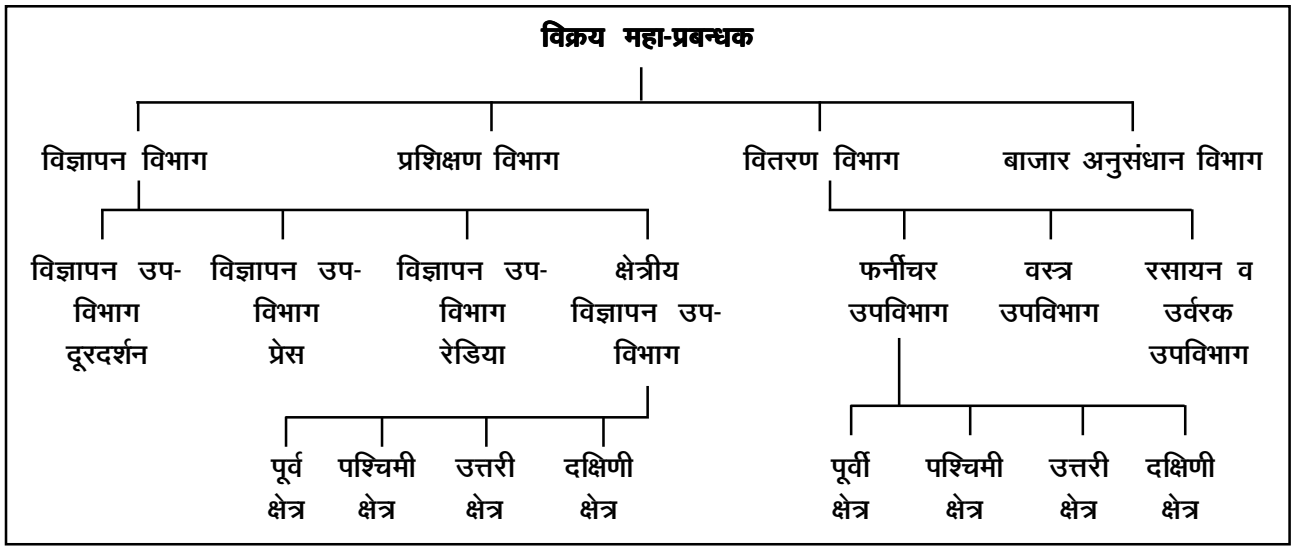

यहां पर शीर्ष स्तर पर क्रियात्मक विभागीकरण भी किया गया है उसके उपरान्त विज्ञापन विभाग का क्रियात्मक आधार पर वह उसका पुर्नविभाजन क्षेत्रानुसार है। जबकि वितरण विभाग का उपविभागीकरण वस्तुओं के आधार पर व तदुपरान्त क्षेत्रानुसार है। वस्तुतः व्यवहार में विशुद्ध विभागीकरण की अपेक्षा संयुक्त विभागीकरण ही अधिक प्रचलित है।

लाभ (Advantages) :

1. विशिष्टीकरण के सभी लाभ प्राप्त होते हैं।
2. उपर्युक्त चारों प्रकार के विभागीकरण के लाभ इसमें प्राप्त होते हैं।
3. श्रेष्ठ निर्णयों का लाभ प्राप्त होता है।

दोष (Disadvantages) :

1. छोटे आकार वाले उपक्रम के लिये यह सर्वथा अनुपयुक्त है।
2. विभिन्न विभागों के बीच समन्वय स्थापित करना कठिन हो जाता है।
3. संदेश-वाहन की समस्या उत्पन्न हो जाती है।
4. इसमें विशिष्टीकरण के दोष दिखाई देने लगते है।
5. निष्पादन व मूल्यांकन में कठिनाई आती है।
6. यह अत्यन्त खर्चीली पद्धति है।

6. **आव्यूह संगठन (Matrix Organisation)** – संगठन के प्रारूप में लोचशीलता की द ष्टि से बड़े बहुसयंत्रीय उपक्रमों में आव्यूह संगठन बहुत लोकप्रिय होता जा रहा है। इस प्रकार के संगठन में क्रियात्मक विशिष्टीकरण और रेखाधिकारियों की वैयक्तिक उत्तरदेयता का स्पष्ट निर्धारण सम्भव होता है। इस प्रकार के संगठन में सभी अधिकारियों व कर्मचारियों की मूल नियुक्ति क्रियात्मक विभागों जैसे विज्ञापन, विक्रय अनुसन्धान, वितरण, प्रशिक्षण विभागों में होती है लेकिन इन्हें संगठन के सारे कार्य रेखाधिकारियों के आधीन सम्पन्न करने होते है। सभी क्रियात्मक विभाग कार्यकारी प्रभारियों की आवश्यकता के अनुसार अपने-अपने विभाग से विशेषज्ञ अधिकारियों को प्रतिनियुक्ति पर भेज देते है तथा आवश्यकता न होने पर वापिस बुला लेते है और जिस किसी अन्य कार्यकारी विभाग में आवश्यकता हो उसमें भेज देते है। जब तक कर्मचारी अपने मूल क्रियात्मक विभाग में होता है तो अपने क्रियात्मक विशेषज्ञ के आधीन कार्य करता है तथा जब प्रतिनियुक्ति पर किसी कार्यकारी विभाग में होता है तो उस विभाग के रेखाधिकारी के आधीन कार्य करता है। इस प्रकार एक समय उसे एक ही अधिकारी से आदेश प्राप्त होते है।

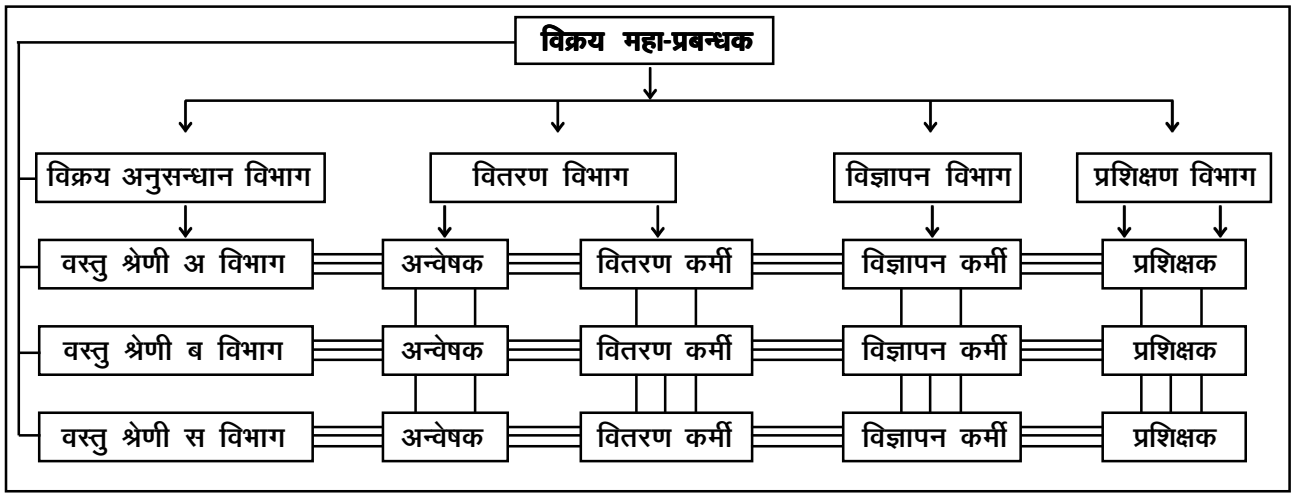

गुण (Merits) :

1. विशिष्टीकरण के लाभ।
2. पर्याप्त लोचशीलता व गत्यात्मकता।
3. कार्यभार का कर्मचारियों में सतत सन्तुलन।
4. स्पष्ट उत्तर देयता।
5. आदेश के एकता तथा क्रियात्मक विशिष्टीकरण के लाभ।
6. उच्चतम कार्यकुशलता।

दोष (Dismerits) :

इसका एक ही अवगुण है कि इस प्रकार का संगठन छोटे उपक्रमों के लिए अनुपयुक्त रहता है।

विक्रय विभाग का क्षेत्रीय संगठन

(Field Organisation of Sales Department)

किसी भी व्यवसायिक उपक्रम के विक्रय परिक्षेत्र में समुचित विस्तार के उपरान्त उसे भौगोलिक क्षेत्रानुसार भी विभागों का गठन करना पड़ता है। शीर्ष स्तर पर चाहे किसी भी आधार पर विभागीकरण कर लिया जाय लेकिन निम्नवर्ती स्तरों में कहीं न कहीं क्षेत्रानुसार विभागीकरण अपनाना ही पड़ता है। इस प्रकार विविध क्षेत्रों में समन्वित विक्रय प्रयासों के लिए विक्रय संगठन में जो क्षेत्रानुसार विभागों का गठन किया जाता है उसे ही विक्रय संगठन या विक्रय विभाग का क्षेत्रीय संगठन कहा जा सकता हैं।

क्षेत्रीय संगठन का अर्थ (Meaning of the Field Organisation) : स्टिल कंडिफ एवं गोवोनी के अनुसार, "क्षेत्रीय संगठन से आशय विक्रय विभाग के उन कर्मचारियों से निर्मित संगठन से है जो कि ग ह कार्यालय से दूर कार्य करते है।" ऐसे संगठन में भ्रमणशील विक्रयकर्त्ता, विक्रय प्रतिनिधि, क्षेत्रीय विक्रय पर्यवेक्षक, शाखा, संभागीय जिला व प्रान्तीय विक्रय प्रबन्धकों और उनके कार्यालयों में कार्य करने वाले कर्मचारी सम्मिलित किये जाते है। इनके अतिरिक्त विहित भौगोलिक क्षेत्रों में मरम्मत सेवाएं, विक्रय प्रचार एवं संवर्द्धन सेवाएं देनेवाले व्यक्ति भी क्षेत्रीय संगठन में सम्मिलित किये जाते है।

विक्रय विभाग का क्षेत्रीय संगठन व प्रमुख विक्रय अधिकारी के अधीन व मुख्यालय अधीन ही कार्य करता है। इन सबका मुख्यालय व क्षेत्रीय संगठन और इनकी संरचना का विवरण निम्नलिखित हैं :

1. **केवल मुख्य विक्रय कार्यालय युक्त संगठन (Sales Organisation with only Head Office) —** समग्र क्षेत्रीय विक्रय संगठन व उसके अधिकारियों, कर्मचारियों व विक्रयकर्त्ताओं को निर्देश देने, उनका निरीक्षण करने एवं उनके नियन्त्रण करने का अधिकार एवं उत्तरदायित्व मुख्य कार्यालय पर होता है। मध्यस्थ विक्रयकर्त्ताओं से सम्पर्क करने व उनके साथ सम्बन्ध बनाये रखने का दायित्व भी इसी कार्यालय का होता है। इसी के द्वारा विक्रयकर्त्ताओं का चुनाव व नियुक्ति की जाती है। विक्रयकर्त्ता भी अपने कार्य की प्रगति की सूचना इसी कार्यालय को देते है। समय-समय पर रिपोर्ट भी इसी कार्यालय के मुख्य अधिकारी को दी जाती है। एक छोटे विक्रयकर्त्ता व इस कार्यालय के बीच का कोई भी क्षेत्रीय या शाखा कार्यालय नहीं होता है। जबकि बड़े उपक्रम में शाखा व मंडल कार्यालय भी होते है।

   शाखा व मंडल कार्यालयों के न होने पर इसमें विक्रयकर्त्ताओं की क्रियाओं पर मुख्य कार्यालय का समुचित नियन्त्रण रखा जा सकता है और उनका सम्बन्ध प्रत्यक्ष रूप से संस्था के मुख्य अधिकारियों से होने के कारण वे अपने

को उस संगठन का महत्त्वपूर्ण अंग भी मानते है। साथ ही द्विमार्गी सम्प्रेषण भी बना रहता है जिससे बाजार सूचनाएं भी सहजता से प्राप्त होती रहती है। इस प्रकार यह संगठन निम्न प्रकार का होता है।

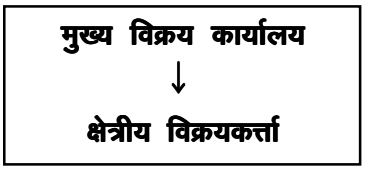

लेकिन जब उपक्रम का विक्रय क्षेत्र (Sales Area) बढ़ जाता है तो मुख्य कार्यालय संचालन में कठिनाई होती है। विक्रयकर्त्ता पर उचित नियन्त्रण नहीं हो पाता क्योंकि वे दूर दूर तक फैले रहते है। साथ ही उनको बार-बार इस कार्यालय तक आना पड़ता है जिसमें समय व उनका अपव्यय होता है। अतः विक्रयकर्त्ता व मुख्य कार्यालय के बीच शाखा कार्यालय व मंडलीय कार्यालय बनाने पड़ते है।

2. **शाखा कार्यालय युक्त संगठन (Branch Office Type Organisation) –** इसमें भिन्न भिन्न स्थानों पर शाखा कार्यालय (Branch Office) खोल दिये जाते है जिनका कार्य स्थानीय विक्रयकर्त्ताओं के कार्य का निरीक्षण एवं नियन्त्रण रखना है। यह शाखा कार्यालय दो प्रकार के होते है। एक तो वे जो अपने पास माल का स्टॉक नहीं रखते और जहां से विक्रयकर्त्ता के आदेशों के पूर्ति भी की जाती है। दूसरे वे जो किसी प्रकार के माल का स्टॉक नहीं रखते है। माल के आदेशों की पूर्ति मुख्य या मंडलीय या डिवीजन कार्यालय द्वारा की जाती है।

शाखा कार्यालय का एक शाखा प्रबन्धक (Branch Manager) होता है। अपनी शाखा के सम्बन्ध में इस प्रबन्धक को व्यापक अधिकार एवं उत्तरदायित्व होते है जो मुख्य कार्यालय द्वारा निर्धारित किये जाते है। शाखा कार्यालय युक्त संगठन का प्रारूप निम्न प्रकार का होता है :

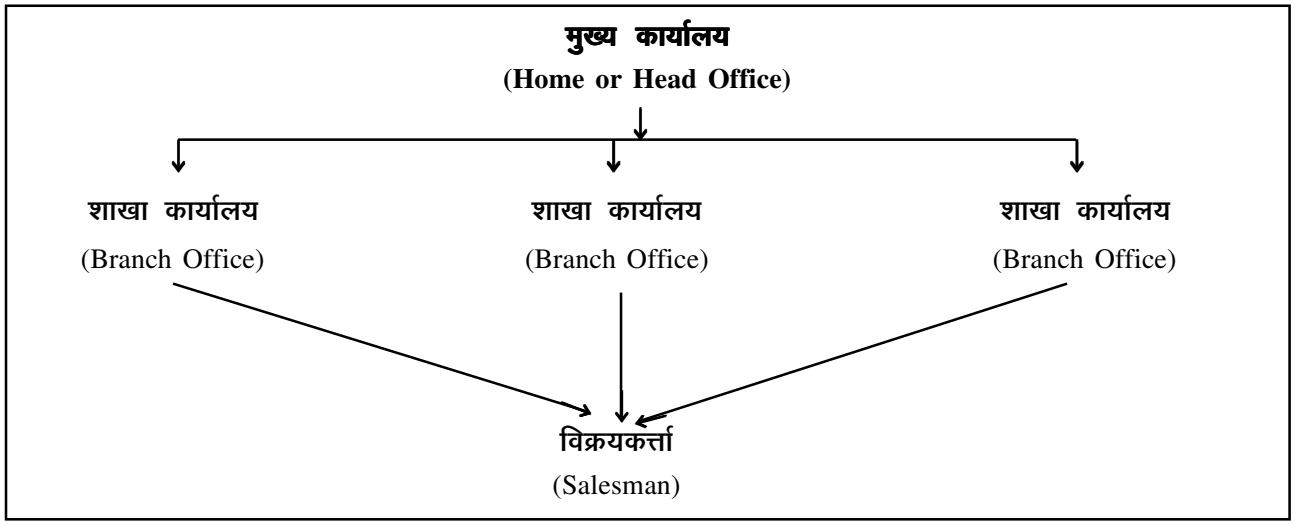

3. **मण्डलीय एवं शाखा कार्यालय युक्त क्षेत्रीय विक्रय संगठन (Divisional and Branch Office Type Field Sales Organisation) –** क्षेत्रीय विक्रय संगठन के इस प्रारूप में उपक्रम के मुख्य कार्यालय के अधीन मण्डलीय कार्यालय स्थापित किये जाते है और मण्डलीय कार्यालयों के अधीन शाखा कार्यालय स्थापित किये जाते है। यह प्रारूप उस समय अपनाया जाता है जबकि विक्रय क्षेत्र काफी विशाल हो और समुचित नियन्त्रण व समय पर निर्णय हेतु विकेन्द्रीयकरण व क्षेत्रानुसार विशिष्टीकरण आवश्यक हो तब समस्त विक्रय क्षेत्र की शाखाओं के साथ साथ इसे मण्डलों में भी विभक्त कर दिया जाता है। इस प्रारूप में मण्डलीय कार्यालय, शाखा कार्यालयों को, समय-समय

पर आवश्यक निर्देश देते रहते हैं, और उनके प्रयासों पर नियन्त्रण रखते हैं। यद्यपि यह प्रारूप सर्वोच्च विक्रयाधिकारियों और क्षेत्रीय विक्रय कर्मचारियों के बीच की दूरी बढ़ा देता है, फिर भी केन्द्रीय कार्यालय के कार्यभार में काफी कमी रहती है और शाखा कार्यालय पर समुचित निरीक्षण, व नियन्त्रण हेतु पर्याप्त व्यवस्था रहती है। इस प्रारूप को निम्न चित्र द्वारा प्रदशित किया जा सकता है :

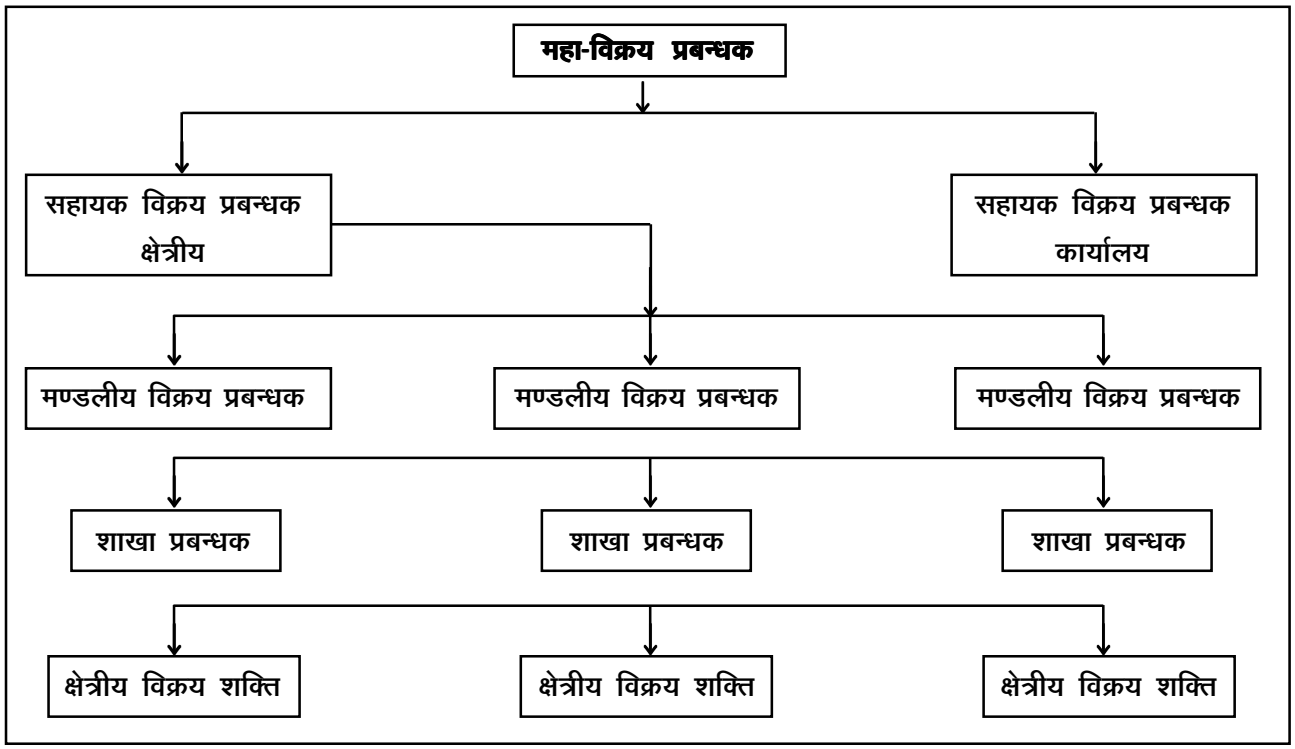

4. **मण्डलीय, शाखा कार्यालय एवं बिक्री पर्यवेक्षक युक्त क्षेत्रीय विक्रय संगठन (Divisional Branch Office and Sales Supervisor Type Fielf Sales Organisation) —** क्षेत्रीय विक्रय-संगठन का यह प्रारूप विस्त त व गहन विक्रय क्षेत्र वाले उपक्रम के लिए उपयोगी माना गया है जो अति विशाल है। इस प्रारूप में केन्द्रीय क्षेत्रीय विक्रय संगठन के आधीन मण्डलीय प्रबन्धक तथा मण्डलीय प्रबन्धकों के आधीन शाखा प्रबन्धक और उसके आधीन बिक्री पर्यवेक्षक रखे जाते है जो कि विक्रयकर्त्ताओं की क्रियाओं पर नियन्त्रण स्थापित करते हैं, उन्हें आवश्यक मार्ग-दर्शन प्रदान करते हैं और उनकी समस्याओं का निराकरण करते है। बिक्री पर्यवेक्षकों का समावेश उपरोक्त में से सभी प्रकार के संगठनों में हो सकता है। मण्डलीय व शाखा कार्यालय के साथ-साथ पर्यवेक्षकीय पदों पर भी होने पर इसकी संरचना अग्रानुसार होती है :

विक्रय संगठन के सिद्धान्त
(Principles of Sales Organisation)

संगठन संरचना के लिए जो सामान्य सिद्धान्त हैं वे ही विक्रय संगठन का निर्माण करते समय अपनाये जाते हैं। अतः विक्रय संगठन के निर्माण के लिए कोई अलग से सिद्धान्त नहीं हैं। अतः एक विक्रय-संगठन के निम्नलिखित सिद्धान्त हैं :

1. विक्रय संगठन सम्पूर्ण संगठन का एक भाग हैं। अतः एक विक्रय संगठन के उद्देश्य संगठन के उद्देश्यों के अनुरूप होने चाहिएं।
2. विक्रय संगठन में पद के अनुरूप अधिकार एवं दायित्व के सिद्धान्त को अपनाया जाना चाहिये।

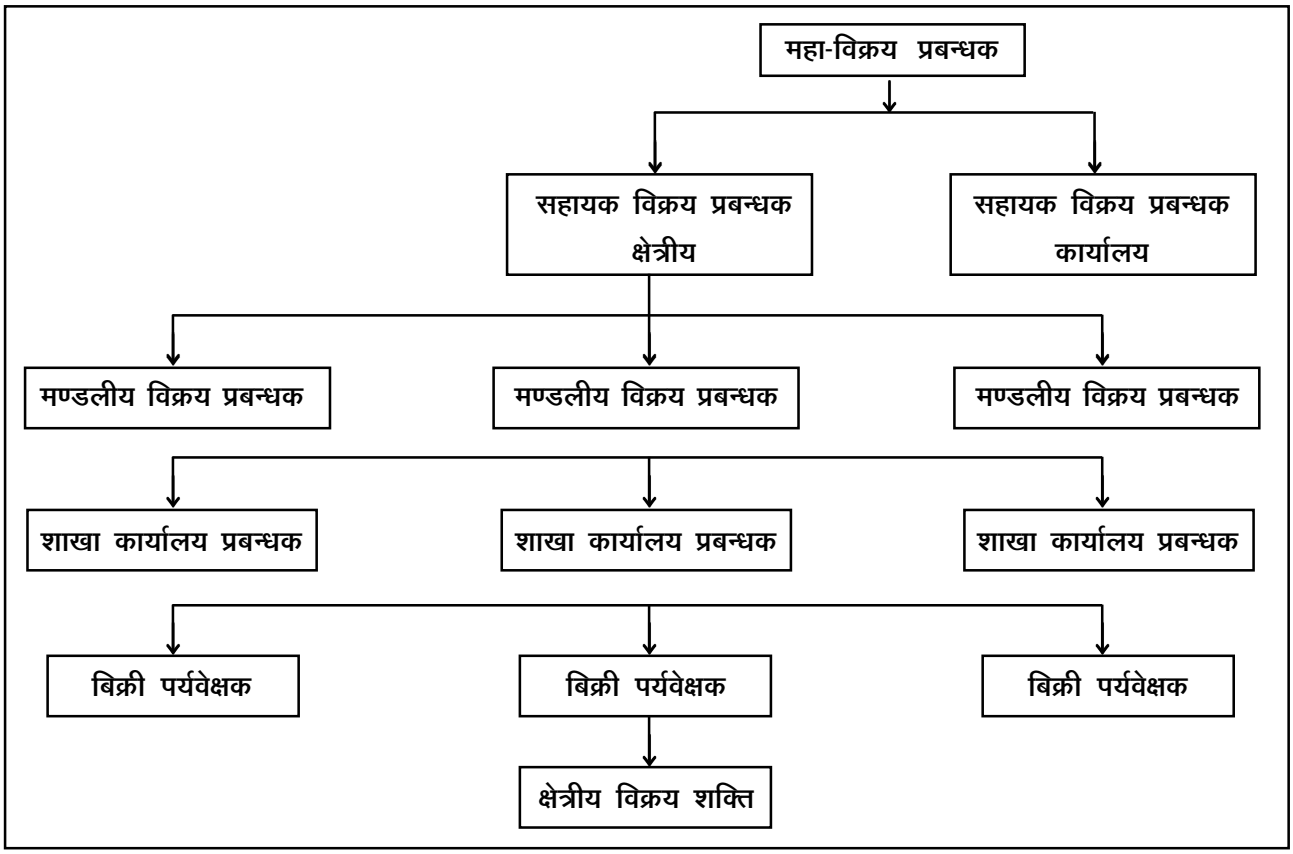

3. विशिष्टता के सिद्धान्त के अनुसार विशिष्ट व्यक्ति को विशिष्ट कार्य ही करने के लिये सौंपा जाए।
4. समन्वय के सिद्धान्त के अनुसार विभिन्न अधिकारियों में परस्पर सामंजस्य होना चाहिए।
5. संगठन में वरिष्ठ अधिकारों को अपने से कनिष्ठ कर्मचारी या अधिकारी के कार्यों के प्रति पूर्ण रूप से उत्तरदायी होना चाहिए। अतः उत्तरदायित्व के सिद्धान्त का पालन किया जाये।
6. अधीनस्थ कर्मचारियों के नियन्त्रण के विस्तार के सिद्धान्त को अपनाया जाना चाहिए। इतने कर्मचारियों को नियन्त्रण में दिया जाये जिनके कार्य को कुशलतापूर्वक नियन्त्रित किया जा सके।
7. संस्था में कार्यरत कर्मचारियों के अधिकारों व कर्त्तव्यों की व्याख्या स्पष्ट रूप से हो।
8. आदेश के सौपानिक सिद्धान्त के अनुसार यह स्पष्ट हो कि किस व्यक्ति के आधीन कौन व्यक्ति हैं।
9. आदेश की एकरूपता के सिद्धान्त को अपनाते हुए एक समय में एक व्यक्ति को एक ही अधिकारी से आदेश मिलें।
10. अधिकार तथा दायित्व के सिद्धान्त के अनुसार कर्मचारियों व अधिकारियों को उत्तरदायित्व के साथ-साथ अधिकार भी सौंपे जाएँ।
11. विक्रय संगठन में दैनिक सामान्य कार्यों के बारे में निर्णय लेने का अधिकार सहायक अधिकारी को सौंपा जा सकता है किन्तु महत्त्वपूर्ण विषयों पर निर्णय का अधिकार विक्रय प्रबन्धक की हो। (अपवाद का सिद्धान्त)।
12. एकात्मक निर्देश के सिद्धान्त के आधार पर विक्रय संगठन के कार्य करने की योजना प्रत्येक उप-विभाग द्वारा किया जाये।
13. विक्रय संगठन संरचना में सरलता ही जिसे आसानी से समझाया जा सके।
14. संगठन ऐसा हो जिसमें कार्य निरन्तर चलता रहता हो।

विक्रय विभाग की प्रबन्ध प्रक्रिया

(Management Process of Sales Department)

किसी व्यावसायिक उपक्रम में 'विक्रय विभाग' आय उत्पन्न करने वाला विभाग होता है। इसके द्वारा अनेक क्रियाएँ संचालित की जाती हैं। विक्रय विभाग की प्रबन्ध प्रक्रिया में निम्नलिखित कार्य करने होते हैं :

(1) **उद्देश्यों को निश्चित करना** – विक्रय संगठन की स्थापना में सबसे पहले विक्रय विभाग के लक्ष्यों को निश्चित किया जाता है। सस्था के उच्च प्रबन्धकों द्वारा सामान्य दीर्घकालीन लक्ष्यों को निश्चित किया जाता है किन्तु विक्रय विभाग के लक्ष्य उच्च प्रबन्धकों के परामर्श से तय किए जाते हैं।

(2) **विक्रय नियोजन** – विक्रय विभाग के प्रबन्ध को करने के लिए नियोजन करना भी आवश्यक है अर्थात् पूरे वर्ष की बिक्री योजनाएँ, गोदाम, शाखा, कार्यालय, माल, वितरण आदि के सम्बन्ध में योजनाएँ बनाई जाती हैं। बाजार उत्पादन, उपभोक्ता मांग, प्रतिस्पर्द्धा स्तर, उपभोक्ता व्यवहार आदि के बारे में पूर्वानुमान लगाना तथा आँकड़ों व सूचनाओं का संकलन करके उन्हें विक्रय नियोजन के योग्य बनाया जाता है।

(3) **विक्रय नीतियों का निर्माण** – विक्रय सम्बन्धी क्रियाओं के सफल संचालन के लिए विभिन्न प्रकार के नीतिगत निर्णय करने होते हैं जैसे साख सम्बन्धी निर्णय, वितरण बट्टा, पारिश्रमिक, आदेश पूर्ति आदि सम्बन्धी निर्णय।

(4) **अन्य नियोजन** (Other Planning) – विक्रय विभाग अन्य सम्बन्धित क्रियाओं जैसे उत्पादन, पूंजी, कार्यालय आदि के सम्बन्ध में भी नियोजन कार्य करने में सहायता करते है। इसका सम्बन्ध उत्पादन की मात्रा, उपभोक्ता की रूचि, माँग, विक्रय बजट, विक्रय व्यय, विक्रय साख, कार्यालय स्थान व कार्यो, कार्यपद्धतियों, विक्रय कर्मचारियों के विभिन्न कार्यो के नियोजन से होता हैं।

(5) **सचांलकीय क्रियाओं का निर्धारण** (Determination of Operative Activities) – विक्रय विभाग की प्रबन्ध व्यवस्था के लिए विपणन, वितरण, व्यापारिक, विज्ञापन, विक्रय संवर्द्धन, जन सम्पर्क, निर्यात संवर्द्धन आदि से संबधित क्रियाओं का निर्धारण करके उन्हें संचालित किया जाता है ताकि न्यूनतम लागत पर अधिकतम विक्रय करके लाभ उठाया जा सके।

(6) **स्थितियों का निर्माण** (Creating Positions) – विक्रय संगठन की क्रियाओं के निर्धारण के बाद उन्हें पदों या स्थितियों में बदलना होता है। इसके लिए क्रियाओं का समूहीकरण तथा श्रेणीयन किया जाता है ताकि सम्बन्धित क्रियायें किसी उपयुक्त स्थिति में संयोजित की जा सकें।

(7) **स्थितियों का कर्मचारियों को सौंपना** (Assigning Positions to Personnel) – ऊपर वर्णित स्थितियाँ या पद निश्चित होने के बाद उन्हें कार्यकारी अधिकारियों तथा कर्मचारियो को कार्यवाही के लिए सौंप दिया जाता है। इसमें यह ध्यान रखा जाता है कि सही व्यक्ति को सही कार्य करने के लिए मिले तथा सभी अधिकारियों व कर्मचारियों के परस्पर संबंधों की व्याख्या हो। कार्य करने वालों से विक्रय विभाग की क्या आशाएँ हैं यह भी स्पष्ट कर दिया जाता है।

(8) **विक्रय कर्मचारी सम्बन्धी कार्य** (Sales Staff Functions) – विक्रय संगठन विक्रय प्रबन्ध के अर्न्तगत कर्मचारियों के सम्बन्ध में उनकी नियुक्ति, कार्य वितरण, प्रशिक्षण, पदोन्नति, स्थानांतरण, पदावनति, प्रेरणाएँ, पारिश्रमिक, सम्प्रेषण आदि कार्यो को भी सम्पन्न करता है।

(9) **समन्वय व नियन्त्रण की व्यवस्था** (Arrangement for Coordination and Control) – अन्त में विक्रय प्रबन्ध

प्रक्रिया के अन्तर्गत विक्रेताओं, अधिकारियों अन्य कर्मचारियों तथा विक्रय पर समुचित नियन्त्रण करने तथा उनके बीच आवश्यक समन्वय स्थापित करने का कार्य करता है।

उपयोगी प्रश्न

(Useful Questions)

1. **विक्रय संगठन से आप क्या समझते हैं? विक्रय संगठन के उद्देश्य एंव कार्यो का उल्लेख करें ?**
   What do you meant by the term sales organisation ? State the objectives and functions of a sales organisation ?
2. **विक्रय संगठन का विभागीकरण किन आधारों पर किया जा सकता है ? लाभ-दोषों सहित वर्णन करें ?**
   On what basis a sales organisation can be departmentalised ? Describe with merits and demerits ?
3. **विक्रय संगठन के विभिन्न प्रारूपों को समझाइए ? किस प्रारूप को आप अच्छा मानते हैं और क्यों ?**
   Explain the different forms of Sales organisation. What form do you consider better and why ?
4. **'क्षेत्रीय विक्रय संगठन' का अर्थ बताइये ? इसके प्रमुख प्रारूपों को समझाइये ?**
   What is the meaning of Field Sales Organisation ? Explain its main forms ?
5. **विक्रय संगठन की आवश्यकता क्यों होती है ? एक विक्रय संगठन सरंचना को प्रभावित करने वाले घटकों का वर्णन कीजिए ?**
   Why sales or ganisation is needed ? Describe the factors determining the structure of a sales organisation ?
6. **विक्रय विभाग की प्रबन्ध व्यवस्था की प्रक्रिया समझाइये ?**
   Discuss the process of managing a Sales Department ?
7. **निम्न पर टिप्पणियाँ लिखें** (Write notes) :
   1. **संयुक्त या मिश्रित आधार पर वर्गीकरण**
      (Classification on the basis of Combined or mixed)
   2. **आव्यूह विभागीकरण** (Matrix Departmentalisation)
   3. **रेखा एवं कर्मचारी विक्रय संगठन** (Line and Staff Sales Organisation)
   4. **क्रियात्मक विक्रय संगठन** (Functional Sales Organisation).

अध्याय - 16
विक्रयकर्त्ता – प्रकार एवं गुण
(Salesman — Types and Qualities)

"विक्रयकर्ता किसी व्यवसाय या सामाजिक साहस का प्रतिनिधि होता है जिसका मुख्य कार्य व्यवसायी की वस्तुओं या सेवाओं के बारे में जानकारी देना है जिससे कि व्यक्ति उसके विचारों को स्वीकार करें और सेवाओं और वस्तुओं का विनिमय हो सके।" **– ए.एल. मिलर**

विक्रयकर्ता के प्रकार
(Types of Salesman)

विक्रयकर्ता कितने प्रकार के होते हैं, इस बारे में विद्वानों में एक राय नहीं है। भिन्न-भिन्न विद्वानों ने विक्रयकर्ताओं के भिन्न-भिन्न वर्गीकरण प्रस्तुत किये हैं। अध्ययन की द ष्टि से हम इन्हें निम्न भागों में बाँट रहे हैं :

1. **क्रियाओं के आधार पर** →
   - स जनशील विक्रयकर्त्ता
   - व द्धिशील विक्रयकर्त्ता
2. **स्थिति के आधार पर** →
   - आन्तरिक विक्रयकर्त्ता
   - बाह्य विक्रयकर्त्ता
3. **मनोव त्ति के आधार पर** →
   - आशावादी विक्रयकर्त्ता
   - निराशावादी विक्रयकर्त्ता
4. **वस्तुओं के आधार पर** →
   - मूर्तवान वस्तु विक्रयकर्त्ता
   - अमूर्तवान वस्तु विक्रयकर्त्ता
5. **नियोक्ताओं के आधार पर** →
   - निर्माताओं का विक्रयकर्त्ता
   - थोक व्यापारी का विक्रयकर्त्ता
   - फुटकर व्यापारी का विक्रयकर्त्ता
   - विशिष्ट विक्रयकर्त्ता
   - निर्यात विक्रयकर्त्ता
6. **अन्य विक्रयकर्त्ताओं के आधार पर** →
   - सेवा विक्रयकर्त्ता
   - प्रदर्शन विक्रयकर्त्ता
   - भ्रमणशील विक्रयकर्त्ता

1. **क्रियाओं के आधार पर (On the Basis of Activities)** – डॉ० विलियम ए० नीलैण्डर के अनुसार, क्रियाओं के आधार पर विक्रयकर्ता निम्न दो प्रकार के होते हैं :
   (अ) स जनशील विक्रयकर्ता
   (ब) व द्विशील विक्रयकर्ता

   (अ) **स जनशील विक्रयकर्ता (Creative Salesman) –** स जनशील विक्रयकर्ता वे होते हैं जो नई उत्पादित वस्तु की माँग पैदा करते हैं। ऐसे विक्रयकर्ता को मिशनरी विक्रयकर्ता (Missionary Salesman) भी कहते हैं। इनका कार्य ग्राहकों को वस्तु के बारे में अवगत कराना एंव उस वस्तु की माँग उत्पन्न करना है। इस कार्य के लिए वे वस्तु के नये-नये उपयोगों की जानकारी करते हैं उसको लोकप्रिय बनाने का प्रयास करते हैं।

   (ब) **व द्विशील विक्रयाकर्ता (Service Salesman) –** व द्विशील विक्रयकर्ता वह होता है जो विद्यमान वस्तुओं की माँग में व द्वि करने का कार्य करता है। इस प्रकार के विक्रयकर्ता बीमा एजेण्ट व अशों के विक्रयकर्ता आदि होते हैं।

2. **स्थिति के आधार पर** (On the basis of Situation)- स्थिति के आधार पर विक्रयकर्ता दो प्रकार के होते हैं :
   (अ) आन्तरिक विक्रयकर्ता
   (ब) बाह्य विक्रयकर्ता

   (अ) **आन्तरिक विक्रयकर्ता –** आन्तरिक विक्रयकर्ता वे होते हैं जो अपनी दुकान पर आये ग्राहक को ही विक्रय करते हैं। ऐसे विक्रयकर्ता दो प्रकार के होते हैं :

   (i) **डाक द्वारा व्यापार के विक्रयकर्ता –** ये विक्रयकर्ता वे होते हैं जो डाक द्वारा विक्रय करते हैं। ये अपने सम्भावित ग्राहकों को सूचीपत्र व अन्य साहित्य भेजते रहते हैं तथा डाक द्वारा आदेश प्राप्त करते हैं और डाक द्वारा ही उसकी पूर्ति करते हैं।

   (ii) **काउण्टर विक्रयकर्ता –** ये विक्रयकर्ता वे होते हैं जो वस्तुओं को शोरूम अथवा दुकान पर, ग्राहकों से बात-चीत कर, उनको वस्तुओं का विक्रय करते हैं।

   (ब) **बाह्य विक्रयकर्ता –** बाह्य विक्रयकर्ता वे होते हैं जो घूम-घूमकर वस्तु का प्रचार करते हैं और विक्रय करते हैं। ये भी दो प्रकार के होते हैं - (i) स्थानीय (Local), तथा (ii) भ्रमणशील (Moving)। स्थानीय विक्रयकर्ता वह व्यक्ति होते हैं जो एक ही शहर के अन्दर घूम-घूमकर प्रचार एंव आदेश प्राप्त करते हैं, जबकि भ्रमणशील स्थानीय विक्रयकर्ता वे होते हैं जो शहरों, प्रदेशों एंव देश के भिन्न-भिन्न भागों में घूम-घूम कर प्रचार करते है एवं आदेश प्राप्त करते हैं।

   अतः स्थिति के अनुसार स्थानीय विक्रयकर्ताओं को निम्न भागों से बाँटा जा सकता है :

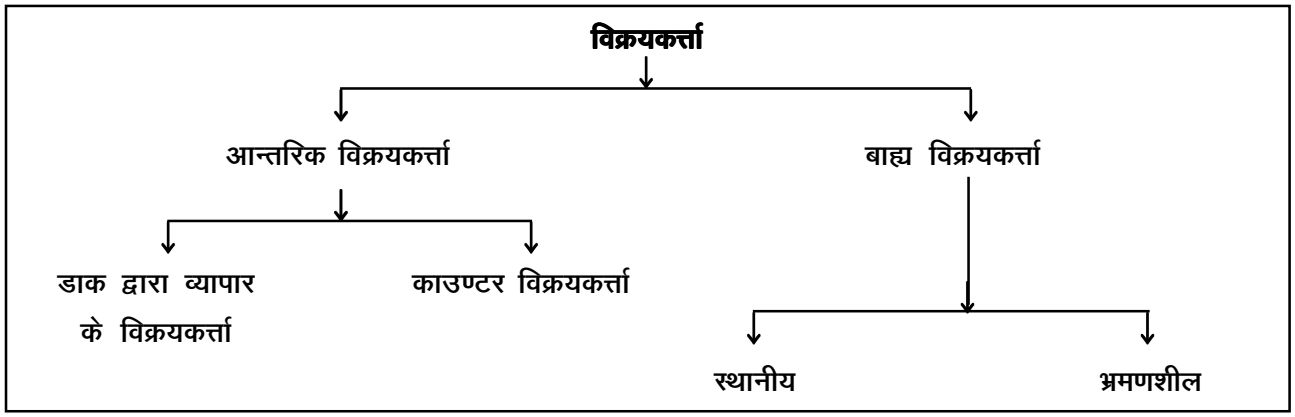

3. **मनोव ति के आधार पर** **(On the basis of Psychology)** – मनोव ति के आधार पर भी विक्रयकर्ताओं को दो भागों में बाँटा जा सकता है :

(अ) कुशल विक्रयकर्ता, एवं

(ब) निराश विक्रयकर्ता

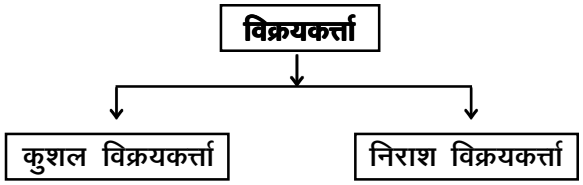

(अ) **कुशल विक्रयकर्ता** **(Efficient Salesman)** – 'कुशल' विक्रयकर्ता वे व्यक्ति होते हैं जिनको अपने व्यवसाय के प्रति असीम रूचि होती है और जो अपने कार्य में अत्यन्त दक्ष एवं चतुर होते हैं। ये आशावादी होते हैं एवं सफल व्यक्तित्व, चातुर्य एंव वाक्पटुता से अधिक विक्रय करनें में समर्थ होते हैं।

(ब) **निराश विक्रयकर्ता** **(Dull Salesman)** – 'निराश' एंव थका हुआ विक्रयकर्ता वह होता है जिसको अपने व्यवसाय के प्रति रूचि नहीं होती परन्तु फिर भी जीविकोपार्जन के लिए अथवा किन्हीं कारणों से वह इस व्यवसाय में लगा होता है। इसका द ष्टिकोण सदैव निराशाजनक होता है।

4. **वस्तुओं के आधार पर** **(On the basis of Goods)** – कभी-कभी विक्रयकर्ताओं का विभाजन जिन वस्तुओं में वे विक्रय करते हैं, उनके आधार पर कर दिया जाता है। वस्तुओं के आधार पर विक्रयकर्ता निम्नलिखित दो प्रकार के होते हैं :

(अ) मूर्तवान वस्तुओं के विक्रयकर्ता एवं

(ब) अमूर्तवान वस्तुओं के विक्रयकर्ता

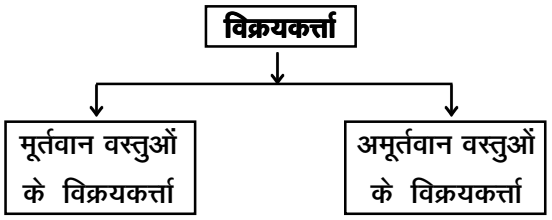

(अ) **मूर्तवान वस्तुओं के विक्रयकर्ता** **(Tangible Salesman)** – जो विक्रयकर्ता मूर्तवान वस्तुओं का विक्रय करते हैं, उन्हें मूर्तवान वस्तुओं के विक्रयकर्ता कहते हैं। मूर्तवान वस्तुएँ वे होती हैं जिनको देखा, छुआ, सूंघा तथा चखा जा सकता है।

(ब) **अमूर्तवान वस्तुओं के विक्रयकर्ता** **(Intangible Salesman)** – जो विक्रयकर्ता अमूर्तवान वस्तुओं का विक्रय करते हैं, उनको अमूर्तवान वस्तुओं के विक्रयकर्ता कहा जा सकता है। अमूर्तवान वस्तुएँ वे होती हैं जिनको देखा, छुआ, सूंघा तथा चखा नहीं जा सकता है तथा अमूर्तवान वस्तुओं में व्यवहार करते हैं जैसेः-जीवन बीमा का एजेण्ट।

5. **नियोक्ताओं के आधार पर** (On the basis of Employers) - नियोक्ताओं के आधार पर विक्रयकर्ता को हम निम्नलिखित पाँच भागों में बाँट सकते हैं :

(अ) निर्माताओं का विक्रयकर्ता।

(ब) थोक व्यापारी का विक्रयकर्ता।

(स) फुटकर व्यापारी का विक्रयकर्ता।

(द) विशिष्ट विक्रयकर्ता।

(य) निर्यात विक्रयकर्ता।

(अ) **निर्माताओं का विक्रयकर्ता** **(Manufacture's Salesman)** – निर्माताओं के विक्रयकर्ता वे होते हैं जो निर्माताओं

के द्वारा उत्पादित वस्तु का विक्रय थोक व्यापारियों को और बड़े फुटकर व्यापारियों को कहते हैं। निर्माताओं के विक्रयकर्ता तीन प्रकार के हो सकते हैं : (i) एक तो वे जो निर्माताओं का माल थोक व्यापारियों को बेचते हैं जो निर्माताओं से माल खरीदने आये हैं। (ii) दूसरे वे, जो माल का नमूना दिखाकर थोक व फुटकर विक्रेताओं से मिलते हैं और उनके लिए आदेश प्राप्त करते हैं। हमारे देश में दवाओं के विक्रयकर्ता इसी श्रेणी में आते हैं। (iii) तीसरे, वे जो उपभोक्ताओं से सीधा सम्पर्क कर माल का प्रत्यक्ष विक्रय करते हैं।

(ब) **थोक व्यापारी का विक्रयकर्ता (Wholesaler's Salesman) –** थोक व्यापारी के विक्रयकर्ता वे व्यक्ति होते हैं जो फुटकर व्यापारी से सम्पर्क स्थापित कर उसकी वस्तु का प्रचार एवं आदेश प्राप्त करते हैं। शहरों में प्रायः रेहड़ी में माल रखकर फुटकर व्यापारियों के पास जाकर उनको माल उपलब्ध कराते हैं।

(स) **फुटकर व्यापारी का विक्रयकर्ता (Retailer's Salesman) –** इस प्रकार के विक्रयकर्ता दुकान अथवा शोरूम में अपनी व्यवहार-कुशलता व विक्रय-कला से क्रेता को स्थायी ग्राहक बना लेते हैं। इस विक्रयकर्ता को काउण्टर विक्रयकर्ता (Counter Salesman) कहते हैं। ये विक्रयकर्ता दो प्रकार के होते हैं - (i) आन्तरिक विक्रयकर्ता (Indoor Salesman), तथा (ii) यात्री विक्रयकर्ता (Traveling Salesman) । 'आन्तरिक विक्रयकर्ता' वह होता है जो व्यापारी की दुकान पर नियुक्त रहता है और वहाँ आये ग्राहकों को माल का विक्रय करता हे। 'यात्री' विक्रयकर्ता वह होता है जो घूम-घूमकर माल बेचता है।

(द) **विशिष्ट विक्रयकर्ता (Speciality Salesman) –** विशिष्ट प्रकार की वस्तुओं में विक्रय करने वाले विशिष्ट विक्रयकर्ता कहलाते हैं, जैसे-कम्प्यूटर, रेफ्रीजरेटर, वाटरकूलर, टेलीविजन सैट आदि के विक्रयकर्ता। इस प्रकार के विक्रयकर्ता, इन वस्तुओं को प्रदर्शन कर तथा इनका छपा साहित्य (Printed Literature) दिखाकर ग्राहक को वस्तु खरीदने के लिए राजी करते हैं। ये विक्रयकर्ता भी दो प्रकार के होते हैं : (i) एक तो वो जो औद्योगिक वस्तु, जैसे-कम्प्यूटर, डुप्लीकेटर, गणना मशीन इत्यादि का विक्रय करते हैं; तथा (ii) दूसरे वे जो उपभोग योग्य वस्तु, जैसे- कपड़ा, रेफ्रीजरेटर, टेलिविजन इत्यादि का विक्रय करते हैं।

(य) **निर्यात विक्रयकर्ता (Exporter's Salesman) –** इस प्रकार के विक्रयकर्ता का कार्य विदेश से आदेश प्राप्त कर आदेश के अनुसार माल खरीदकर उसे विदेश को निर्यात करना होता है। ऐसे विक्रयकर्ताओं को विदेश को माल भेजने के सम्बन्ध में जो कार्यवाहियाँ की जाती हैं, उनका पूरा ज्ञान होता हैं।

6. **अन्य विक्रयकर्ता** (Other Salesman) अन्य विक्रयकर्त्ताओं में (i) **सेवा विक्रयकर्त्ता**, जैसे-बीमा एजेण्ट, विनियोग एजेण्ट आदि आते हैं ; (ii) **प्रर्दशन विक्रयकर्त्ता** जो माल का स्थान-स्थान पर प्रर्दशन कर वस्तु के आदेश प्राप्त करते हैं ; (iii) **भ्रमणशील विक्रयकर्त्ता** वे होते हैं जो दुकानों के बाहर घूम-घूमकर वस्तु की बिक्री करते हैं। इस तरह इन **विक्रय**कर्त्ता**ओं** से कठिन होता हैं।

विक्रयकर्त्ताओं के गुण
(Qualities of Salesman)

अथवा

आदर्श या सफल विक्रयकर्त्ता के गुण
(Qualities of an Ideal or Successful Salesman)

एक सफल या आदर्श विक्रयकर्त्ता में बहुत-से गुणों का समावेश होता है। कुछ गुणों को तो वह शिक्षा, प्रशिक्षण व अनुभव से प्राप्त करता है तथा कुछ गुण प्रक तिदत्त (Natural) अथवा जन्मजात होते हैं। यह कथन कि सफल विक्रयकर्त्ता पैदा

होते हैं, बनाये नहीं जाते हैं, कुछ सीमा तक तो ठीक है। विक्रय के अनुरूप मनोव त्तियों के व्यक्ति ही सफल विक्रयकर्त्ता हो सकते हैं। एक विद्वान के शब्दों में, "एक सफल विक्रयकर्ता में बिल्ली के समान उत्सुकता, कवि के समान चातुर्य, गंगाजल के समान पवित्रता, शिशु की भाँति मैत्री फुटबाल के खिलाड़ी की भाँति सक्रियता और उत्साह तथा स्त्री की भाँति धैर्य होना चाहिए।" दूसरे शब्दों में, **एक सफल विक्रयकर्ता का प्रभावशाली व्यक्तित्व, कार्य के प्रति रूचि, महत्त्वकाँक्षी, परिश्रमी, चतुर, धैर्यवान, आशावादी, नम्र एवं प्रखर बुद्धि वाला होना चाहिए।**

श्री रसेल (Russel) के अनुसार, एक आदर्श विक्रयकर्ता में निम्नलिखित गुण होने चाहिएं :

(1) अनुशासन, (2) साहस, (3) अध्ययन की इच्छा, (4) अनुशीलन, (5) प्रभावशीलता स्वास्थ्य, (6) ईमानदारी, (7) अध्यवसाय, (8) युक्ति सम्पन्नता तथा (9) चातुर्य।

सुप्रसिद्ध वाटरमैन कम्पनी (L.E. Waterman Company) के अनुसार, सफल समान विक्रयकर्ता में निम्नलिखित गुण होने चाहिए :

(1) सुन्दर आक ति, (2) बुद्धिमता, (3) सहकारिता, (4) दूरदर्शिता (5) उत्साह, (6) नम्रता, (7) योग्यता तथा (8) महत्त्वकांक्षा।

जबकि **श्री टी० एस० नॉक्स** (T. S. Knox) ने सफल या आदर्श विक्रयकर्त्ता में निम्नलिखित गुण बताये हैं :

क्रियात्मक गुण

A. योग्यता	B. विश्वसनीयता	C. इच्छा
(i) परीक्षण	(i) ईमानदारी	(i) साहस
(ii) एकाग्रता	(ii) स्वामिभक्ति	(ii) निर्णय
(iii) समता	(iii) निष्कपटता	(iii) पहल
(iv) स्मरण शक्ति	(iv) उत्साह	(iv) समय की पाबन्दी
(v) विचार शक्ति	(v) विश्वास	(v) स्फूर्ति
(vi) विवेक	(vi) आशावादिता	(vi) अनुशासन
(vii) निर्णय	(vii) महत्वाकांक्षा	(vii) सावधानी

श्री पाल एच० नाइस्ट्रोम (Paul H. Nystrom) ने एक सफल विक्रेता में उपर्युक्त गुणों के साथ-साथ निम्न अतिरिक्त गुणों पर भी बल दिया गया है :

(1) यथार्थता, (2) फुर्तीलापन, (3) स जनकर्ता, (4) सहकारिता, और (5) मीठी बोली आदि।

एक सफल विक्रयकर्त्ता के उपरोक्त गुणों को निम्न तीन भागों में बाँटा जा सकता है :

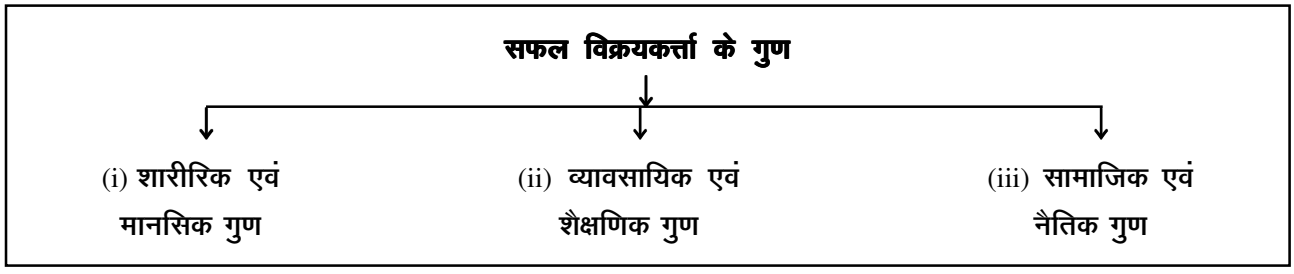

(I) शारीरिक एवं मानसिक गुण
(Physical and Mental Attributes)

(1) **प्रभावशाली व्यक्तित्व** – विक्रयकर्त्ता का व्यक्तित्व ऐसा होना चाहिए कि जो व्यक्ति भी उससे एक बार बात कर ले, उसके ऊपर उसकी अमिट छाप पड़ जाये। विक्रयकर्त्ता के व्यक्तित्व के अर्न्तगत केवल उसके गुण एवं शरीर की आकृति ही नहीं आती अपितु उसके व्यवहार की पद्धति, रहन-सहन का ढ़ंग आदि बातों का समावेश होता हैं।

(2) **महत्त्वकाँक्षा** – विक्रयकर्त्ता को हमेशा उत्साही एवं महत्त्कांक्षी होना चाहिए तथा उसमें अपनी प्रगति की ओर बढ़ने की सच्ची लगन होनी चाहिए।

(3) **युक्ति सम्पन्नता** – विक्रयकर्त्ता को सदैव युक्ति सम्पन्न होना चाहिए। उसे अपने ग्राहकों को नेक सलाह देनी चाहिए तथा सच्चे मित्र की तरह उसका मार्गदर्शन करना चाहिए। यदि वह युक्ति से कार्य करेगा तो सफलता निश्चित ही उसके कदम चूमेगी।

(4) **रूचि** – विक्रयकर्त्ता को यदि जिस कार्य को वह कर रहा है, उसके प्रति रूचि है, तभी वह उस कार्य में सफलता प्राप्त कर सकता है। यदि उसको उस कार्य में रूचि नहीं है तो वह कभी भी उसमें सफलता प्राप्त नहीं कर सकता। मनोवैज्ञानिकों का मत है कि एक व्यक्ति में कार्य के प्रति जितनी अधिक रूचि होगी, वह उतना ही अच्छा कार्य कर सकेगा।

(5) **आत्मविश्वास** – एक सफल विक्रयकर्त्ता में आत्मविश्वास का होना परम आवश्यक है क्योंकि जब तक उसको स्वयं ही विश्वास नहीं होगा तो वह ग्राहकों को कैसे विश्वास दिला सकेगा ? किस प्रकार वह उनकी शंकाओं का समाधान कर सकेगा ?

(6) **सत्यनिष्ठा** – 'ईमानदारी ही सर्वश्रेष्ठ नीति है' (Honesty is the best policy) को अपनाकर विक्रयकर्त्ता एक नही, अनेकों ग्राहकों को अपनी ओर आकर्षित कर सकता है। यदि वह किसी ग्राहक की अज्ञानता अथवा असावधानी का लाभ उठाएगा तो 'काठ की हांडी एक बार चढ़ती है' वाली कहावत चरितार्थ हो जायेगी।

(7) **तीक्ष्ण बुद्धि** – विक्रयकर्त्ता को अत्यन्त तीक्ष्ण बुद्धि का होना चाहिए, ताकि वह ग्राहकों के मन की बात तुरन्त समझ सके और उसकी पूर्ति कर सके।

(8) **धैर्य एवं सहिष्णुता** – विक्रयकर्त्ता को धैर्यवान एवं सहनशील होना चाहिए। ग्राहकों से बातचीत करते समय हर परिस्थिति में उसे धैर्य से काम लेना चाहिए। ग्राहक को श्रेष्ठ मानकर उसकी कही हुई बात का बुरा नहीं मानना चाहिए अपितु उसकी बात को टाल देना चाहिए।

(9) **चातुर्य** – विक्रयकर्त्ता को इतना चतुर होना चाहिए कि कोई भी ग्राहक उसकी दुकान पर आकर लौट न सके और न ही उसके सामने उसके माल की आलोचना कर सके। ग्राहक के स्वभाव के अनुसार ही उसे व्यवहार करना चाहिए।

(10) **नम्रता** – विक्रयकर्त्ता नम्र स्वभाव का होना चाहिए, ताकि वह अधिक से अधिक ग्राहकों को प्रभावित कर सके। यदि विक्रयकर्त्ता में इस गुण की कमी है तो ग्राहक उससे प्रभावित नहीं होंगे फलस्वरूप बिक्री पर विपरित प्रभाव पड़ेगा।

(11) **स्वामिभक्ति** – विक्रयकर्त्ता को सदैव अपने स्वामी के प्रति वफादार होना चाहिए। उसको स्वामी का नुकसान अपना नुकसान समझना चाहिए। यदि विक्रयकर्त्ता में यह गुण नहीं है तो न तो वह स्वामी का विश्वास प्राप्त कर सकेगा और न ही वह आत्म-विश्वास के साथ कार्य कर सकेगा।

(12) **स्मरण-शक्ति** – विक्रयकर्त्ता की स्मरण-शक्ति तीक्ष्ण होनी चाहिए जिससे वह अपने नये-पुराने व्यक्तियों इत्यादि के द्वारा किये गये सौदे तथा व्यवहारों को याद रखने में समर्थ हो सकें।

(13) **सतर्कता** – विक्रयकर्त्ता को विक्रय-स्थल पर आने-जाने वाले लोगों की गतिविधियों एवं व्यवहार पर सतर्कता से ध्यान देना चाहिए, ताकि किसी प्रकार की अप्रिय घटना को टाला जा सके।

(14) **आशावादिता** – विक्रयकर्त्ता को सदैव आशावादी होना चाहिए। यदि किसी समय लाभ कम होता है या बिक्री नहीं होती है तो उसको निराश नहीं होना चाहिए अपितु भविष्य में लाभ कमाने की आशा रखनी चाहिए और सदैव उज्जवल भविष्य की कामना करनी चाहिए।

(15) **अन्य गुण** – उर्पयुक्त गुणों के अतिरिक्त उसमें समय और परिस्थितियों के अनुसार कुछ और भी गुण होने चाहिए, जैसे-उसे परिश्रमी होना चाहिए, प्रसन्न मुद्रा वाला होना चाहिए, ग्राहकों की मनोवैज्ञानिक प्रव तियों को समझने की सामर्थ्य होनी चाहिए, चरित्रवान तथा सहकारिता के गुण भी उसमें होने चाहिएं।

(II) व्यावसायिक एवं शैक्षणिक गुण
(Business and Educational Attributes)

(1) **व्यावसायिक ज्ञान** – विक्रयकर्त्ता का व्यावसायिक ज्ञान पूरा होना चाहिए, तभी वह अपने कार्य में सफलता प्राप्त कर सकता है। व्यावसायिक ज्ञान में व्यावसायिक नियमों एवं विनिमयमों का ज्ञान, बैंकिग, परिवहन, उत्पादन प्रक्रिया, मरम्मत इत्यादि का ज्ञान आ जाता हैं।

(2) **प्रतिद्वन्द्विता का ज्ञान** – विक्रयकर्ता में अपने प्रतिद्वन्द्वियों से सावधान रहने, उनकी गतिविधियों का अध्ययन करने तथा उनके अनुसार व्यवहार करने की क्षमता होनी चाहिए।

(3) **शिक्षा एवं प्रशिक्षण** – विक्रयकर्ता शिक्षित एंव प्रशिक्षित होना चाहिए। शिक्षित एवं प्रशिक्षित व्यक्ति अन्य व्यक्तियों से अपनी बात कह सकता है और उसकी बात आसानी से समझ सकता है।

(4) **लेखांकन का ज्ञान** – विक्रयकर्त्ता को लेखांकन का ज्ञान होना चाहिए। यदि उसको इसकी जानकारी नहीं है तो उसको अन्य कर्मचारियों पर निर्भर रहना पड़ेगा। इसके साथ-साथ उसको व्यवसायिक सन्नियम, साझेदारी अधिनियम, प्रसंविदा अधिनियम आदि का भी ज्ञान होना चाहिए।

(5) **विक्रयार्थ वस्तु का ज्ञान** – विक्रयकर्त्ता जिस वस्तु का विक्रय कर रहा है, उस वस्तु के बारे में उसको पूर्ण ज्ञान होना चाहिए। जब तक उसको अपनी वस्तु के बारे में पूर्ण ज्ञान नहीं होगा, तब तक वह ग्राहक की आपत्तियों (Objections) का समुचित उत्तर नहीं दे सकेगा। उसको यह ज्ञान वस्तु के निर्माण से लेकर उसके प्रयोग या उपभोग तक का होना चाहिए।

(III) सामाजिक एवं नैतिक गुण
(Social and Moral Attributes)

(1) **मिलनसार** – विक्रयकर्त्ता को मिलनसार होना चाहिए। वह अपने सम्पर्क में आने वाले विभिन्न व्यक्तियों से मिलता-जुलता रहे एंव उसे जरूरत पड़ने पर उनसे सहयोग लेने की स्थिति में होना चाहिए।

(2) **अभिरूचि** – विक्रयकर्त्ता को अपनी रूचि के अनुसार ही कार्य करना चाहिए। यदि उसे कार्य में रूचि नहीं है तो उसे वह कार्य छोड़ देना चाहिए। अरूचि होने से दोनों पक्षों को हानि होती हैं।

(3) **सहकारी** – एक सफल विक्रयकर्त्ता को सभी के साथ मिलकर कार्य करना चाहिए। ग्राहक, मालिक, सहयोगी के साथ मिलकर कार्य करने की उसमें सामर्थ्य होनी चाहिए।

(4) **स्वभाव** – विक्रयकर्त्ता का स्वभाव अच्छा होना चाहिए। उसकी अच्छी आदतें, व्यवहार-कुशलता, अच्छा स्वभाव उसके व्यवसाय को उच्च शिखर पर ले जायेंगे।

विक्रयकर्त्ता की असफलता के कारण
(Causes of Failure of Salesman)

श्री चार्ल्स एटकिन्सन किर्कपैट्रिक (Charles Atkinson Kirkpatrick Prof of Marketing, Graduate School of Business Administration, University of North Carolina) ने विक्रयकर्त्ताओं की असफलता के कारणों की जाँच करने के लिए 500 बड़ी संस्थाओं के प्रबन्धकों (Managers) से पूछताछ की जिनमें से 405 प्रबन्धकों ने उत्तर दिया। इस उत्तर के आधार पर सामूहिक परिणाम (Composite Answer) निकाला गया जो प्रतिशत (Percentage) के रूप में इस प्रकार है :

Cause of the Failure	Percent
Lack of Initiative	55
Poor Planning and Organisation	39
Inadequate Product Knowledge	37
Lack of Enthusiam	31
Salesman nor Customer-oriented	30
Lack of Proper Training	23
Inability of get along with Buyers	21
Lack of Personal Goals	20
Inadequate Knowledge of Market	19
Lack of Knowledge of Company	16
Lack of Job-satisfaction	15
Unsuited for Selling Career	14
Lack of Adequate Background	13
Insufficient Self-discipline	12

Cause of the Failure	Percent
Salesman not Company-oriented	12
No Interest in Self-development	11
Failure to Follow Instructions	11
Lack of Self-confidence	11
Improper Supervision	9
Inability of Improve	8
Lack of Imagination	7
Personal Problems	6
Difficulties and Communicating	6
Dishonesty	5
Unfortunate Appearence	5
Improper Attitude	5
Failure to ask Buyers to Buy	3
Lack of Tact and Courtesy	2
Gambling and Drinking	2

उपयोगी प्रश्न
(Useful Questions)

1. किसी विक्रयकर्त्ता का चुनाव करते समय किन-किन बातों का ध्यान देना चाहिए?
2. विक्रयकर्त्ता की नियुक्ति की विधि का वर्णन करें ?
3. एक सफल विक्रेता के कौन-कौन से गुण है ? समझाकर लिखें ?
4. एक सफल विक्रयकर्त्ता में क्या-क्या आवश्यक गुण होते हैं ? उनका वर्णन कीजिए ?
5. विक्रयकर्त्ताओं के विभिन्न प्रकार क्या हैं ? संक्षेप में वर्णन कीजिए ?

अध्याय - 17
विक्रय शक्ति प्रबन्ध
(Sale Force Management)

विक्रय शक्ति
(Sales Force)

किसी उपक्रम के विक्रय कार्य में कार्यरत् कर्मचारियों अर्थात् विक्रयकर्ताओं, विक्रय प्रतिनिधियों व पर्यवेक्षकों को सामूहिक रूप में विक्रय शक्ति कहा जाता है। अर्थात् विक्रय विभाग में कार्यरत् जनशक्ति विक्रय शक्ति कहलाती हैं।

विक्रय शक्ति प्रबन्ध
(Management of Sales Force)

विक्रय शक्ति प्रबन्ध से आशय विक्रय शक्ति की प्राप्ति, विकास, अनुरक्षण, निदेशन व नियन्त्रण से है। विक्रय शक्ति प्राप्ति (Procurement) से आशय विक्रयकर्ताओं आदि की भर्ती, चयन, नियुक्ति व पदस्थान से है। इनका पूर्ववर्ती कार्य, विक्रय शक्ति नियोजन भी विक्रय शक्ति प्रबन्ध का ही अंग है। विक्रय शक्ति के विकास (Development) का अर्थ है इन्हें प्रशिक्षण देना तथा उनके वैयक्तिक विकास के कार्य करना। नियोजित विक्रय शक्ति के पारिश्रमिक, प्रशासन, पदोन्नति, स्थानान्तरण, कल्याण व सामाजिक सुरक्षा आदि की व्यवस्था करना उनका अनुरक्षण कहलाता है। ताकि वे उपक्रम को छोड़कर न जायें व पूरी निष्ठा से कार्य करें।

विक्रय शक्ति को कार्य का आवंटन, मार्गदर्शन, अभिप्रेरण व नेत त्व प्रदान करना विक्रय शक्ति का निर्देशन (Direction) है जिससे विक्रय शक्ति विक्रय लक्ष्यों की प्राप्ति की ओर पूर्ण निष्ठा से अग्रसित हो सकें। विक्रय शक्ति का नियन्त्रण का अर्थ है विक्रय शक्ति के कार्य निष्पत्ति का नियमित मूल्यांकन, निश्चित प्रमापों से तुलना तथा प्रमापों से विचलन पाये जाने की दशा में सुधारात्मक उपाय करना।

सेविवर्गीय प्रबन्ध तथा विक्रय शक्ति
(Personal Management & Sales Function)

विक्रय शक्ति द्वारा विक्रय कार्य सम्पन्न किया जाता है। अतः विक्रय शक्ति प्रबन्ध एक महत्त्वपूर्ण कार्य है जिसे प्रभावशाली ढंग से निष्पादित करके ही विक्रय कार्य में दक्षता लाई जा सकती है। विक्रय प्रबन्ध का दायित्व विक्रय लक्ष्यों की प्राप्ति है। अतः इस दायित्व की पूर्ति में सहयोगी विक्रय शक्ति का प्रबन्ध सामान्यतः विक्रय प्रबन्ध को ही सौंपा जाता है। परन्तु वास्तव में कार्मियों की प्राप्ति, विकास व अनुरक्षण कर्मचारी विभाग के कार्य होने के कारण ये सेविवर्गीय प्रबन्ध के कार्यक्षेत्र कहलाते हैं। यदि विक्रय विभाग स्वयं इन कार्यो का निष्पादन करता है तो यह सेविवर्गीय प्रबन्ध में प्रक्षेपण या विस्तार माना जाता है।

विक्रय प्रबन्धक को विक्रय शक्ति के सम्बन्ध में अग्रलिखित कार्य करने होते हैं :

1. **विक्रय शक्ति नियोजन** – इस आयोजन के अर्न्तगत विक्रेताओं आदि की संख्यात्मक व गुणात्मक आवश्यकताओं का निर्धारण किया जाता है ताकि यह तय किया जा सके कि कितने व किस प्रकार के तथा किस योग्यता वाले विक्रय कर्मियों की आवश्यकता होगी ?
2. **भर्ती** – भर्ती का अर्थ रिक्त पदों हेतु अधिक से अधिक संख्या में वांछित योग्यता वाले, प्रत्याशिओं को आक ष्ट कर उन्हें आवेदन की प्रेरणा देने से है ताकि उचित व्यक्तियों का चुनाव किया जा सके।
3. **चुनाव या चयन** – इसके अर्न्तगत आवेदकों में से साक्षात्कार द्वारा योग्य व्यक्तियों को चयनित करके नियुक्ति की जाती हैं।
4. **प्रशिक्षण व विकास** – जिन व्यक्तियों का चुनाव किया जाता है उनको काम पर भेजने से पहले प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाती है।
5. **पारिश्रमिक, प्रशासन, कल्याण व सामाजिक सुरक्षा** – जिन व्यक्तियों का चुनाव किया जाता है उनका पारिश्रमिक, उनका पदस्थापन, कल्याण व सामाजिक सुरक्षा के सम्बन्ध में विचार कर व्यवस्था की जाती है।
6. पदस्थापन, स्थानांतरण, पदोन्नति, पदावनयन, प्रतिनियुक्ति, छुट्टियों का अभिलेख, अनुशासन, परिवाद निवारण, अभिप्रेरण, नेत त्व व मनोबल सुधार आदि।

विक्रय शक्ति नियोजन की आवश्यकता व महत्त्व

(Need and Importance of Sales Force Planning)

1. श्रमिकों, विक्रेताओं एवं प्रबन्धकों की आवश्यकता के बारे में अग्रिम अनुमान लगाने के लिए विक्रय शक्ति नियोजन की आवश्यकता होती है।
2. भर्ती तथा चयन की उचित प्रक्रिया अपनाने के लिए विक्रय शक्ति नियोजन करना आवश्यक है।
3. जनशक्ति की अधिकता तथा अभाव से उत्पन्न होने वाले दुष्प्रभाव से बचने के लिए विक्रय शक्ति नियोजन किया जाता है।
4. विक्रय जन-शक्ति पर आने वाली लागत को नियंत्रित करने के लिए विक्रय शक्ति नियोजन किया जाता है।
5. कर्मचारियों व अधिकारियों के बीच उत्पन्न होने वाली अनावश्यक संघर्षों व विवादों पर नियंत्रण करने के लिए विक्रय शक्ति नियोजन करना होता है।
6. उपक्रम की विक्रय शक्ति की दक्षता में व द्धि के लिए भी नियोजन आवश्यक होता है।
7. सही योग्यता वाले व्यक्तियों का चुनाव करने के लिए विक्रय शक्ति नियोजन की आवश्यकता होती है।
8. उपक्रम में आवश्यक विक्रय जन शक्ति की पूर्ति के लिए।
9. आवश्यक जनशक्ति विकास कार्यक्रमों को अधिक से अधिक प्रभावी बनाने के लिए विक्रय शक्ति नियोजन आवश्यक समझा जाता है।

विक्रय शक्ति के प्रकार को तय करना

विक्रय शक्ति के प्रकार को तय करने से आशय विक्रय प्रबन्धक के उस निर्णय से है जिसमें वह निर्णय लेता है -

1. संस्था में किस प्रकार के विक्रयकर्त्ता चाहिए, तथा
2. कितनी संख्या में विक्रयकर्त्ता चाहिए।

1. **किस प्रकार के विक्रयकर्त्ता चाहिए –** विक्रेता कितने प्रकार के होते हैं इस संबध में अनेक विद्वानों ने भिन्न-भिन्न प्रकारों के विक्रयकर्त्ताओं का वर्णन किया है -
   (i) विक्रयशाला के विक्रेता-फुटकर विक्रेता तथा थोक व्यापार के विक्रेता ;
   (ii) यात्री विक्रेता ;
   (iii) देख-रेख करने वाले तकनीकी विशेषज्ञ विक्रेता ;
   (iv) विशिष्ट वस्तु के विक्रेता ;
   (v) निर्यातकर्ताओं का विक्रेता ;
   (vi) औद्योगिक माल के विक्रेता आदि।

   उर्पयुक्त विक्रयकर्त्ताओं में से किस प्रकार के विक्रयकर्त्ता हमें चाहिए इसे पहले तय करना पड़ता है। सही कार्य पर सही व्यक्ति की नियुक्ति हो, इसके लिए कार्य-विश्लेषण तथा कार्य-विवरण तैयार करके वैज्ञानिक आधार पर विक्रयकर्त्ताओं का चयन किया जाता हैं।

2. **किस प्रकार के विक्रयकर्त्ता चाहिए? –** विक्रयकर्त्ता कई प्रकार के होते हैं ; जैसे उपभोक्ता माल के विक्रयकर्त्ता, व औद्योगिक माल के विक्रयकर्त्ता, आन्तरिक विक्रयकर्त्ता व बाहरी विक्रयकर्त्ता, थोक विक्रयकर्त्ता व फुटकर विक्रयकर्त्ता, यात्री विक्रयकर्त्ता, आदि। इस प्रकार पहले यह तय करना पड़ता है कि कितने और किस प्रकार के विक्रयकर्त्ता चाहिए।

   सही कार्य पर सही व्यक्ति की ही नियुक्ति हो, इसके लिए कार्य-विश्लेषण एवं कार्य-विवरण तैयार किये जाते हैं। कार्य-विश्लेषण (Job Analysis) दो शब्दों-कार्य (Job), एवं विश्लेषण (Analysis) के योग से बना होता है। कार्य का अर्थ कर्त्तव्य एवं उत्तरदायित्वों के संग्रह से लगाया जाता है जबकि विश्लेषण को गहन परीक्षण की प्रक्रिया माना जाता है। **फिलिप्पों** (Flippo) के अनुसार, *"कार्य विश्लेषण एक विशिष्ट कार्य की क्रियाओं एवं उत्तरदायित्वों से सम्बन्धित सूचनाओं के अध्ययन एवं एकत्रीकरण की प्रक्रिया है।"* कार्य-विवरण (Job Description) कार्य-विश्लेषण का लिखित कथन है। इसी को इस प्रकार कहा जा सकता है कि कार्य-विश्लेषण द्वारा प्रदत्त सूचनाओं का लिखित सारांश ही कार्य-विवरण कहलाता है। **कमिंग** (Coming) के अनुसार, *"कार्य-विवरण एक विशिष्ट कार्य के उद्देश्य, क्षेत्र कर्त्तव्यों एवं उत्तरदायित्वों का व्यापक कथन है। "* कार्य-विवरण में मुख्य रूप से इन बातों का समावेश होता है -
   (i) कार्य का नाम व उपनाम ;
   (ii) कार्य सारांश (Job Summary) - इसमें मुख्यतया कर्त्तव्यों एवं उत्तरदायित्वों का विवरण लिखा जाता है ;
   (iii) प्रशिक्षण ; एवं
   (iv) कार्य की दशाएँ।

3. **कितनी संख्या में विक्रयकर्त्ता चाहिए** - विक्रयकर्त्ताओं की संख्या का अनुमान विपणन के आधार पर लगाया जा सकता है। विक्रयकर्त्ताओं की वास्तविक संख्या का निर्धारण निम्नलिखित आधारों पर किया जाता है -
   (i) भावी विक्रय के अनुमान के आधार पर।

(ii) सम्भावित रिक्त स्थानों के आधार पर।

(iii) एक विक्रयकर्त्ता द्वारा बिक्री की मात्रा के अनुमान के आधार पर।

विक्रयकर्त्ताओं का चुनाव मुख्यतः चार प्रकार से किया जाता है -

1. मालिक के द्वारा,
2. विक्रय प्रबन्धक के द्वारा,
3. सेविवर्ग विभाग द्वारा, तथा
4. बाहरी संस्थाओं द्वारा।

छोटी संस्थाओं में विक्रयकर्त्ताओं का चुनाव

1. उसके मालिक के द्वारा किया जाता है, लेकिन जब व्यवसाय का आकार बढ़ जाता है तो यह कार्य मालिक स्वंय नहीं करता है। वह इस कार्य का भार या तो (1) विक्रय प्रबन्धक को सौंप देता है या (2) व्यवसाय में सेवीवर्गीय विभाग (Personnel Department) की स्थापना कर उसको सौंप देता है।
2. कुछ संस्थाएं बाहरी संस्थाओं की सहायता से भी यह कार्य करती हैं। भारत में बड़ी-बड़ी संस्थाएं जैसे श्रीराम केमीकल इण्डस्ट्रीज, नई दिल्ली, हिन्दुस्तान स्टील लिमिटेड, रांची, टाटा आइरन एण्ड स्टील कम्पनी लिमिटेड, जमशेदपुर, एस्कोर्ट लिमिटेड, फरीदाबाद, स्टील ऑथोरिटी ऑफ इण्डिया लिमिटेड, आदि ने अपने स्वयं के नियुक्ति विभाग स्थापित कर रखे हैं जो विक्रयकर्त्ताओं के चुनाव का कार्य करते हैं। विक्रयकर्त्ताओं के चुनाव में सहायता करने के लिए भारत में डेटामेटिक्स निगम, नई दिल्ली ; मान सिंगल एसोसिएट्स मैनेजमेन्ट कन्सलटेन्टस, नई दिल्ली, आदि कुछ संस्थाएं भी है। कभी कभी यह संस्थाएं चुनाव की पूर्ण क्रियाएं कर चुने हुए व्यक्ति के नाम के पैनेल को भी अपने ग्राहक को दे देती है।

विक्रय शक्ति का नियोजन प्रक्रिया

(Process of Sales Force Planning)

विक्रय शक्ति नियोजन प्रक्रिया की द ष्टि से विक्रय शक्ति नियोजन अल्पकालीन व दीर्घकालीन हो सकता है जिन्हें निम्नलिखित चरणों में पूरा किया जाता है -

(I) अल्पकालीन विक्रय शक्ति नियोजन

(Short Term Sales Power Planning)

अल्पकालीन विक्रय शक्ति नियोजन प्रक्रिया को निम्न चरणों में पूरा किया जाता है -

1. **व्यासायिक पूर्वानुमान –** सर्वप्रथम उपक्रम की आगामी वर्ष की बिक्री एवं आगामी वर्ष के कार्यो का अनुमान लगाया जाता है, यही जनशक्ति आवश्यकता के पूर्वानुमान का आधार होता है।
2. **रिक्तता तालिकाएँ –** व्यावसायिक पूर्वानुमान के बाद उन रिक्त पदों की तालिकाएँ तैयार की जाती हैं जिन्हें आगामी वर्ष में भरा जाना है।
3. **कार्य विवरण व विशिष्टता विवरण –** इसके उपरान्त कार्य विवरणों व विशिष्टता या अपेक्षा विवरणों से विक्रयशक्ति की गुणात्मक आवश्यकताओं का निर्धारण किया जाता है।

4. **प्रशिक्षण आवश्यकताओं का निर्धारण –** वर्तमान एवं भावी कर्मचारियों को किस प्रकार का प्रशिक्षण दिया जाये, इसका निर्धारण भी प्रक्रिया का महत्त्वपूर्ण अंग है।

5. **विद्यमान जनशक्ति का आन्तरिक समायोजन –** यदि विद्यमान जनशक्ति अर्थात् श्रमिकों व अधिकारियों के कार्य का आबंटन ठीक से नहीं हुआ है, तो उसका उचित समायोजन भी आवश्यक है।

(II) दीर्घकालीन विक्रय शक्ति नियोजन

(Long Term Sales Power Planning)

1. **भावी परिस्थितियों का पूर्वानुमान –** दीर्घकाल की अवधि भिन्न-भिन्न उपक्रमों के लिए भिन्न-भिन्न होती है। यह पाँच वर्ष से दस वर्ष तक की हो सकती है। सर्वप्रथम इस विचाराधीन अवधि में होने वाले परिवर्तनों का अनुमान लगाया जाता है।

2. **उपक्रम की भावी गतिविधियों का पूर्वानुमान –** भावी परिवर्तनों का उपक्रम पर क्या प्रभाव होगा, इसका विश्लेषण करके यह अनुमान लगााने का प्रयास किया जाता है, कि इस विचाराधीन अवधि में उपक्रम के क्रियाकलाप कैसे हों ?

3. **भावी विक्रयशक्ति आवश्यकताओं का निर्धारण –** भविष्य में विक्रय शक्ति आवश्यकताएँ कितनी रहेंगी एवं उनमें किस प्रकार की योग्यताओं की आवश्यकता होगी। इस बात का अग्रिम निर्धारण भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। उपक्रम के वर्तमान विक्रय शक्ति नियुक्ति एवं प्रशिक्षण कार्यक्रम इन तथ्यों के द ष्टिगत निर्धारित किए जाने चाहिए।

विक्रय शक्ति प्रबन्ध के अन्तगर्त किए जाने वाले प्रमुख कार्य भर्ती, चयन, प्रशिक्षण, पारिश्रमिक, भुगतान, अभिप्रेरण, पर्यवेक्षण व नियन्त्रण आदि हैं।

उपयोगी प्रश्न

(Useful Question)

1. विक्रय शक्ति प्रबन्ध से आप क्या समझते हैं ? विक्रय प्रकार्य के अन्तर्गत सेविवर्गीय प्रबन्ध को समझाइए।
What is meant by Sales Force Management ? Also describe Personnel Management in Sales Function.

2. विक्रय शक्ति नियोजन को परिभाषित करिये। विक्रय शक्ति नियोजन की आवश्यकता व महत्त्व को भी समझाइए।
Define Sales Force Planning ? Also describe need and Importance of Sales Force Planning.

3. निम्न पर टिप्पणी लिखिए :
   (i) विक्रयशक्ति नियोजन प्रक्रिया (Process of sales force planning) ;
   (ii) दीर्घकालीन विक्रय शक्ति नियोजन (Long term sales force planning)

अध्याय - 18
विक्रय शक्ति की प्राप्ति (भर्ती व चयन)
(Procurement (Recruitment and Selection) of Sales Force)

विक्रय शक्ति की प्राप्ति
(Procurement of Sales Force)

विक्रय शक्ति प्राप्त करने का कार्य दो चरणों में पूरा किया जा सकता है। प्रथम चरण के अन्तर्गत आवश्यक योग्यता रखने वाले व्यक्तियों की उपलब्धि के स्त्रोतों को तय किया जाता है तथा उन्हें उचित विधि से अपनी संस्था के प्रति आकृष्ट करने के प्रयास किये जाते हैं ताकि इस उपक्रम में रिक्तियों के लिए अधिक से अधिक संख्या में आवेदन प्राप्त किए जा सकें। यह क्रिया भर्ती कहलाती है। चयन प्रक्रिया दूसरा चरण होता है जिसमें विभिन्न आवेदकों में से आवश्यक संख्या में अनुकूलतम व्यक्तियों को चुनकर नियुक्त किया जाता है।

भर्ती
(Recruitment)

सामान्य अर्थ में भर्ती से आशय उपक्रम के रिक्त पदों के लिए पर्याप्त संख्या में आवश्यक योग्यता रखने वाले व्यक्तियों को आकृष्ट करने एवं उन्हें संस्था में भर्ती होने के लिए प्रोत्साहित करने से है।

प्रो० ब्यूल के शब्दों में, ''किसी विक्रय पद के लिए सर्वोतम उपलब्ध प्रार्थियों की सक्रिय खोज करना ही भर्ती है।''

फिलिप्पों के अनुसार, '' भर्ती संभावित कर्मचारियों की खोज करने एवं उन्हें उपक्रम में विभिन्न पदों के लिए आवेदन करने के लिए प्रेरित करने की प्रक्रिया है।''

क्योंकि विक्रय विभाग की कुशलता, प्रभावशीलता काफी सीमा तक भर्ती की प्रक्रिया पर ही निर्भर करती है अतः भर्ती की प्रक्रिया जितनी व्यापक एवं प्रभावी होगी उतने ही अधिक लोग आवेदन करेंगे तथा उतनी ही अधिक चुनाव में स्वायत्तता प्राप्त होगी इससे श्रेष्ठतम व्यक्तियों का चुनाव सम्भव होगा।

भर्ती के स्त्रोत (Source of Recruitment) – व्यापारिक संस्थाओं में भर्ती के स्त्रोत दो भागों में विभक्त किये जा सकते हैं -

(I) आन्तरिक स्त्रोत

(II) बाह्य स्त्रोत

(I) आन्तरिक स्त्रोत – उपक्रम में कार्य करने वाले व्यक्तियों से ही रिक्त पदों की पूर्ति करना आन्तरिक स्त्रोतों से पूर्ति कहलाती है। आन्तरिक पूर्ति के स्त्रोत निम्न हो सकते हैं :

(1) **पदोन्नति** – जब किसी उच्च पद के रिक्त स्थान को भरने के लिए निम्नवर्ती पदों पर कार्य करने वाले कर्मचारियों में से उपयुक्त व्यक्ति को पदोन्नति दी जाती है तो पहले से कार्यरत कर्मचारियों को बेहतर कार्य की प्रेरणा मिलती है, उसका मनोबल उच्च रहता है तथा वे संस्था में ही बने रहते हैं। जैसे अकाउँटैन्ट के पद से कार्यालय अधीक्षक के पद पर पदोन्नति देकर पूर्ति करना।

(2) **प्रतिनियुक्ति** – अस्थायी रूप से बढ़े हुए कार्यभार अथवा रिक्त हुए पद के लिए सामान्यतः नयी नियुक्तियाँ न करके उपक्रम में ही कार्य करने वाले व्यक्तियों को ही इन पर अस्थाई प्रतिनियुक्ति देकर कर्मचारियों की भर्ती की जा सकती है।

(3) **स्थानान्तरण** – यदि कोई विक्रेता किसी एक क्षेत्र या वस्तु विभाग में अतिरिक्त होता हे तो उसे आवश्यकता वाले क्षेत्रों या वस्तु विभागों में स्थानान्तरित करके भर्ती की आवश्यकता को पूरा किया जाता है।

(4) **पदावनति** – किसी व्यक्ति पर गंभीर आरोप होने पर अथवा उपक्रम के कार्य स्तर में कमी होने पर उसकी पदावनति करके निचले पदों की आवश्यकता की पूर्ति की जाती है।

आन्तरिक स्त्रोतों से भर्ती व्यय रहित प्रक्रिया है। इन्हें कम्पनी की नीतियों एवं वातावरण की समुचित जानकारी होने से उन्हें प्रशिक्षण की भी आवश्यकता नहीं होती। इसका दोष यह है कि उपक्रम को बेहतर प्रतिभाओं का लाभ नहीं मिलता। अतः अच्छा यह होता है कि आन्तरिक एवं बाहरी स्त्रोतों का उचित अनुपात बनाकर रखा जाये।

(II) बाह्य स्त्रोत (External Source) – विक्रय शक्ति के भर्ती के बाह्य स्त्रोतों से आशय उन स्त्रोतों से है जिनके माध्यम से विक्रेता का चुनाव करने के लिए संस्था को भौतिक सीमाओं के बाहर जाना पड़ता है। भर्ती के बाह्य स्त्रोत निम्न हैं :

(1) **भूतपूर्व विक्रयकर्त्ता** – यदि किसी कारणवशं कोई विक्रेता संस्था को छोड़ अन्य स्थान पर चला गया हो तथा पुनः यहाँ वापिस आना चाहता हो तथा उसकी आवश्यकता हो तो इनका चुनाव करके आवश्यकता की पूर्ति की जा सकती है।

(2) **प्रतियोगी उपक्रमों से** – विक्रेताओं की भर्ती अन्य प्रतियोगी फर्मों में नियुक्त अच्छे व कुशल विक्रेताओं को अधिक पारिश्रामिक तथा सुविधाएं देने का प्रस्ताव करके अपने उपक्रम की और आकर्षित किया जा सकता है।

(3) **अन्य उपक्रमों से** – अन्य व्यवसायों मे लगी फर्मों में से कार्य करने वाले कुशल विक्रयकत्ताओं में से भी भर्ती की जा सकती है। ऐसे विक्रयकर्त्ताओं को गहन प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं होती।

(4) **ग्राहकों तथा उनके कर्मचारियों में से** – फर्म के ग्राहक फर्म द्वारा निर्मित उत्पादों के बारे में अवगत होते हैं। अतः इनके इच्छुक होने पर उपयुक्त व्यक्ति का चुनाव करके विक्रेता के पद पर कार्य करने के लिए नियुक्त किया जा सकता है। फर्म अपने संस्थागत क्रेताओं, जैसे थोक व फुटकर व्यापारियों के यहाँ कार्य करने वाले कर्मचारियों को भी नियुक्त कर सकता है।

(5) **नव प्रशिक्षण** – बड़े उद्योगों को नव प्रशिक्षण अधिनियम 1961 के अन्तर्गत नव प्रशिक्षुओं को विभिन्न कार्यों में प्रशिक्षण देने का दायित्व सौंपा जाता है। इन प्रशिक्षुओं में यदि कोई योग्य व्यक्ति है तो उन्हें रिक्त पदों पर नियुक्त किया जा सकता है।

(6) **पूर्व आवेदनकर्ता** – उपक्रम के पूर्व विज्ञापनों या स्वतः ही आवेदन करने वाले व्यक्ति भी भर्ती के एक अच्छे मित्तव्ययी स्त्रोत हो सकते हैं।

(7) **वर्तमान कर्मचारियों के परिवारजन, रिश्तेदार व मित्र** – रिक्त पद होने पर अपने ही कर्मचारियों के परिजनों को भर्ती करके कर्मचारियों की आवश्यकता की पूर्ति की जाती है। इन्हें वरीयता देने से विद्यमान कर्मचारियों को उपक्रम के प्रति अपनत्व जाग त होता है।

(8) **द्वार पर आवेदन** – कई आवेदक कार्य की तलाश में अपने आप चलकर आ जाते हैं, इनमें से भी उचित योग्यता व दक्षता वाले आवेदकों पर नियुक्ति के लिए विचार किया जा सकता है।

(9) **रोजगार कार्यालय** – उपक्रम रोजगार कार्यालयों से योग्य व्यक्तियों के नाम मंगाकर उनका साक्षात्कार करके भी योग्य विक्रेताओं का चुनाव किया जा सकता है।

(10) **शिक्षण एवं प्रशिक्षण संस्थायें** – उपक्रम में विभिन्न पदों की पूर्ति हेतू विद्यालयों, महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों, प्रशिक्षण संस्थानों से नाम मगांकर या परिसर साक्षात्कार करके योग्य व्यक्तियों का चुनाव करके भी पदों को भरा जा सकता है।

(11) **विज्ञापन** – समाचार पत्रों में विज्ञापन देकर पर्याप्त संख्या में आवेदकों को प्रेरित किया जा सकता है। इस विधि से पर्याप्त संख्या में आवेदन आने से योग्य व्यक्तियों का चुनाव सभ्भव हो जाता है।

(12) **श्रम संघ** – गैर अधिकारी पदों के लिए श्रमसंघों के माध्यम से भी प्रत्याशी उपलब्ध कराये जा सकते हैं। कई उपक्रमों के साथ तो श्रम संघ ऐसा अनुबन्ध भी रखते हैं।

(13) **''कार्य चाहिए'' विज्ञापन** – कभी-कभी कोई विक्रेता अपने वर्तमान नियोजक से सन्तुष्ट न होने पर स्वयं 'कार्य चाहिए' का विज्ञापन देता है। नियोक्ता इस प्रकार के व्यक्तियों से सम्पर्क करके नियुक्तियाँ दे सकता हैं।

(14) **निजी रोजगार एजेन्सियाँ** – ऐसी एजेन्सियाँ शीघ्र शुल्क लेकर नियोक्ताओं को आवश्यक संख्या में आवश्यक योग्यता रखने वाले अभ्यर्थी उपलब्ध कराती है।

(15) **ठेकेदारों या मध्यस्थों के माध्यम से भर्ती** – रोजगार ठेकेदार या मध्यस्थों की सहायता से भी भर्ती के कार्य को पूरा किया जा सकता है।

भर्ती की विशेषताएँ

(Characteristics of Recruitment)

भर्ती के मुख्य लक्षण या विशेषताएँ निम्न हैं :

(1) भर्ती योग्य विक्रेताओं के **खोज की प्रक्रिया** है।

(2) इसके द्वारा विक्रेताओं को **आवेदन के लिए प्रेरित** किया जाता है।

(3) यह एक **सकारात्मक प्रक्रिया** है।

(4) भर्ती तथा चुनाव **दोनों अलग-अलग** है।

(5) भर्ती वर्तमान तथा भावी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए हो सकती है।

(6) यह संस्था में **सतत् चलने वाली** प्रक्रिया है।

विक्रेताओं की भर्ती की आवश्यकता
(Need of Recruitment of Salesman)

किसी भी उपक्रम में विक्रेताओं को भर्ती करने के अनेक कारण हो सकते हैं। इनमें से प्रमुख कारण निम्न हैं :

(1) **नए उपक्रमों के लिए आवश्यक** – जब कोई उपक्रम स्थापित किया जाता हे तो उसे अपने विक्रय विभाग का संचालन करने के लिए कुछ नये विक्रेताओं की भर्ती करने की आवश्यकता होती है।

(2) **विक्रय मात्रा को बनाये रखने के लिए** – कटु प्रतियोगिता के कारण विक्रय मात्रा में कमी आने की सम्भावना रहती है। नए विक्रेताओं की भर्ती करके नए बाजारों की खोज की जा सकती है जिससे विक्रय के वर्तमान स्तर को बनाये रखा जा सकता है।

(3) **संस्था का विकास** – प्रत्येक संस्था का लक्ष्य विकास एवं विस्तार करना होता है। विकास के कारण बढ़ती हुई बिक्री तथा विक्रय क्षेत्रों के लिए विक्रेताओं को भर्ती करने की आवश्यकता होती है।

(4) **स्थानान्तरण** – जब विक्रेताओं का एक विभाग से दूसरे विभाग में स्थानान्तरण हो जाता है तो उनके रिक्त पदों को भरने के लिए भर्ती की जाती है।

(5) **भावी आवश्यकताओं की पूर्ति** – भविष्य में किन्हीं आकस्मिक कारणों से विक्रेताओं की आवश्यकता पड़ सकती है। ऐसी दशा में पूर्व में भर्ती किये गये विक्रेताओं मे से विक्रय की आकस्मिक जरूरतें पूरी की जा सकती हैं।

(6) **पदोन्नति** – किन्हीं कर्मचारियों की पदोन्नति के कारण पद रिक्त होने पर भर्ती की आवश्यकता होती है।

(7) **विक्रेताओं का आवर्त** – स्थानान्तरण, सेवा-निव त्ति, सेवा-समाप्ति, त्यागपत्र, म त्यु आदि अनेक कारणों से विक्रेताओं मे हेर-फेर होता रहता है। इन कारणों से रिक्त हुए पदों को भरने के लिए भी भर्ती आवश्यक हो जाती है।

(8) **तकनीकी परिवर्तन** – संस्था के उत्पादों की डिजाइन, किस्म, आकार, प्रकार, उपयोग आदि में कई परिवर्तन हो जाते हैं। इन नये उत्पादों की बिक्री के लिए नये विक्रेताओं की भर्ती की आवश्यकता पड़ सकती है।

(9) **अन्य कारण** – विक्रय संवर्द्धन की नई योजनाएँ लागू करने, नये उत्पादों को बाजार में प्रस्तुत करने, घर-घर विक्रय करने, व्यापारी ग्राहकों के विक्रेताओं को प्रशिक्षित करने तथा नए कार्यों एवं दायित्वों का निर्वाह करने के लिए भी नई भर्ती की आवश्यकता पड़ती है।

विक्रेताओं की भर्ती की प्रक्रिया
(Process of Recruitment of Salesman)

विक्रयकर्त्ता की भर्ती करने के लिए निम्न चार कार्य किए जाते हैं :

I. विक्रयकर्त्ताओं की प्रकृति का निर्धारण
II. विक्रयकर्त्ताओं की संख्या का निर्धारण
III. भर्ती के स्त्रोतों का निर्धारण

I. विक्रयकर्त्ताओं की प्रकृति का निर्धारण - विक्रयकर्त्ताओं की भर्ती के लिए सर्वप्रथम विक्रय कार्य का विश्लेषण करना होती है और कार्य विश्लेषण तैयार होता है इससे हमें यह ज्ञात होता है कि किस प्रकार के विक्रयकर्त्ताओं की भर्ती करनी है। इसलिए विक्रयकर्त्ताओं के चयन के पहले चरण के लिए निम्न तीन कार्य किए जाते हैं - (i) विक्रय कार्य विश्लेषण (ii) विक्रय कार्य विवरण (iii) विक्रय कार्य विशिष्ट विवरण।

(i) **विक्रय कार्य विश्लेषण** – इससे यह ज्ञात होता है कि विक्रयकर्त्ताओं को क्या करना है ? कभी-कभी हम कार्य करने की विधियों के निर्धारण तक को इसमें सम्मिलित कर लेते हैं। **स्टिल, कंडिक एवं गोवानी** के अनुसार, ''विक्रय कार्य विश्लेषण, मूलतः कार्य-विवरण हेतु आवश्यक सूचनाओं के विकास का मामला है जो कार्य के उद्देश्यों का निर्धारण करता है और यह प्रकट करता है कि विक्रयकर्त्ता क्या करते हैं और उन्हें कार्य के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए क्या करना चाहिए ?''

संक्षेप में कहा जाता है विक्रय कार्य विश्लेषण द्वारा विक्रय-कार्यों की प्रकृति का निर्धारण किया जाता है। उसकी योग्यता को तय किया जाता है, दायित्व एवं कर्त्तव्य निश्चित किए जाते हैं, तथा नियोजित दायित्व और ग्राहक सम्बन्धों की प्रकृति निश्चित की जाती है जिससे कि इन सबको ध्यान में रखते हुए विक्रयकर्त्ताओं की भर्ती एवं चुनाव किया जा सके।

(ii) **विक्रय कार्य विवरण** – यह एक लिखित विवरण होता है जो स्पष्ट करता है कि विक्रयकर्त्ताओं को क्या करना है और विक्रय प्रबन्धक क्या धारणा रखते हैं ? विक्रय-कार्य विवरण सामान्यतया निम्नलिखित निष्कर्षों को सम्मिलित करते हैं - (i) कार्य का शीर्षक (ii) विक्रयकर्त्ताओं की अधिकार सत्ता (iii) विक्रयकर्त्ताओं के उत्तरदायित्व एवं उनकी जवाबदेही (iv) विक्रयकर्त्ताओं के अन्य कार्यों के साथ सम्बन्ध (v) विक्रयकर्त्ताओं के दैनिक कार्य (vi) पारिश्रमिक व्यवस्था (vii) पदोन्नति एवं प्रगति के अवसर।

(iii) **विक्रय कार्य विशिष्ट विवरण** – विक्रय कार्य विशिष्ट विवरण विक्रयकर्त्ताओं के उन गुणों ओर योग्यताओं का लिखित कथन होते हैं जो कि विक्रय कार्यों को भली प्रकार पूरा करने के लिए आवश्यक होते हैं। कार्य विवरणी में उल्लिखित कर्त्तव्यों एवं दायित्वों को योग्यता के समूहों में बदला जा सकता है ओर ये लिखित परिवर्तन योग्यता समूह ही कार्य-विशिष्ट बन जाते हैं।

व्यावहारिक रूप में विशिष्ट विवरणों के सम्बन्ध में कोई ठोस नियम नहीं है। अभी तक यह निश्चित नहीं हो पाया है कि आयु कितनी होनी चाहिए अथवा शिक्षास्तर कैसा होना चाहिए ? विक्रयकर्त्ता दिखने में कैसे होने चाहिए अथवा उनका मानसिक विकास स्तर या अनुभव कैसा होना चाहिए ? सामान्यतौर पर निम्न योग्यता-समूहों को शामिल किया जाना चाहिए -

(i) शारीरिक - आयु, ऊँचाई, वजन, दिखावट
(ii) मानसिक - शिक्षा, बुद्धिमता, मानसिक सन्तुलन, सर्तकता
(iii) अनुभव - व्यावासायिक एवं गैर-व्यावसायिक
(iv) व्यक्तित्व - स्वभाव, परिपक्वता, वाक्चातुर्य, पहल शक्ति, दायित्व वहन क्षमता आदि

II. **विक्रयकर्त्ताओं की संख्या का निर्धारण** – विक्रय शक्ति का आकार संख्या की अनुमानित बिक्री एवं उसके लाभ सम्बंधी उद्देश्यों पर निर्भर करती है। यदि कुल अनुमानित बिक्री में एक विक्रयकर्त्ता की बिक्री का भाग दे दो तो यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि कितने विक्रयकर्त्ताओं की आवश्यकता होगी।

अतः विक्रय शक्ति का पता लगाने के लिए निम्नलिखित फार्मूले का प्रयोग किया जा सकता है -

$N = S/P (1+ T)$

N = विक्रयकर्त्ताओं की संख्या

S = पूर्वानुमानित विक्रय

P = एक विक्रयकर्त्ता की कुल बिक्री

T = विक्रय शक्ति की बदलने की दर

III. **विक्रयकर्त्ताओं की भर्ती के स्त्रोतों का निर्धारण** – एक संस्था में समय-समय पर विक्रयकर्त्ताओं एव विक्रय प्रबन्धकों की नियुक्ति की आवश्यकता पड़ती है। जब संस्था शुरू होती है, उसका विस्तार होती है, उसका कोई विक्रय कर्मचारी छोड़कर चला जाता है या उसे निकाल दिया जाता है, सभी अवस्थाओं में नए कर्मचारियों की नियुक्ति करनी पड़ती है। विक्रय क्षेत्र में श्रम परिवर्तन अधिक है तो संस्था के लिए हानिकारक सिद्ध हो सकता है इसलिए एक संस्था विक्रयकर्त्ताओं की नियुक्ति की उचित व्यवस्था करती है।

विक्रय कर्मचारियों के चुनाव के लिए वही तकनीकें एवं विधियां प्रयोग मे लाई जाती हैं जो अन्य कर्मचारियों के चुनाव एवं प्रशिक्षण की होती है। प्रमुख विधियों का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया गया है -

संस्था के मानवीय साधनों की मांग को पूरा करने के लिए मुख्यतया दो स्त्रोत होते हैं – आंतरिक तथा बाह्य स्त्रोत। जब संस्था शुरू होती है तब सभी कर्मचारी बाह्य स्त्रोतों से प्राप्त किए जाते है। जब संस्था शुरू हो जाती है तब किसी कर्मचारी की पदोन्नति या हस्तांतरण द्वारा भर्ती की जा सकती है। प्रायः कोई भी संस्था दोनों प्रकार के स्त्रोतों का प्रयोग करती है। दोनों तरह के स्त्रोतों से उचित कर्मचारियों का चुनाव किया जाता है। स्त्रोतों का विवरण पहले दिया जा चुका है।

विक्रयकर्त्ता का चुनाव
(Selection of Salesmen)

किसी भी व्यापारिक संस्था की सफलता योग्य विक्रेताओं पर निर्भर होती है। कुशल विक्रेता संस्था में न केवल लाभों का स जन करते हैं, वरन् संस्था की ख्याति, प्रतिष्ठा तथा छवि का भी निर्माण करते हैं। अतः संस्था में योग्य, दक्ष तथा कर्त्तव्यनिष्ठ विक्रेताओं का चयन किया जाना चाहिये। किन्तु योग्य विक्रेताओं का चयन कर पाना विक्रय प्रबन्ध के समक्ष एक कड़ी चुनौती होती है। अतः विक्रेताओं के चयन में प्रबन्ध को सूझबूझ तथा सतर्कता बरतनी चाहिये। विक्रय प्रबन्ध की सफलता 'सही कार्य के लिए सही व्यक्ति' के चुनाव करने पर ही निर्भर करती है।

विक्रेता के चुनाव का अर्थ
(Meaning of the Selection of Salesmen)

नियोक्ता द्वार विभिन्न प्रत्याशियों में से कुछ को अपने लिए चुन लेना चुनाव कहलाता है। **डेल योडर** (Dale Yoder) के अनुसार, "चुनाव वह प्रक्रिया है जिसमें नियुक्ति हेतु प्रार्थियों को दो वर्गों में बांट दिया जाता है। वे जिन्हें नियुक्ति का प्रस्ताव किया जाना है और वे जिन्हें नियुक्ति का प्रस्ताव नहीं किया जाना है।" इस प्रकार विक्रेताओं के चयन का अर्थ है विक्रय कार्य के लिए उपलब्ध व्यक्तियों में से योग्य व्यक्तियों का चुनाव।

उचित चयन का महत्त्व
(Significance of Right Selections)

विक्रयकर्त्ता विक्रय विभाग या संगठन के महत्त्वपूर्ण सदस्य होते हैं। इनके द्वारा उपक्रम की वस्तुएं तथा सेवाएं वर्तमान तथा भावी ग्राहकों को बेची जाती हैं। इस प्रकार ये बिक्री में व द्धि करके संस्था को सम द्ध बनाते हैं। विक्रयकर्त्ताओं के महत्त्व को **लैविनी** (Levene) इस प्रकार स्पष्ट करते हैं, "उपक्रम कुछ भी बेचता हो – चाहे कैमिस्ट, टूथपेस्ट व दवाईयाँ, कार्यालय प्रबन्धकों की स्टेशनरी अथवा अधिशासियों को उपकरण, किन्तु अन्ततः विक्रयकर्त्ता पर ही कम्पनी की सम द्धि निर्भर करती है।" इस प्रकार विक्रेता व्यवसाय रूपी शरीर की मेरूदण्ड है। जिस पर व्यवसाय की स्थिति एवं विकास आधारित है। इस द ष्टि से संस्था में विक्रयकला में दक्ष विक्रेताओं का होना अत्यन्त आवश्यक है। उपयुक्त तथा कुशल विक्रेताओं के चयन के महत्त्व की आवश्यकता निम्न आधारों पर समझी जा सकती है :

1. **विक्रय का आधार :** व्यवसाय की बिक्री का बढ़ना, घटना या स्थिर रहना विक्रेताओं की कुशलता के स्तर से प्रभावित होता है। अत्यधिक कुशल एवं उपयुक्त विक्रेता व्यवसाय के बढ़े हुए विक्रय के स्तर को स्थिर रखने तथा व्यवसाय की प्रगति में सहायक होते हैं। एक कुशल विक्रेता संस्था की प्रतिष्ठा एवं ख्याति बढ़ाता है तथा विक्रय व द्धि में सहायता करते हैं। अतः व्यवसाय में एक कुशल सेवा का निर्माण करने के लिए विक्रेताओं का चयन पूर्ण सावधानी से करना चाहिये।
2. **अच्छे सम्बन्धों की स्थापना :** ग्राहकों से अच्छे सम्बन्ध ही उपक्रम के दीर्घ अस्तित्व व सतत् विकास के आधार होते हैं और उद्योग व वाणिज्य का विकास देश के सामाजिक-आर्थिक विकास के आधार होते हैं। इन सम्बन्धों की स्थापना और अनुरक्षण योग्य विक्रयकर्त्ताओं पर निर्भर करता है।
3. **ग्राहकों से अच्छे सम्बन्ध :** विक्रेता ही व्यवसाय के प्रबन्धकों तथा ग्राहकों के बीच संचार का महत्त्वपूर्ण माध्यम है। विक्रेता के ग्राहकों के साथ अच्छा व्यवहार, अपनी वस्तु के गुणों एवं श्रेष्ठता का विश्वास दिलाये रहता है, ग्राहक की शिकायतों के समाधान के लिए शीघ्र प्रयत्न करने से ग्राहक सन्तुष्ट रहते हैं तथा अपना समर्थन निरन्तर देते रहेंगे। अतः ग्राहक एवं व्यवसाय के बीच सन्तोषजनक सम्बन्धों की स्थापना की द ष्टि से भी उपयुक्त विक्रेताओं का चयन किया जाना आवश्यक है।
4. **कार्मिक आवर्तन में कमी :** विक्रेताओं का उपयुक्त चयन कार्मिक आवर्तन को कम करता है जिससे बार-बार चयन कार्य नहीं करना पड़ता अतः चयन व्ययों में कमी आती है।
5. **प्रशिक्षण व्ययों में कमी :** विक्रेताओं के उपयुक्त चयन से प्रशिक्षण व्यय कम करने पड़ते हैं। विक्रय शक्ति का निष्पादन व सन्तुष्टि उच्च होती है, जिससे मानवीय सम्बन्ध सुधरते हैं।
6. **ख्याति में व द्धि :** अच्छे विक्रेता संस्था की ख्याति में व द्धि करते हैं। अतः उपर्युक्त व्यक्ति के चयन से संस्था की ख्याति एवं प्रगति पर अच्छा प्रभाव पड़ता है।
7. **उच्च मनोबल :** सावधानीपूर्वक तथा निष्पक्ष रूप से योग्य विक्रेताओं के चयन से विक्रेताओं में अपनी योग्यता के प्रति एक विश्वास पैदा होता है जिससे उनका मनोबल बढ़ता है अतः कार्य निष्पादन पर अच्छा प्रभाव पड़ता है।
8. **योग्य कार्यकारी अधिकारियों की प्राप्ति :** विक्रेता के पद पर ठीक व्यक्ति का चयन हो जाने पर संस्था को अन्य पदों पर महत्त्वपूर्ण कार्य करने के लिए कुशल विक्रेताओं में से योग्य अधिशासी प्राप्त करना सरल हो जाता है।
9. **संस्था का विकास :** संस्था का विकास विक्रय पर निर्भर करता है। बाज़ार विस्तार से लाभों में व द्धि होती है जिससे भावी विकास संभव होता है जिनमें विक्रेताओं की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है।
10. **शान्त वातावरण :** योग्य व कुशल विक्रेता दलगत राजनीति से दूर रहकर संस्था में शान्ति व्यवस्था बनाने में सहायक सिद्ध होते हैं।

विक्रेताओं का चुनाव कौन करेगा ?

Who will Select the Salesman ?

1. **व्यवसाय का मालिक :** जब व्यवसाय का आकार छोटा होता है तब विक्रयकर्त्ताओं का चुनाव स्वयं मालिक के द्वारा ही कर लिया जाता है क्योंकि ऐसे उपक्रमों में विक्रय प्रबन्धक का पद नहीं होता। कपड़ा, बर्तन, पेय-पदार्थ, पुस्तकें आदि के स्थानीय दुकानों की दशा में विक्रयकर्त्ताओं का चुनाव स्वयं मालिकों द्वारा ही कर लिया जाता है।

2. **विक्रय प्रबन्धक द्वारा :** बड़े उपक्रमों में जहां विक्रय प्रबन्धक का पद होता है विक्रयकर्त्ताओं का चुनाव विक्रय प्रबन्धक द्वारा किया जा सकता है। जिन उपक्रमों में विभागीकरण की योजना विस्त त रूप में लागू होती है वहाँ विभागीकरण के अन्तर्गत एक प थक् विक्रय-विभाग होता है जिसका प्रबन्धक ही विक्रयकर्त्ताओं की नियुक्ति करता है।

3. **सेविवर्गीय विभाग द्वारा :** कुछ बड़े उपक्रमों में विक्रयकर्त्ताओं का चुनाव सेविवर्गीय विभाग द्वारा भी किया जाता है। सेविवर्गीय विभाग का कार्य योग्य एवं कुशल व्यक्तियों का चुनाव करना तथा उनके लिए आवश्यक प्रशिक्षण आदि की व्यवस्था करना होता है।

4. **चयन मण्डल द्वारा :** विशाल आकार के उपक्रमों में विक्रयकर्त्ताओं के चयन का कार्य चयन मण्डल द्वारा किया जाता है। उपक्रम अथवा विभाग अपनी आवश्यकता चयन मण्डल को बता देता है और चयन-मण्डल विज्ञप्ति निकाल कर (समाचार पत्रों आदि में) आवेदकों की परीक्षा अथवा साक्षात्कार अथवा दोनों के द्वारा उपयुक्त कर्मचारियों का चयन करते हैं और चयनित कर्मचारियों के नाम सम्बन्धित उपक्रम अथवा विभाग के पास भेज देते हैं। जैसे – बैंक कर्मचारी चयन मण्डल (Banking Service Selection & Recruitment Board)।

5. **बाहरी संस्थाओं द्वारा :** विक्रयकर्त्ताओं के चयन के कार्य में कभी-कभी बाहरी संस्थाओं की सहायता भी ली जाती है। ये संस्थायें भर्ती से लेकर चुनाव प्रशिक्षण व विकास तक के सभी कार्य स्वयं करती हैं, किन्तु इनके चुनाव की अन्तिम स्वीकृति नियोक्ता की ही होती है। ये संस्थाएं इस कार्य के लिए अपना अनुबन्धित शुल्क लेती हैं।

विक्रयकर्त्ताओं के चुनाव के आधार अथवा अपनाए जाने वाले सिद्धान्त

(Factors of Basis or Principles to be Followed in Selection of Saleman)

विक्रयकर्त्ताओं के चुनाव हेतु सभी निश्चित सिद्धान्तों का उल्लेख करना कठिन है, क्योंकि अलग-अलग व्यवसायों की अलग-अलग आवश्यकताएँ होती हैं किन्तु फिर भी इस सम्बन्ध में कुछ सामान्य सिद्धान्त निम्नलिखित हैं :

1. **विक्रय कला में अभिरुचि :** विक्रयकर्त्ता की चुनाव करते समय इस बात की ओर सबसे अधिक ध्यान देना चाहिए कि विक्रेता में विक्रय कार्य में अभिरुचि है या नहीं। ऐसे व्यक्तियों को ही चुनना चाहिए जो स्वाभाविक रूप से विक्रय कार्य में अभिरुचि रखते हों, क्योंकि अभिरुचि रखने वाले व्यक्ति ही सफल विक्रेता बन सकते हैं। विक्रय कार्य में अभिरुचि है या नहीं इस बात की जानकारी करने के लिए रिक्त आवेदन-पत्र में या साक्षात्कार के साथ आवश्यक प्रश्न पूछे जा सकते हैं अथवा कोई प थक अभिरुचि परीक्षण परीक्षा ली जा सकती है। यदि कोई व्यक्ति मात्र बेरोज़गार होने के कारण ही यह कार्य विवशता से स्वीकार कर लेता है तो वह उसे दूसरा कार्य मिलने पर छोड़ देता है इस द ष्टि से अभिरुचि परीक्षण आवश्यक है।

2. **समुचित शिक्षा और भाषा ज्ञान :** ऐसे ही व्यक्ति को विक्रेता के पद पर नियुक्त करना चाहिए जो समुचित रूप से शिक्षित हो तथ उसे दो या तीन बहु-प्रचलित भाषाओं (जैसे – अंग्रेजी व हिन्दी) व क्षेत्रीय भाषाओं व बोलियों का समुचित ज्ञान हो। शिक्षित व्यक्ति ग्राहकों से शिष्टता से वार्तालाप करके उन्हें सन्तुष्ट एवं प्रभावित कर सकता है। उसे बाजार, उत्पाद व सम्बन्धित कानूनों आदि का ज्ञान होने पर वह अपने कार्य को ठीक से सम्पादित कर सकती है।

3. **आयु :** विक्रयक्रर्ता के पद पर चुने जाने वाले व्यक्ति की आयु एक महत्त्वपूर्ण और गम्भीर प्रश्न है। कम आयु वाले व्यक्ति में उत्साह तो होता है पर धैर्य का अभाव हो सकता है। उसकी बात बड़ी आयु वाले व्यक्ति कई बार न तो ध्यान से सुनते हैं और न उनसे प्रभावित होते हैं। लेकिन उम्र बढ़ने पर व्यक्ति की शारीरिक क्षमता

घटती है, यात्रा आदि में थकान अधिक होती है। संवेदनशीलता घटती है इसलिए विक्रयकर्त्ता की आयु न बहुत कम व न बहुत ज्यादा होनी चाहिए।

4. **शारीरिक स्वस्थता :** शारीरिक द ष्टि से स्वस्थ विक्रयकर्त्ता अधिक कार्य कर सकते हैं व ग्राहकों पर भी अच्छा प्रभाव डालते हैं। अस्वस्थ अथवा विकलांग विक्रयकर्त्ता अप्रभावी होता है और अकुशल एवं महत्वाकांक्षा रहित भी हो सकता है। ऐसे विक्रयकर्त्ता का ग्राहकों पर कभी भी अनुकूल प्रभाव नहीं पड़ सकता। अतएव विक्रयकर्त्ता का चुनाव करते समय उसकी शारीरिक स्वस्थता पर भी पर्याप्त ध्यान दिया जाना चाहिए। चुनाव करने से पूर्व उनकी किसी योग्य चिकित्सक से शारीरिक जांच करा लेनी चाहिए कि उसकी शारीरिक योग्यता (द ष्टि, श्रवण शक्ति, बल आदि) सामान्य है।

5. **जातीयता तथा राष्ट्रीयता :** विक्रयकर्त्ता का चुनाव करते समय जातीयता एवं राष्ट्रीयता का भी ध्यान रखना चाहिए। किसी क्षेत्र में जिस धर्म भाषा व विशिष्ट जाति के लोग रहते हों वहाँ पर जहाँ तक संभव हो उसी धर्म भाषा व जाति को विक्रयकर्त्ता की नियुक्त किया जाना चाहिए। जहाँ तक राष्ट्रीयता का प्रश्न है, यदि विदेश में किसी भारतीय उत्पादन को बेचने के लिए विक्रेता नियुक्त करना हो, तो इस कार्य के लिए राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत व्यक्ति ही नियुक्त किया जाना चाहिए। ऐसा व्यक्ति राष्ट्रीयता की भावना से प्रभावित होकर लगन से कार्य करेगा। लेकिन कभी-कभी क्रेता देश का ही व्यक्ति नियुक्त करना भी उचित होता है। अतएव इस सम्बन्ध में विवेकपूर्ण निर्णय लेना चाहिए।

विक्रयकर्त्ताओं की चयन प्रक्रिया

(Selection Process of Salesman)

विक्रयकर्त्ताओं के चुनाव की प्रक्रिया में कई वैज्ञानिक विधियाँ हैं, जिनमें से उपयुक्त का उपयोग किया जा सकता है। इनमें से सबका सभी जगह उपयोग नहीं किया जाता है। इसका प्रमुख कारण यह है कि प्रत्येक फर्म में अपनी अलग दशाएं, कार्य अपेक्षाएं एवं समस्याएं होती हैं, जिनके अनुरूप ही चयन विधि अपनायी जानी चाहिए।

सभी संस्थाओं में समान प्रकार की चयन प्रक्रिया का प्रयोग नहीं किया जाता है। संस्थाएं सामान्यतः अपनी आवश्यकता एवं साधनों के अनुसार विक्रेता की चयन प्रक्रिया को निर्धारित करती हैं। चयन प्रक्रिया में अनौपचारिक साक्षात्कार से लेकर नियुक्ति एवं कार्य परिचय तक कई स्तर (Steps) हो सकते हैं। एक सामान्य चयन प्रक्रिया में निम्न वर्णित चरण पाए जाते हैं :

1. **प्रारम्भिक तैयारियाँ करना :** चयन प्रक्रिया की प्रारम्भिक तैयारियों में निम्न कार्य शामिल होते हैं :
   (a) प्राप्त आवेदन पत्रों पर विचार।
   (b) प्रार्थियों का विवरण तैयार करना।
   (c) अयोग्य प्रार्थियों एवं अधूरे प्रार्थनापत्रों को निरस्त करना।
   (d) चयन बोर्ड का गठन।
   (e) निर्धारित प्रारूप वाले रिक्त आवेदनपत्र छपवाना।
   (f) चयन जाँच एवं लिखित परीक्षा हेतु प्रश्नपत्र, एवं विभिन्न प्रोफार्मा तैयार करवना।
   (g) चयन रीति एवं सिद्धान्तों का निर्धारण।
   (h) आवश्यक विशेषज्ञों एवं विभागों से सम्पर्क करना।

2. **नियोजन कार्यालय में प्रार्थी का स्वागत :** विज्ञापन अथवा बुलावे के प्रत्युत्तर में जब कोई प्रार्थी संस्था में आता

है तो उसका नियोजन कार्यालय में स्वागत किया जाना चाहिये। उक्त तिथि को उपस्थित सभी प्रार्थियों को प्रतीक्षा एवं स्वागत कक्ष में बैठने हेतु स्थान उपलब्ध होना चाहिये। उनके आत्म-सम्मान को किसी भी प्रकार से ठेस नहीं पहुंचने देना चाहिये, अन्यथा योग्य प्रार्थी ऐसी संस्था में कार्य करना स्वीकार नहीं करेंगे।

यद्यपि आजकल रोजगार की समस्या के कारण प्रतिदिन संस्था में अनेक प्रार्थी कार्य की तलाश में आते हैं। अतः संस्थाएँ भी आवेदकों पर सतर्कतापूर्वक ध्यान नहीं दे पाती हैं।

3. **प्रारम्भिक साक्षात्कार :** प्रारम्भिक साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्त्ता प्रार्थी से उसकी शैक्षणिक योग्यता, अनुभव, उम्र, कार्य रुचि व अन्य विशिष्ट कार्य-गुणों आदि के बारे में सूचनाएं प्राप्त करता है। इस सूचना के आधार पर प्रारम्भिक तौर पर प्रार्थी की योग्यता के बारे में निर्णय लिया जा सकता है। यह साक्षात्कार किसी विशिष्ट व्यक्ति द्वारा लिया जाता है, जो कि लगभग दस मिनट का होता है। इस साक्षात्कार से प्रार्थी की रुचियों, इच्छा, कार्य, लगन, उत्साह, उपयुक्तता आदि के बारे में आधार-सूचनाएँ प्राप्त की जाती है। तथा योग्य प्रार्थियों को आगे की कार्यवाही के लिए रोका जा सकता है। इसीलिए इसे छंटनी साक्षात्कार (Screening Interview) भी कहा जाता है। इससे चयन पर होने वाले व्ययों एवं समय में भी बचत की जा सकती है।

4. **रिक्त प्रार्थना-पत्र :** प्रारम्भिक साक्षात्कार में योग्य पाये गये प्रार्थियों से प्रार्थना-पत्र फार्म भरवाया जाता है। यह आवेदक की योग्यताओं के बारे में आधार-सूचनायें उपलब्ध कराता है। यह उसके वैयक्तिक इतिहास का अभिलेख होता है। इस प्रार्थना-पत्र में दी गई सूचनाओं के आधार पर प्रार्थियों की योग्यताओं की पूर्व निश्चित योग्यताओं से तुलना की जा सकती है। बांछनीय योग्यता न रखने पर ऐसे अयोग्य प्रार्थियों को चयन प्रक्रिया से अलग कर दिया जाता है। प्रारम्भिक साक्षात्कार न रखने की दशा में सभी प्रार्थियों से यह फार्म भरवाया जाता है।

उक्त प्रार्थना-पत्र चयन प्रक्रिया का मूल आधार होता है। यह प्रार्थी के व्यक्तित्व का एक शब्द-चित्र होता है तथा उसके सम्बन्ध में कई महत्त्वपूर्ण सूचनायें प्रदान करता है। इससे साक्षत्कार में भी अत्यन्त सुविधा हो जाती है तथा सामान्य बातों के पूछने में समय नष्ट नहीं हो पाता है।

5. **चयन जाँच :** चयन जाँच अथवा परीक्षण चयन प्रक्रिया का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। चयन जाँच के द्वारा प्रार्थी की योग्यता, चातुर्य, कार्य रुचि, स्वभाव आदि का मूल्यांकन किया जाता है। जाँच के द्वारा विक्रेता की अभिरुचि, कार्यक्षमता व कार्य कौशल को परखा जा सकता है। चयन जाँच के कई प्रकार हैं, जैसे – योग्यता जाँच, अभिरुचि जाँच, उपलब्धि जांच आदि। संस्था आवश्यकतानुसार किसी भी जाँच या विभिन्न जाँचों को आयोजित करके आवेदक की योग्यता का परीक्षण कर सकती है।

जाँच के द्वारा सही पद के लिए सही व्यक्ति का चयन किया जा सकता है। इससे चुनाव वं नियुक्ति के विभिन्न व्ययों में भी कमी की जा सकती है।

6. **मुख्य साक्षात्कार :** जाँच में योग्य पाये जाने वाले प्रार्थियों का नियोजन कार्यालय में साक्षात्कार किया जाता है। चयन प्रक्रिया का यह एक महत्त्वपूर्ण उपकरण है। **स्टिल, कंडिफ एवं गोवोनी** लिखते हैं कि "साक्षात्कार सर्वाधिक व्यापक रूप से प्रयुक्त चयन कदम है और कुछ कम्पनिों में तो सम्पूर्ण चयन प्रणाली साक्षात्कार पर ही आधारित होती है।" कई संस्थाएँ साक्षात्कार करने वाले अधिकारियों के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था भी करती हैं।

साक्षात्कार अपने भावी कर्मचारी से एक सीधी बातचीत है। नियोजक अपने भावी विक्रेता की नियुक्ति से पूर्व उससे साक्षात्कार करके उसकी सम्प्रेषण योग्यता, विचार-शैली, आचरण, व्यक्तित्व, वाणी, नेत त्व क्षमता आदि बातों की जांच कर सकता है। वस्तुत साक्षात्कार का मुख्य उद्देश्य भावी विक्रेता के साथ सूचनाओं का आदान-प्रदान करना है। साक्षात्कार के द्वारा प्रार्थना-पत्र में उल्लेखित बातों की भी जाँच सम्भव हो जाती है।

7. **सन्दर्भ जाँच :** साक्षात्कार पूर्ण होने के पश्चात् प्रार्थी के सन्दर्भ में उसकी शिक्षा, चरित्र, आचार-विचार, पूर्व कार्यानुभव आदि के बारे में जानकारी प्राप्त की जाती है तथा उसके द्वारा उल्लेखित सूचनाओं की जाँच की जाती है। यह जाँच प्रार्थी के स्कूलों, कॉलेजों, भूतपूर्व नियोक्ताओं आदि के माध्यम से तथा प्रार्थी द्वारा सन्दर्भ हेतु दिये गये नामों से पत्र-व्यवहार करके की जा सकती है। प्रार्थी के पड़ोसियों, सम्बन्धियों, मित्रों आदि से भी सूचनाएं मंगवाई जा सकती हैं।

   सन्दर्भ जाँच का मुख्य उद्देश्य यह देखना होता है कि विक्रेता पूर्व में कहीं दुराचरण या छल-कपट या मिथ्या-व्यवहार का दोषी तो नहीं रहा है। अतः प्रबन्धकों को सन्दर्भित व्यक्तियों व संस्थाओं से व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करके प्रार्थी के बारे में सही-सही जानकारी प्राप्त करनी चाहिये।

8. **चिकित्सा परीक्षण :** विक्रय कार्य काफी कठिन कार्य होता है। विक्रेता को शारीरिक द ष्टि से सक्षम एवं योग्य होना आवश्यक होता है। चिकित्सा परीक्षण के द्वारा विक्रेता की शारीरिक अक्षमताओं, बीमारियों व अन्य अयोग्यताओं का पता किया जा सकता है। ऐसे विक्रेता जो किसी छूत के रोग से ग्रस्त हैं अथवा शारीरिक दुर्बलता के कारण कार्य करने के अयोग्य हैं, उन्हें अस्वीकार किया जा सकता है।

   चिकित्सा परीक्षण के पहलू चिकित्सा परीक्षा के दौरान निम्नलिखित पहलुओं की जाँच की जाती है :

   (i) शारीरिक नाप-तौल, जैसे ऊँचाई, वजन, सीने व पेट का घेरा आदि।
   (ii) रक्तचाप एवं हृदय की जाँच।
   (iii) आँख, कान, नाक, गला, दाँतों, वक्षस्थल आदि की जाँच।
   (iv) खून, पेशाब आदि की जाँच।
   (v) विशेष बोध (Senses) परीक्षण, जैसे द ष्टि व श्रवण क्षमता की जाँच।
   (vi) सामान्य परीक्षा, जैसे चर्म, मांस-पेशियों आदि की जाँच।
   (vii) आवश्यक होने पर न्यूरो-साइकिट्रिक (Neuro-Psychiatric) परीक्षा करना।
   (viii) प्रार्थी के चिकित्सा इतिहास पर भी विचार किया जाता है।

9. **सेवा शर्तों का निर्धारण (Determining Terms of Service) :** चयन हो जाने के बाद सेवा की शर्तें निर्धारित की जाती हैं। यद्यपि कभी-कभी सेवा की शर्तों का उल्लेख विज्ञापन या प्रारम्भिक साक्षात्कार के समय भी कर दिया जाता है, किन्तु विशिष्ट योग्यता एवं अनुभव प्राप्त प्रार्थियों के लिए सेवा शर्तों में इस स्तर पर संशोधन भी किया जा सकता है।

10. **चयन निर्णय एवं नियुक्ति (Selection Decision and Appointment) :** जिन प्रार्थियों ने चयन सम्बन्धी सभी चरण सफलतापूर्वक पार कर लिये हैं उन्हें अन्तिम रूप से चुन लिया जाता है तथा उन्हें नियुक्ति पत्र दे दिये जाते हैं। नियुक्ति पत्र में चुने हुये प्रार्थी, विक्रेता पद का नाम, वेतन श्रं खला तथा अन्य भत्ते, सेवा की प्रमुख शर्तें, परिवीक्षण काल, कार्यभार संभालने हेतु अन्तिम तिथि, स्वीकृति भेजने की तिथि, नियुक्तिकर्त्ता अधिकारी के हस्ताक्षर एवं तिथि इत्यादि दी होती है।

    कुछ योग्य, अनुभवी एवं कुशल विक्रेता नई नियुक्ति पर आने के पूर्व अपनी कुछ शर्तें रखते हैं। इन शर्तों पर भी विचार किया जा सकता है। यदि विक्रेता बहुत कुशल है तो उसे अधिक वेतन व सुविधाएँ देना भी हानिकारक नहीं होता।

11. **पदभार सौंपना एवं कार्य परिचय (Placement and Induction) :** जब प्रार्थी नियुक्ति-पत्र स्वीकार कर लेता

है तो वह संस्था में पदभारत ग्रहण करता है। पदभार ग्रहण करने की तिथि से ही वह संस्था का कर्मचारी बन जाता है। पदभार ग्रहण करके वह नियुक्ति प्रस्ताव को स्वीकार कर लेता है। कार्य संभालने पर प्रार्थी को उसके कर्त्तव्य, दायित्व एवं जवाबदेही से अवगत कराया जाता है।

कार्य भार ग्रहण करने के पश्चात् प्रार्थी संस्था का एक अभिन्न अंग बन जाता है। वस्तुतः वह प्रार्थी से विक्रेता बन जाता है। कार्य परिचय के द्वारा उन्हें संस्था के साथ समायोजित हो जाने का अवसर मिलता है। सामान्यतः कार्य परिचय में चयनित विक्रेता को निम्न बातों के सम्बन्ध में बतलाया जाता है :

(i) संस्था का इतिहास।
(ii) संस्था की सामान्य नीतियाँ व नियम।
(iii) विक्रय विभाग की जानकारी।
(iv) विभिन्न विभागों की स्थिति।
(v) वेतन, छुट्टियों व कार्य के लिए घण्टे के सम्बन्ध में नीतियाँ।
(vi) निर्मित वस्तुयें व सेवायें।
(vii) सामाजिक लाभ योजनायें।
(viii) पदोन्नति व स्थानान्तरण नीतियाँ।
(ix) अनुशासन व शिकायत निवारण प्रक्रिया।
(x) विक्रेता के दायित्व, कर्त्तव्य व सम्बन्ध।

चयन जाँच
(Selection Tests)

चयन जाँच सम्पूर्ण चयन प्रक्रिया का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। जाँच या परीक्षण के द्वारा प्रार्थी की विभिन्न योग्यताओं, प्रव त्तियों, लक्षणों, व्यवहार व अन्य गुणों का मूल्यांकन किया जाता है। विभिन्न प्रकार की जाँचों का आयोजन करके प्रार्थी के कार्य कौशल एवं उयुक्तता का मापन किया जाता है। इससे प्रार्थी की अच्छाइयों व कमियों का ज्ञान हो जाता है। अतः इसमें योग्य पाये जाने मात्र से ही चयन नहीं हो जाता। विक्रय क्षेत्र में कर्मचारियों के लिए विभिन्न प्रकार की जाँच आवश्यक होती है।

चयन जाँच के प्रकार (Types of Selection Tests) :

सामान्य : कर्मचारियों की जाँच के प्रमुख प्रकार निम्नलिखित हैं :

1. **मानसिक योग्यता जाँच :** इस जांच का उद्देश्य, प्रार्थियों की मानसिक योग्यता, क्षमता एवं प्रव त्तियों के स्तर की जांच करना होता है। इस जांच को 'पेपर एवं पेन्सिल' जांच भी कहा जाता है। इस जांच के द्वारा प्रार्थी की मानसिक प्रव त्तियों का मूल्यांकन किया जाता है। इस जांच के द्वारा प्रार्थी की उन मानसिक योग्यताओं की जांच की जाती है जो शिक्षण एवं प्रशिक्षण से सम्बन्धित होती हैं।
2. **प्रव त्ति उन्मुखता जाँच (Aptitude Tests) :** इस जांच का उद्देश्य प्रार्थी की विशिष्ट प्रव त्तियों, जैसे नये कार्य को सीखने, नये कौशल को ग्रहण करने आदि का मूल्यांकन करना है। इसके द्वारा प्रार्थी की प्रतिक्रिया क्षमता, स्थिरता, संयम, नियन्त्रण आदि योग्यताओं की जांच भी की जाती है।
3. **उपलब्धि जाँच (Achievement Tests) :** इस जाँच का प्रयोग प्रार्थी की उस क्षमता का मापन करने के लिए

की जाती है जो कि उसने अब तक अर्जित की है। ये जाँच प्रायः निष्पादन क्षमता (Performance Tests) एवं व्यापारिक जांच (Trade Test) के रूप में आयोजित की जाती है। जाँच के प्रयोग की दशाएँ निम्न हैं :

(i) जब किसी पद पर अनुभवी व्यक्ति का चयन किया जाता हो,

(ii) जब किसी व्यक्ति की पदोन्नति करनी हो,

(iii) जब किसी व्यक्ति का एक पद से दूसरे पद पर स्थानान्तरण करना हो, एवं

(iv) जब प्रशिक्षण की आवश्यकता का पता लगाना हो।

4. **व्यक्तितत्व जाँच (Personality Tests) :** व्यक्तित्व जाँच के द्वारा आवेदकों के उन गुणों की जाँच की जाती है जो कि उनके आत्मविश्वास, आत्माभिव्यक्ति, प्रतिक्रियाओं, भावनाओं, आदतों, द ष्टिकोंण, स्वतः प्रेरण, सामान्य आचरण आदि से सम्बन्ध रखते हैं। यद्यपि इन जाँचों की वैधता पूर्णतः विश्वसनीय नहीं होती है। **स्टेनले स्टार्क (Stanley Stark)** का यह मत है कि "व्यक्तित्व जाँच न तो पहल ही करती है और न सेवायोजक ही कर्मचारियों की मान्यताओं एवं विश्वासों का निश्चित ज्ञान प्राप्त करना चाहता है, क्योंकि साक्षात्कार एवं अवलोकन व्यक्तित्व के विश्लेषण का आधार प्रस्तुत कर देते हैं।"

   व्यक्तित्व जांच के बारे में इन विपरीत धारणाओं के बावजूद विक्रय क्षेत्र में व्यक्तित्व जाँच का महत्त्व कम नहीं है।

5. **रुचि जाँच (Interest Test) :** इस जाँच के द्वारा आवेदकों की व्यावसायिक रुचियों का मूल्यांकन किया जाता है। इस जाँच के द्वारा यह पता लगाया जा सकता है कि आवेदक विक्रयकर्त्ताओं के रूप में सफल हो सकेंगे या नहीं ? इन जाँचों का प्रयोग व्यावसायिक मार्गदर्शन एवं परामर्श प्रदान करने के लिए किया जाता है।

   ये परीक्षण मूलतः दो धारणाओं पर आधारित हैं – **प्रथम**, रुचि एवं अभिप्रेरण में गहन सम्बन्ध होता है। **द्वितीय,** व्यक्ति की रुचि प्रत्येक उम्र में प्रायः स्थिर रहती है। अभिप्रेरणा के द्वारा उसे कम या अधिक किया जा सकता है। **त तीय**, किसी कार्य में विशेष रुचि होने पर उसमें व्यक्ति विशेष कुशलतापूर्वक कार्य करता है।

6. **स्वभाव या प्रकृति जाँच (Temperament Test) :** इस जाँच के द्वारा व्यक्ति के स्वभाव के विभिन्न घटकों, जैसे इच्छा, अनिच्छा, क्रोध, चंचलता, गत्यात्मकता, आदतों, आदि का मूल्यांकन किया जा सकता है।

साक्षात्कार के उद्देश्य (Objects) : साक्षात्कार के सामान्यतः निम्न उद्देश्य हो सकते हैं :

1. आवेदकों की योग्यताओं का मूल्यांकन करना।
2. प्रार्थियों के अन्य तरीकों द्वारा मूल्यांकित न किये जा सकने वाले गुणों की जाँच करना।
3. प्रार्थी को रोजगार की शर्तों, जैसे कार्य के घण्टे, पदोन्नति, चिकित्सा सुविधायें, श्रम-कल्याण आदि के बारे में जानकारी देना।
4. रिक्त प्रार्थना-पत्र में उल्लेखित बातों की सत्यता की जाँच करना।
5. प्रार्थी के मस्तिष्क में संस्था की ख्याति उत्पन्न करना।
6. प्रार्थना-पत्र में रह गई अस्पष्टताओं का निवारण करना।
7. प्रार्थी की पहल शक्ति, निर्णय क्षमता तथा समप्रेषण योग्यता का मूल्यांकन करना।
8. प्रार्थी में आपसी समझ व विश्वास उत्पन्न करना।
9. आवेदक की विक्रय क्षमता, ग्राहक-व्यवहार तथा विपणन सिद्धान्तों का ज्ञान आदि बातों के सम्बन्ध में जाँच-पड़ताल करना।

10. प्रार्थी के भावी कार्यों एवं अनुभव की जांच करना।
11. चयन प्रक्रिया के अन्य स्तरों पर यदि प्रार्थी के सम्बन्ध में कोई विपरीत सूचनाएँ प्राप्त हुई हों तेा उनकी सत्यता की जाँच करना।

प्रभावी साक्षात्कार के आवश्यक तत्त्व

(Essentials of Effective Interview)

एक प्रभावी साक्षात्कार में निम्न तत्त्वों का होना आवश्यक हैं :

1. साक्षात्कार मण्डल का आकार छोटा व साक्षात्कारकर्ता प्रशिक्षित होने चाहिये।
2. साक्षात्कार के उद्देश्य एवं उचित आधारों का निर्धारण किया जाना चाहिये।
3. साक्षात्कार की कार्य-प्रणाली पूर्व निर्धारित होनी चाहिये।
4. साक्षात्कार में प्रार्थियों से केवल हाँ या ना वाले प्रश्न ही नहीं किये जाने चाहिये।
5. प्रार्थियों को अपने विचारों की अभिव्यक्ति का पूरा अवसर दिया जाना चाहिये।
6. साक्षात्कार का संचालन मैत्रीपूर्ण वातावरण में ही होना चाहिये।
7. साक्षात्कार में उपस्थित प्रार्थियों के लिए बैठने एवं अन्य सुविधाओं की उचित व्यवस्था होनी चाहिये।
8. साक्षात्कार के पश्चात् अन्तिम निर्णय पूर्व-निर्धारित मापदण्डों के आधार पर लिया जाना चाहिये।

साक्षात्कार की योजना

साक्षात्कार की योजना के दौरान यह निर्धारित किया जाता है कि प्रार्थियों में किन-किन बातों, गुणों व योग्यताओं का अवलोकन किया जाये ? इसकी विषय सामग्री अथवा प्रार्थियों में अध्ययन योग्य बातें क्या हों ? संक्षेप में, साक्षात्कार के दौरान निम्न बातों का अवलोकन किया जाना चाहिये :

1. **शारीरिक बनावट :** प्रार्थी का स्वास्थय, शक्ति, आकृति, हाव-भाव, गठन आदि।
2. **उपलब्धियाँ :** शिक्षा, प्रशिक्षण, तकनीकी अनुभव, विशिष्ट योग्यतायें, डिप्लोमा, अनुसन्धान कार्य, परियोजना संचालन आदि।
3. **समान्य बौद्धिक योग्यता :** तार्किकता, सामान्य विवेक, स्मरण-शक्ति, शब्द ज्ञान, सूचनायें, अवलोकन शक्ति आदि।
4. **विशिष्ट रुझान :** तकनीकी ज्ञान, मानसिक ज्ञान, व्यावहारिक योग्यता, विशेष रुझान आदि।
5. **रुचियाँ :** व्यावसायिक रुचियाँ, सांस्कृतिक, सामाजिक व शैक्षणिक रुचियाँ आदि।
6. **स्वभाव :** आत्म-विश्वास, सहयोग, आशावादिता, क्रोध, शान्ति, चिड़चिड़ापन, उद्वेगरहितता, महत्त्वाकांक्षा आदि।
7. **परिस्थितियाँ :** कार्य सम्पादन सम्बन्धी, घरेलू परिस्थितियाँ, वैयक्तिक पहलू आदि।

साक्षात्कार की पद्धतियाँ

Methods of Interviews)

साक्षात्कार की प्रमुख पद्धतियाँ निम्न प्रकार हैं :

1. **प्रतिरूप साक्षात्कार (Patterned Interview) :** 'प्रतिरूप साक्षात्कार' को औपचारिक, निर्देशन, संरचित (Structured) तथा प्रमापित साक्षात्कार के नाम से भी जाना जाता है।

इस साक्षात्कार पद्धति में प्रार्थी के शैक्षणिक जीवन, कार्य, अनुभव, वित्तीय स्थिति, पारिवारिक जीवन आदि के सम्बन्ध में अनेक प्रश्न पूछे जाते हैं। साक्षात्कारकर्त्ताओं को हाँ अथवा ना वाले प्रश्न अधिक नहीं पूछना चाहिये। अधिकांश प्रश्न प्रार्थियों के चिन्तन व प्रव त्तियों को प्रदर्शित करने वाले हाने चाहिये। प्रश्न प्रार्थियों के विचारों में प्रवेश करने वाले (Penetrating) होने चाहिये।

गुण (Merits) : इस साक्षात्कार पद्धति के प्रमुख गुण निम्नलिखित हैं :

(i) इस पद्धति के द्वारा प्रार्थी के सम्बन्ध में महत्त्वपूर्ण सूचनायें एवं तथ्य प्राप्त किये जा सकते हैं।

(ii) इसमें ऐसे प्रश्न भी पूछे जा सकते हैं जिन पर प्रार्थी की कार्य की सफलता निर्भर करती है।

(iii) इससे प्रार्थी की कार्य करने की योग्यता व कार्य न करने की योग्यता को ज्ञात किया जा सकता है।

(iv) इसमें अनुचित पक्षपात किये जाने की सम्भावना नहीं रहती है।

(v) यह विश्लेषणात्मक पद्धति है।

(vi) इसमें आवश्यक प्रश्न ही पूछे जाते हैं जिससे समय का अपव्यय भी नहीं हो पाता है।

दोष (Demerits) : इस पद्धति के कुछ प्रमुख दोष निम्नलिखित हैं :

(i) इस पद्धति में पक्षपात होने का भय बना रहता है।

(ii) इस पद्धति में कई बार आवश्यक सूचनाएँ प्राप्त नहीं की जा सकती हैं।

2. **अप्रत्यक्ष या अनिर्देशित साक्षात्कार (Indirect or Non-directive Interviews) :** ये साक्षात्कार सामान्य बातचीत एवं अनौपचारिक वार्ता के रूप में ही होते हैं जिनमें प्रार्थी को स्वतन्त्रतापूर्वक अपने विचारों को प्रकट करने का अवसर दिया जाता है। इस पद्धति में साक्षात्कारकर्ता प्रत्यक्ष प्रश्न कम पूछते हैं, वे स्वयं बात कम करते हैं तथा साक्षात्कार का निर्देशन नहीं करते हैं। इसमें प्रार्थियों को निःसंकोच बोलने के लिए प्रेरित किया जाता है। यह पद्धति गहन साक्षात्कार (Depth Interview) से मिलती-जुलती है। इस पद्धति में साक्षात्कारकर्त्ताओं का कुशल एवं विशेषज्ञ होना आवश्यक होता है।

गुण (Merits) : अनिर्देशित साक्षात्कार पद्धति के प्रमुख गुण निम्नलिखित हैं :

(i) प्रार्थी के व्यक्तित्व की गहराई से जाँच की जा सकती है।

(ii) इसमें प्रार्थी स्वतन्त्रतापूर्वक अपने विचारों को प्रकट कर सकता है।

(iii) प्रार्थी केवल उन विषयों पर ही बोलता है जिनमें उसकी रुचि होती है तथा जिन्हें वह उचित समझता है।

(iv) इससे संस्था व प्रार्थी के मध्य अच्छे सम्बन्ध बन जाने की सम्भावना होती है।

दोष (Demerits) : प्रमुख दोष निम्नलिखित हैं :

(i) कुशल एवं प्रशिक्षित साक्षात्कारकर्ता उपलब्ध नहीं हो पाते हैं।

(ii) कई बार प्रार्थियों को बोलने का पूर्ण अवसर नहीं दिया जाता है।

3. **प्रतिबल साक्षात्कार (Stress Interviews) :** इस पद्धति में प्रार्थी पर एक के बाद एक लगातार प्रश्नों की बौछार की जाती है। ये प्रश्न संगत एवं असंगत भी हो सकते हैं। इस प्रद्धति में प्रार्थी की उद्वेगों, उत्तेजनाओं व भावनाओं पर नियन्त्रण बनाये रखने की योग्यता को परखा जाता है।

साक्षात्कार की पद्धति विक्रेताओं के चयन में अत्यन्त उपयोगी रहती है। एक विक्रेता को विभिन्न प्रकृति वाले

ग्राहकों, जैसे – गुस्सैल, झगड़ालू, गम्भीर, संकुचित प्रव त्ति वाले, बचकाने आदि के साथ व्यवहार करना होता है। अतएव, ऐसे ग्राहकों के साथ व्यवहार करते समय विक्रेता का संयमी होना बहुत आवश्यक होता है। इस योग्यता की परख के लिए ही यह साक्षात्कार आयोजित किये जाते हैं।

कई विचारकों के अनुसर यह पद्धति व्यावहारिक नहीं है। उनके अनुसार इसमें संस्था की छवि प्रारम्भ से ही धूमिल हो जाती है। प्रार्थियों की भावनाओं को चोट पहुँच सकती है तथा वे संस्था के प्रत प्रारम्भ से ही असहयोग का रूख अपना सकते हैं। इस पद्धति में साक्षात्कारकर्त्ताओं का योग्य एवं अनुभवी होना आवश्यक है तथा उन्हें मनोविज्ञान का भी अच्छा ज्ञान होना चाहिए।

4. **समूह साक्षात्कार (Group Interviews) :** इस पद्धति में प्रार्थियों को समूहों में बांट दिया जाता है तथा बारी-बारी से हर समूह का सामूहिक साक्षात्कार लिया जाता है। साक्षात्कारकर्त्ता प्रत्येक समूह के समक्ष कोई विशिष्ट विषय या समस्या रख देता है, जिस पर उस समूह के प्रार्थी अपना-अपना द ष्टिकोण प्रकट करते हैं। साक्षात्कारकर्त्ता प्रार्थियों की विचार शैली, द ष्टिकोण, वुद्धिमत्ता, वाणी व इसका उतार-चढ़ाव आदि का अवलोकन करते हैं। वे प्रार्थियों के धैर्य, विचार क्रमबद्धता व मत-सम्मत का परीक्षण करते हुए योग्य प्रार्थी का चयन कर लेते हैं। कभी-कभी इस विधि में पक्षपात किये जाने का भय बना रहता है। विक्रेताओं के चयन के लिए यह पद्धति भी अच्छी मानी जा सकती है।

उपयोगी प्रश्न
(Useful Questions)

1. एक विक्रेता के चयन के लिए अपनायी जाने वाली चुनावी प्रक्रिया का वर्णन कीजिये।
   Discuss the selection process adopted for selecting a salesman.
2. विभिन्न प्रकार की चुनाव जाँचों का लाभ-दोषों सहित संक्षेप में वर्णन कीजिये।
   Discuss in brief the various selection tests with merits and demerits.
3. साक्षात्कार के प्रमुख उद्देश्य क्या हैं ? साक्षात्कार करने की योजना एवं एक अच्छे साक्षात्कार के आवश्यक तत्त्वों का वर्ण कीजिये।
   What are the main objects of interview ? Describe the interview plan and essential elements of a good interview.
4. साक्षात्कार की विभिन्न पद्धतियों की विवेचना कीजिये।
   Discuss the various methods of interview.
5. "व्यवसाय का भविष्य विक्रय पर निर्भर करता है तथा विक्रय विक्रेताओं पर निर्भर करता है।" इस कथन को समझाइये तथा इस सन्दर्भ में विक्रयकर्त्ता की चयन-विधि का वर्णन कीजिये।
   "The Fortune of a concern depends on sales which in turn, depends on salesman." Discuss this statement explaining the selection procedure of salesman.

अध्याय - 19
विक्रयकर्त्ता का प्रशिक्षण
(Training of Salesman)

विक्रय प्रशिक्षण का अर्थ एवं परिभाषाएँ
(Meaning & Definition of Sales Training)

विक्रय प्रशिक्षण, का अर्थ है विक्रय के सम्बन्ध में प्रशिक्षण देना। इस प्रशिक्षण द्वारा विक्रयकर्ताओं को यह सिखाया जाता है कि वे किस प्रकार विक्रय के कार्य को अच्छी प्रकार से पूरा कर सकते हैं। प्रशिक्षण के द्वारा विक्रेताओं के गुणों और योग्यताओं को और अधिक विकसित किया जाता है ताकि उनकी विक्रय प्रतिभा में और अधिक निखार आ सके। प्रशिक्षण के द्वारा विक्रेता को विक्रय कला के सिद्धान्तों, विधियों एवं व्यवहार का व्यवस्थित ज्ञान करवाया जाता है तथा उन्हें उपक्रम की विक्रय नीति, कार्य प्रणाली, विक्रय तकनीकों, बाजार अनुसन्धान आदि से अवगत कराया जाता है। अतः स्पष्ट होता है कि प्रशिक्षण एक ऐसी क्रिया है जिससे विक्रेताओं के विक्रय करने के कौशल में व द्धि होती है। विक्रय प्रशिक्षण की विभिन्न विद्वानों ने निम्न परिभाषाएँ दी हैं :

(1) **एच॰ एल॰ हैन्सन,** "विक्रयकर्ताओं और सम्भावित विक्रयकर्ताओं को यह पढ़ाना कि वे अपना कार्य किस प्रकार अच्छा कर सकते हैं, विक्रय प्रशिक्षण कहलाता है।"

(2) **जार्ज आर॰ कोलिन्स,** "विक्रय प्रशिक्षण एक संगठित क्रिया है जिसमें तथ्यों की खोज, नियोजन, शिक्षण, अभ्यास, आलोचना तथा समालोचना, विक्रय कौशल के विकास के प्रयास की सिफारिश की जाती है तथा इनको मूल योग्यताओं, सामान्य ज्ञान व अनुभव के साथ जोड़ा जाता है।"

उपयुक्त परिभाषाओं के अध्ययन से निष्कर्ष में कहा जा सकता है– "विक्रय प्रशिक्षण एक ऐसी विधि है जिसके द्वारा विक्रय कार्य में कौशल विकसित किया जाता है। इससे विक्रेता की अभिव तियों, निपुणताओं तथा योग्यताओं में व द्धि होती है।"

विक्रय प्रशिक्षण के लक्षण अथवा विशेषताएँ
(Charecteristics or Features of Sales Training)

(1) यह एक सतत् प्रक्रिया है।

(2) इसके अर्न्तगत विक्रयकला का सैद्धान्तिक एवं क्रियात्मक ज्ञान कराया जाता है।

(3) विक्रय प्रशिक्षण विक्रयकर्ताओं को विक्रय समस्याओं को हल करने में सक्षम बनाता है।

(4) विक्रय प्रशिक्षण से विक्रेताओं को संस्था के उद्देश्यों के सम्बन्ध में व्यापक जानकारी प्राप्त होती है।

(5) विक्रय प्रशिक्षण विक्रयकर्ता की योग्यता व उसमें वांछित योग्यता के अन्तर को पूरा करने की प्रक्रिया है।

(6) विक्रय प्रशिक्षण विक्रेताओं को विक्रयकला में निपुणता प्रदान करने के लिए प्रदान किया जाता है। इससे उनके ज्ञान, चातुर्थ तथा कार्य कुशलता में वांछित व द्धि होती है।

(7) प्रशिक्षण, कार्य पर या कार्य से प थक किसी भी प्रकार से दिया जा सकता है।

(8) विक्रय प्रशिक्षण एक पूर्व नियोजित एवं व्यवस्थित प्रक्रिया है।

(9) विक्रय प्रशिक्षण नये व पुराने सभी विक्रेताओं को प्रदान किया जाता है।

(10) इससे संस्था की बिक्री में व द्धि होती है।

विक्रय प्रशिक्षण के उद्देश्य

(Objectives of Sales Training)

(1) विक्रेताओं को वैज्ञानिक सिद्धान्तों का ज्ञान कराना।

(2) विक्रेताओं से संस्था के प्रति सदभावना को विकसित करना।

(3) अकुशल व विक्रय कार्य में रुची न रखने वाले विक्रेताओं की छंटनी करना।

(4) विक्रेताओं को वितरक व उपभोक्ताओं के सम्बन्ध में जानकारी देना।

(5) विक्रेताओं को संस्था के इतिहास व कार्यकलाप बताना।

(6) वस्तु के निर्माण की विधि तथा वस्तुओं के गुणों से विक्रेताओं को अवगत कराना।

(7) संस्था की कुल विक्रय में व द्धि करना।

(8) विक्रयकर्ताओं में स्थायित्व लाना तथा पदोन्नति के अवसर बढ़ाना।

(9) विक्रेतओं को विक्रय सम्बन्धी नयी तकनीकों की जानकारी

(10) विक्रय व्ययों में कमी करना।

विक्रयकर्ता प्रशिक्षण का महत्त्व या लाभ

(Importance or Advantages of Salesmen Training)

विक्रयकर्ता का चुनाव हो जाने के बाद उसको बाजार में भेजने से पूर्व प्रशिक्षित किया जाता है तथा जब वह पूर्ण रूप से प्रशिक्षित हो जाता है, तभी उसको बाजार में उतारा जाता है। बड़ी-बड़ी कम्पनियाँ तो अपने यहाँ प्रशिक्षणशालाएँ खोलकर विक्रयकर्ताओं को प्रशिक्षण देती हैं। प्रशिक्षण की आवश्यकता निम्न कारणों से है :

(i) यदि नव-नियुक्त विक्रयकर्ता को विक्रय प्रशिक्षण दिये बिना अपने आप सीखने के लिए छोड़ दिया जाय तो वह बुरी आदतें पकड़ सकता है।

(ii) नव-नियुक्त विक्रयकर्ता अपने आप सीखने में भूल-चूक एवं गलतियाँ कर सकता है जो संस्था को महँगी पड़ सकती हैं।

(iii) अनेक क्रेता वर्ष-प्रति-वर्ष चतुर, जिज्ञासु एवं विशेषज्ञ होते जा रहे हैं, अतः विक्रेता को भी चतुर एवं विशेषज्ञ होना होगा।

(iv) प्रशिक्षण के परिणामस्वरूप विक्रेता अतिशीघ्र उत्पादक एवं लाभप्रद बन जाते हैं। प्रशिक्षित व्यक्ति बिक्री की मात्रा एवं कुल लाभ को बढ़ाता है।

(v) विक्रेता जितना अधिक प्रशिक्षित एवं योग्य होगा उतना ही वह विक्रय-व्ययों को नियन्त्रित करने में सफल हो सकेगा।

कुछ व्यक्ति तर्क देते हैं कि प्रशिक्षण में समयव धन लगाया जाता है जिसके बाद वे किसी अन्य जगह चले जाते हैं जो कि अपव्यय है।

अत : इनके ऊपर प्रशिक्षण व्यय करने की कोई आवश्यकता नहीं है। वास्तव में यह उनका भ्रम है। एक प्रशिक्षित विक्रयकर्ता अप्रशिक्षित विक्रयकर्ता से कहीं अधिक अच्छा होता परन्तु कहीं इसवके अपवाद भी हो सकते हैं।

संक्षेप में प्रशिक्षण का महत्त्व निम्न कारणों से हो सकता है :

1. **अधिक बिक्री :** प्रशिक्षित विक्रयकर्ता अप्रशिक्षित विक्रयकर्ता की तुलना में विक्रय-कला में अधिक प्रवीण हो जाता है। वह सहज में ही ग्राहक को समझकर अपने चातुर्य एवं ज्ञान से विक्रय करने में सफल हो जाता है। परिणामस्वरूप बिक्री बढ़ जाती है।
2. **नियन्त्रण एवं निरीक्षण में कमी :** प्रशिक्षित विक्रयकर्ता पर नियन्त्रण एवं निरीक्षण की अधिक आवश्यकता नहीं रहती। परिणामस्वरूप उद्यमियों के समय व धन की बचत होती है।
3. **सुधारात्मक लाभ :** प्रशिक्षित विक्रयकर्ता व्यवसाय से उत्पन्न विभिन्न समस्याओं का स्वयं हल निकालने में सक्षम होता है। इसका लाभ संस्था को मिलता है।
4. **कम अपव्ययी :** एक प्रशिक्षित विक्रयकर्ता कम अपव्ययी होता है। उसका ग्राहकों को माल दिखाने, रखने का ढंग ऐसा होता है जो कम अपव्ययी होता है।
5. **विक्रय कार्य में शीघ्रता :** एक सामान्य विक्रेता को विक्रय-कार्य में कुशलता एवं परिपक्वता प्राप्त करने में जितना समय लगता है, उससे कहीं कम समय में एक प्रशिक्षित विक्रयकर्ता वस्तु का विक्रय कर देता है।
6. **व्ययों पर नियन्त्रण : चार्ल्स ए, किर्कपैट्रिक** के अनुसार एक प्रशिक्षित विक्रयकर्ता प्रत्यक्ष विक्रय व्ययों को नियन्त्रित करने और यहाँ तक उनको कम करने की अधिक क्षमता रक्षता है।
7. **उपभोक्ताओं के साथ मधुर सम्बन्ध :** प्रशिक्षित विक्रयकर्ता से ग्राहक अधिक सन्तुष्ट हो जाते हैं क्योंकि वह उनकी इच्छाओं एवं आकांक्षाओं को अधिक अच्छी तरह समझने में सक्षम होता है। परिणामस्वरूप उपभोक्ताओं के साथ उसके मधुर सम्बन्ध बन जाते हैं।

प्रशिक्षण के प्रकार

(Types of Training)

विक्रय शक्ति को कुशलता प्रदान करने के लिए विक्रयकर्ता को दिया जाने वाला प्रशिक्षण निम्नलिखित तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है :

1. **प्रारम्भिक प्रशिक्षण :** इस प्रशिक्षण के अर्न्तगत निम्न बातों पर ध्यान देना होता है :
   (i) उपक्रम के लक्ष्य, नीतियाँ, नियम व संगठन संरचना,
   (ii) विक्रयकला के सिद्धान्तों का ज्ञान,
   (iii) उत्पाद के बारे में पूर्ण जानकारी,
   (iv) विक्रयकर्ता के आवश्यक गुण,
   (v) विक्रय का पेशा एक आदरणीय व भद्र पेशा है,
   (vi) ग्राहकों के मनोविज्ञान का अध्ययन,
   (vii) विक्रय व द्धि करने की विधियों तथा उससे होने वाला व्यक्तिगत लाभ,
   (viii) ग्राहकों को आकर्षित करने एवं उन्हें माल को विक्रय करने की विधियाँ,
   (ix) उसकी सेवा शर्तों ज्ञान एवं
   (x) प्रशिक्षण कार्यक्रम को पूरा करने पर उसको उससे होने वाले लाभ।

एक नए नियुक्त किए गए विक्रयकर्ता को कार्य पर लगाने से पूर्व उपरोक्त बातों की जानकारी देना परम आवश्यक है। अतः अधिकांश उपक्रमों में प्रारम्भिक प्रशिक्षण अवश्य प्रदान किया जाता है।

2. **क्षेत्र प्रशिक्षण :** एक नये नियुक्त विक्रेता द्वारा प्रारम्भिक प्रशिक्षण पूरा करने के बाद किसी वरिष्ट विक्रेता के निर्देशन में विक्रय के क्षेत्र में विक्रय कार्य करने के लिए भेजा जाता है। यह वरिष्ट विक्रेता उसका मार्ग दर्शन करता है तथ त्रुटि होने पर उसका सुधार करता है, उसे प्ररेणा देता है और उसमें विश्वास जाग त करता है जिससे उसे अपने कार्य में शीघ्र दक्षता प्राप्त करने में मदद मिलती है।

3. **पुर्नस्मरण प्रशिक्षण :** व्यापारिक जगत में, नवीनतम तकनीकों, परिथतियों, ग्राहकों की रुची, फैशन, आदतों में परिवर्तन होने के कारण दिन-प्रतिदिन नए-नए परिवर्तन होते रहते हैं। अतः पुराने विक्रेताओं को इनसे सम्बन्धित जानकारियाँ देने के लिए पुर्नस्मरण प्रशिक्षण की व्यवस्था करनी आवश्यक हो जाती है।

एक अच्छे प्रशिक्षण कार्यक्रम की विशेषताएँ

अथवा

विक्रय प्रशिक्षण के सिद्धान्त

(Charecteristics of a Good Training Programme)

or

(Principles of Sales Training)

1. **उद्देश्यों पर आधारित :** इसका अर्थ है कि पहले यह तय होना चाहिए कि विक्रेताओं को प्रशिक्षण किन उद्देश्यों से दिया जा रहा है? क्या विक्रेताओं को कला का प्रशिक्षण दिया जायेगा? वस्तु के उत्पादन एवं गुणों के बारे में बताया जायेगा? उद्देश्यों के अनुसार दिया गया प्रशिक्षण अधिक प्रभावी होता है। इन उद्देश्यों के निर्धारण से प्रशिक्षण कार्यक्रम का मूल्यांकन सरल हो जाता है तथा उसे ठीक दशा में चलाना सम्भव हो जाता है।

2. **प्रशिक्षण का क्षेत्र :** एक अच्छे प्रशिक्षण कार्यक्रम का क्षेत्र सीमीत न होकर इतना विस्त त हो कि उसमें सभी स्तर के विक्रेताओं के प्रशिक्षण की व्यवस्था हो सके। प्रशिक्षण विक्रय विभाग के प्रत्येक स्तर पर कार्यरत कर्मचारी को प्रदान किया जाना चाहिए। सभी स्तर के विक्रयकर्ताओं को प्रशिक्षण मिलने से व्यावसायिक संस्था को विस्त त लाभ होगा।

3. **प्रशिक्षण विधियाँ :** विक्रेताओं को प्रशिक्षित करने की विभिन्न पद्धतियाँ हैं। अतः संस्था में प्रशिक्षण किस पद्धति से प्रदान किया जायेगा यह भी निश्चित किया जाना चाहिए। विधियों का चयन संस्था की आवश्यकताओं तथा परिस्थितियों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए।

4. **प्रशिक्षण का दायित्त्व :** प्रशिक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत यह तय होना चाहिए कि प्रशिक्षण का दायित्त्व स्वयं संस्था का होगा या किसी बाहरी संस्था का।

5. **विषय सामग्री का निर्धारण :** प्रशिक्षण योजना तैयार करते समय विक्रेताओं को दिये जाने वाले प्रशिक्षण की विषय सामग्री भी सुनिश्चित की जानी चाहिये। विषय सामग्री में सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक दोनों प्रकार की विषय वस्तु शामिल की जानी चाहिए।

6. **सरलता :** प्रशिक्षण कार्यक्रम सरल होना चाहिये ताकि विक्रेता उसे आसानी से समझ सके तथा उसे प्रभावी ढंग से संचालित किया जा सके। जटिल प्रशिक्षण में प्रशिक्षणार्थीयों की कम रुची रहती है।

7. **अवधि, समय व स्थान का निर्धारण :** प्रशिक्षण की अवधि क्या होगी, यह प्रशिक्षण किस स्थान पर तथा किस समय दिया जायेगा इसका भी पूर्व निर्धारण आवश्यक है। वैसे तो प्रशिक्षण एक सतत् प्रक्रिया है, किन्तु वस्तु की माँग व व्यवसाय के व्यस्त समय को ध्यान में रखकर प्रशिक्षण की अवधि निश्चित की जानी चाहिये। प्रशिक्षण का स्थान संस्था के अन्दर, विक्रय क्षेत्र में या किसी बाह्य संस्था में हो सकता है।

8. **भित्तव्ययी :** जहाँ तक सम्भव हो प्रशिक्षण कार्यक्रम संस्था की वित्तिय स्थिति को ध्यान में रखकर तैयार किया जाना चाहिये। प्रशिक्षण पर कितना धन व्यय होगा। उसकी पूर्ति कैसे होगी यह पूर्व निश्चित होना चाहिये।
9. **अभ्यास व पुनराव ति :** अभ्यास से बातों को आसानी से सीखा जा सकता है। यह अभ्यास नियमित होना चाहिये। इस प्रकार पुनराव ति के द्वारा प्रशिक्षण में सहायता मिलती है।
10. **नवीन ज्ञान का समावेश :** प्रशिक्षण सामग्री पूर्णतया नवीनतम हो। अतः प्रशिक्षण योजना में विक्रय की नवीन एवं आधुनिक तकनीकों का समावेश होना चाहिये।
11. **अभिप्रेरणा :** प्रशिक्षण एक प्रकार से सीखने की प्रक्रिया है जिसमें प्रेरणा का महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। एक अच्छे प्रशिक्षण कार्यक्रम में यह गुण होता है कि वह प्रशिक्षार्थीयों की सीखने व ज्ञान प्राप्त करने के लिए प्रेरणा प्रदान करता है।

विक्रय प्रशिक्षण कार्यक्रम का नियोजन एवं विकास

(Planning and Development of Sales Training Programme)

नए नियुक्त विक्रेताओं के प्रशिक्षण कार्यक्रम अत्यन्त विस्त त होते हैं जबकि पुराने तथा अनुभवी विक्रेताओं के प्रशिक्षण कार्यक्रम अपेक्षाकृत छोटे तथा विषय विशेषों पर केन्द्रित होते हैं। विक्रय की नवीन तकनीकों से परिचय करवाने के लिए 'रिफ्रेशर' प्रशिक्षण कार्यक्रम भी चलाये जा सकते हैं। विक्रेताओं को प्रशिक्षण देने वाले प्रशिक्षकों के लिए भी प्रशिक्षण कार्यक्रम तैयार किये जा सकते हैं ताकि वे सही प्रकार से प्रशिक्षण कार्यक्रम को चला सकें। उपक्रम में जो लोग उच्च स्तरों पर कार्य करते हैं। उन्हें प्रशिक्षण प्रदान करने के लिये भी प्रशिक्षण कार्यक्रम तैयार किये जाते हैं।

प्रशिक्षण कार्यक्रम को निर्धारित करते समय अनेक प्रकार के निर्णय लिये जाते हैं जिनका सम्बन्ध निम्नलिखित से होता है :

1. **प्रशिक्षण के उद्देश्यों का निर्धारण :** विक्रय प्रशिक्षण कार्यक्रम का आधारभूत उद्देश्य विक्रय निष्पादन को प्रभावी बनाना है। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए विक्रय शक्ति की उत्पादकता को बढ़ाकर विक्रय पर पड़ने वाली लागतों को घटाकर किया जा सकता है। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये प्रशिक्षण कार्यक्रय के विशिष्ट उद्देश्यों को निर्धारित किया जाता है।
2. **प्रशिक्षण की विषयवस्तु अर्थात् पाठयक्रम :** विक्रय प्रशिक्षण कार्यक्रम के लिए यह भी आवश्यक है कि प्रशिक्षण की विषय-वस्तु का निर्धारण भी पहले से हो। यदि प्रशिक्षण का उद्देश्य प्रारम्भिक प्रशिक्षण देना है तो विस्त त प्रशिक्षण की व्यवस्था आवश्यक होगी। यदि प्रशिक्षण पुराने विक्रेताओं आदि के पुनः स्मरण के लिए हो तो विषय वस्तु में वे ही बातें रखनी होंगी जिनकी जानकारी देना वर्तमान परिस्थितियों में आवश्यक है।
3. **प्रशिक्षण के स्थान का निर्धारण :** विक्रेताओं को प्रशिक्षण कहाँ दिया जायेगा इसके लिए स्थान को निर्धारित करते समय प्रशिक्षण के उद्देश्यों, आवश्यकताओं, वित्तिय संसाधनों, प्रशिक्षार्थीयों की प ष्ठभूमि आदि को ध्यान में रखा जाता है।
4. **प्रशिक्षण का प्रकार :** प्रशिक्षण योजना में यह भी तय करना पड़ता है कि यह प्रशिक्षण किस प्रकार का होगा। नवीन विक्रयकर्ताओं के लिए या पुराने विक्रेताओं के स्मरण के लिये दिये जाने वाले प्रशिक्षण के तरीके अलग-अलग होते हैं। अतः इनके प्रकारों को पूर्व निश्चित करना आवश्यक है।
5. **प्रशिक्षण के समय का निर्धारण :** प्रशिक्षण एक सतत् प्रक्रिया है। किसी भी संस्था में नये विक्रयकर्ता आते रहते हैं तथा पुराने विक्रेता भी संस्थायें बदलते रहते हैं। विभिन्न श्रेणी के विक्रेताओं के प्रशिक्षण का समय निर्धारित किया जाना चाहिये। इसके लिये तिथि निश्चित की जानी चाहिये। नये विक्रेताओं को उनकी नियुक्ति के बाद ही प्रशिक्षण दिया जाता है। किन्तु पुराने विक्रेताओं को नई तकनीकों, प्राविधियों एवं परिवर्तित दशाओं से परिचित कराना आवश्यक होता है। अतः यह तय किया जाना चाहिये कि प्रशिक्षण का समय कितना होगा।

6. **प्रशिक्षण विधियाँ :** प्रशिक्षण कार्यक्रय के नियोजन तथा विकास के लिए प्रशिक्षण विधियों को भी तय किया जाना आवश्यक है क्योंकि प्रशिक्षण की विधियाँ विभिन्न उद्देश्यों के लिये भिन्न-भिन्न हैं। सामूहिक प्रशिक्षण में भाषण, विक्रय नाटक, भूमिका निर्वाह, विक्रय प्रशिक्षण सम्मेलन, विक्रय गोष्ठियाँ, विक्रय प्रदर्शन, समस्या अध्ययन आदि विधियाँ हैं तथा दूसरी ओर व्यक्तिगत प्रशिक्षण में पत्राचार प्रशिक्षण व कार्य हेर-फेर प्रशिक्षण आदि आते हैं। इनमें से कौन सी विधि संस्था के प्रशिक्षण उद्देश्यों को पूरा करने में समर्थ है इसको तय किया जाना आवश्यक है।

7. **प्रशिक्षक :** प्रशिक्षण योजना का कार्यक्रम को तैयार करते समय उन व्यक्तियों को भी तय किया जाता है जो प्रशिक्षण देंगे। यह प्रशिक्षक संस्था के निरीक्षक या पर्यवेक्षक हो सकते हैं। ऐसे प्रशिक्षक बाहर से भी बुलाये जा सकते हैं। इस प्रकार प्रशिक्षक संस्था एवं बाहर के व्यक्ति भी हो सकती है।

8. **निष्पादन तथा मूल्यांकन :** विक्रय प्रशिक्षण कार्यक्रम के उचित निष्पादन के लिए नियम, पुस्तक, छपा हुआ साहित्य, फिल्म प्रोजेक्टर, फिल्म टेयरिकार्डर, टेलीविजन, सी. डी. आदि को एकत्र करके प्रयोग में लाया जा सकता है। विक्रय प्रशिक्षण के बाद यह देखना कि प्रशिक्षण कितना प्रभावकारी रहा इसका जानना कार्यक्रम का मूल्यांकन कहलाता है। इस मूल्यांकन को करने की क्या विधि होगी इसे भी कार्यक्रम के नियोजन एवं विकास में तय किया जाता है ताकि प्रशिक्षण के विक्रेताओं पर प्रभावों को मापा जा सके।

अच्छे प्रशिक्षण कार्यक्रम की विषय वस्तु

(Contents of a souund Training of Programme)

विक्रय प्रशिक्षण योजना या कार्यक्रम की विषय सामग्री संस्था की आवश्यकताओं, प्रतियोगी दशाओं, विक्रेताओं के स्तर के अनुसार होनी आवश्यक है, तभी उससे अपेक्षित परिणामों की प्राप्ति होगी। फिर भी एक उत्तम प्रशिक्षण कार्यक्रम में निम्न बातों का समावेश अवश्य होना चाहिए :

1. **संस्था का ज्ञान :** विक्रेता को संस्था के बारे में विस्तारपूर्वक जानकारी प्रदान की जानी चाहिये, ताकि संस्था के साथ उसका अपनत्व पैदा हो सके और वह अपनी स्थिति को समझ सके। अतः बिना इस जानकारी के विक्रयकर्ताओं को प्रशिक्षण पूरा कर लेने-देना एक बहुत बड़ी भूल है।" संस्था की जानकारी से विक्रेता के लिए संस्था की प्रतिष्ठा उसकी प्रतिष्ठा का अंग बन जाती है।

2. **ग्रहाकों का ज्ञान :** प्रशिक्षण के दौरान ग्राहकों के बारे में जानकारी देना भी आवश्यक है। प्रथम, ग्राहकों के स्वभाव के बारे में स्पष्ट किया जाए कि उनकी प्रकृति कैसी है जैसे – जिज्ञासु, आलोचक, शर्मीले, भोले-भाले, झगड़ालू, असभ्य, जोशीले, उदासीन आदि। अतः ग्राहकों के प्रकार तथा व्यवहार करने की विधि का ज्ञान करवाना आवश्यक है। द्वितीय, ग्राहकों की क्रय प्रेरणाओं व उद्देश्यों का ज्ञान करवाना भी आवश्यक है।

3. **वस्तुओं का ज्ञान :** विक्रय व द्धि करने तथा अपने कार्य में सफलता प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि विक्रेता को उसके द्वारा बेची जाने वाली वस्तुओं के बारे में पूर्ण ज्ञान करवाया जाये। ऐसा होने पर वह ग्राहकों को वस्तु के बारे में ठीक ढंग से जानकारी देकर उन्हें क्रय के लिए लालायित कर सकता है।

4. **विक्रय प्रस्तुति का ज्ञान :** विक्रेताओं को विक्रय प्रक्रिया, विक्रय प्रस्तुति के बारे में भी बताया जाना चाहिये ताकि वे सफलतापूर्वक विक्रय वार्तालाप कर सके।

5. **प्रतियोगी संस्थाओं का ज्ञान :** विक्रेता को यह जानकारी होना भी जरूरी है कि उसकी प्रतियोगी फर्में कौन-कौन सी हैं, उनके उत्पाद क्या हैं, उनकी विक्रय नीति क्या हैं, उनकी दुर्बलताएँ एवं श्रेष्ठताएँ क्या हैं, उनके बाजार का विस्तार क्या है, उनकी वितरण श ंखलाएँ कौन-कौन सी हैं तथा उनकी तुलना में हमारी वस्तु किस प्रकार उत्तम है।

6. **वितरण विधियों का ज्ञान :** माल के वितरण के लिए एक संस्था थोक व्यापारियों, एजेण्ट, फुटकर व्यापारियों आदि की सेवाएँ लेती है। संस्था श्रंखलाबद्ध दुकानों की स्थापना कर सकती है। अतएव विक्रेता को माल वितरण की विभिन्न विधियों, उनकी शाखाओं, यातायात साधनों आदि के बारे में विस्त त रूप से जानकारी दी जानी चाहिये।

7. **सेवा की शर्तें एवं पारिश्रमिक :** एक नये विक्रेता को उसकी सेवा शर्तों पर पारिश्रमिक भुगतान के बारे में भी जानकारी देना आवश्यक है। उसके कार्य की प्रकृति, पारिश्रमिक का ब्यौरा, भावी पदोन्नतियाँ, अनुशासनात्मक कार्यवाही, मौद्रिक, लाभ, बोनस, सामाजिक सुरक्षाएँ व कल्याण सुविधाएँ, चिकित्सा, विक्रय यात्राएँ आदि के बारे में विस्त त रूप से जानकारी प्रदान कर देनी चाहिये।

8. **नवीनतम विक्रय तकनीकों का ज्ञान :** बाजार, ग्राहक व प्रतिस्पर्द्धा की दशाओं में निरन्तर परिवर्तन होते रहते हैं। जिसके कारण विक्रय के क्षेत्र में नवीन अनुसन्धान होने प्रारम्भ हो जाते हैं। नवीन दशाओं में ग्राहक व व्यापारी के साथ व्यवहार करने के लिए नवीनतम विक्रय तकनीकों व सिद्धान्तों का निर्माण हो जाता है। अतः विक्रेता को इनसे भी अवगत कराना आवश्यक हो जाता है।

9. **दैनिक कार्यों का ज्ञान :** अपने विक्रय कार्य के अतिरिक्त विक्रेता को कई सामान्य प्रबन्धीय एवं गैर विक्रय कार्य भी करने होते हैं, जैसे – आदेशों तथा बिलों को तैयार करना, सामान्य हिसाब-किताब रखना, व्यावसायिक पत्र व्यवहार करना, बीजक तैयार करना, यात्रा कार्यक्रम तैयार करना, मार्ग चार्ट तैयार करना ग्राहकों के नाम व पतों की सूची तैयार करना, ग्राहकों की शिकायतों के प्रत्युत्तर देना, भेंट वार्ता के लिए अनुमति पत्र तैयार करना आदि। अतः विक्रेता को प्रशिक्षण के दौरान इन सामान्य दैनिक कार्यों के निष्पादन के बारे में भी ज्ञान करवाया जाना चाहिये।

10. **संप्रेषण प्रक्रिया का ज्ञान :** कई विक्रेताओं को फर्म के मुख्यालय से बहुत दूर-दूर तक विक्रय हेतु जाना होता है। उन्हें अपने दैनिक कार्य की प्रगति का प्रतिवेदन विक्रय प्रबन्धक को भिजवाना होता है। ग्राहकों को अनेक प्रकार के पत्र लिखने होते हैं। फर्म के मुख्यालय एवं ब्रान्चों से नियमित पत्र व्यवहार करना होता है। अतः विक्रेताओं को संप्रेषण प्रक्रिया के सामान्य सिद्धान्तों का ज्ञान करवाया जाना आवश्यक है।

प्रशिक्षण पद्धतियाँ

(Methods of Training)

विक्रेताओं को प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए कई पद्धतियों का प्रयोग किया जाता है।

सामूहिक प्रशिक्षण पद्धतियाँ

(Group Training Methods)

अधिक व्यक्तियों को एक साथ अथवा समूहों में विभाजित करके प्रशिक्षण देना सामूहिक प्रशिक्षण कहलाता है। इसकी निम्न पद्धतियाँ हैं।

1. **प्रवचन पद्धति :** प्रवचन एक औपचारिक एवं संगठित वार्ता है जो किसी समूह के सम्मुख प्रस्तुत की जाती है। यह विचारों का एक मौखिक प्रस्तुतीकरण एवं सम्प्रेषण है जो किसी कक्ष या खुले स्थान पर भाषण के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। प्रशिक्षाणार्थी प्रवचनकर्ता की वार्ता को सुनते हैं, प्रमुख बातों को नोट बुक में लिख लेते हैं तथा प्रश्नोत्तर द्वारा अपनी शंकाओं का समाधान करते हैं।

   गुण (Merits) :

   (i) इस पद्धति में प्रशिक्षण लागत कम रहती है।

(ii) इसमें एक साथ बहुत व्यक्तियों को प्रशिक्षण दिया जा सकता है।

(iii) सतत् प्रशिक्षण कार्यक्रमों में यह अधिक उपयुक्त रहती है।

(iv) इससे सैद्धान्तिक बातों का ज्ञान आसानी से करवाया जा सकता है।

(v) इसमें प्रशिक्षणार्थी अपने सन्देहों का निवारण आसानी से कर सकते हैं।

(vi) इसमें द श्य-साधनों का भी प्रयोग किया जा सकता है।

दोष (Demerits) :

(i) इसका सैद्धान्तिक ज्ञान पर क्रियात्मक पहलू की तुलना में अधिक बल होता है।

(ii) इसमें प्रशिक्षणार्थी सम्पूर्ण प्रवचन में एकाग्रचित नहीं हो पाते हैं।

(iii) प्रखिक्षणार्थियों की प्रगति का मूल्यांकन कठिन होता है।

(iv) द श्य साधनों के अभाव में दिये गये प्रवचनों का बहुत कम अंश प्रशिक्षाणार्थियों को याद रह पाता है।

2. **समूह परिचर्चा :** इस विधि में आपसी विचार-विमर्श एवं विचारों के आदान-प्रदान के द्वारा विक्रय प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है। विभिन्न सम्मेलनों, सेमिनारों, समूह गोष्ठियों के माध्यम से समूह परिचर्चाओं का आयोजन किया जाता है। इस पद्धति में प्रशिक्षक, समूह संचालक अथवा कोई समूह सदस्य किसी विक्रय समस्या अथवा विषय पर अपने विचार प्रस्तुत करता है। तत्पश्चात् समूह के सभी सदस्य बारी-बारी से उस विषय पर अपने विचार प्रकट करते हैं। सभी विक्रयकर्ता अपने विचारों एवं द ष्टिकोण का विनिमय करते हुये, एक दूसरे की शंकाओं का समाधान करते हुये सर्व सम्मति से समस्या का हल खोजने में सक्षम हो जाते हैं।

प्रवचन विधि शिक्षण (Teaching) पर बल देती है, जबकि समूह परिचर्चा में सीखने (Learning) का तत्व प्रभावी होता है। प्रवचन विधि में प्रशिक्षणार्थी निष्क्रिय बने रहते हैं, जबकि समूह परिचर्चा में उन्हें सक्रिय रूप से भाग लेने का अवसर मिल जाता है। समूह परिचर्चा में प्रशिक्षण का वातावरण प्रवचन विधि की तुलना में अधिक अनौपचारिक एवं प्रोत्साहक होता है। इस सम्बंध में यह महत्त्वपूर्ण है कि परिचर्चा में समूह नेता योग्य होना चाहिये। उसे विक्रयकर्ताओं की समस्याओं व कार्यों का पूर्ण ज्ञान होना चाहिये। वह मानवीय व्यवहार में निपुण व सामान्य विषयों की पूर्ण जानकारी रखने वाला होना चाहिये।

गुण (Merits) :

(i) इसमें सबकी रुचि बनी रहती है क्योंकि सबको अपने विचार प्रकट करने का हक होता है।

(ii) सब मन लगाकर प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं क्योंकि इसमें नए विचार सुनने को मिलते है।

(iii) यह पद्धति सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक ज्ञान कराती है, विक्रेताओं में चिन्तन शक्ति तथा आत्म-विश्वास उत्पन्न करती है।

(iv) यह पद्धति नये तथा अनुभवी दोनों ही प्रकार के विक्रयकर्ताओं के लिए उपयोगी है।

दोष (Demerits) :

(i) परिचर्चा में मुख्य विषय से परे हटकर अनावश्यक चर्चा में समय नष्ट हो सकता है।

(ii) कभी-कभी वाद-विवाद बढ़ जाने के कारण सम्बन्ध वैमनस्यपूर्ण हो जाते हैं।

(iii) इसमें मन्दबुद्धि विक्रेता विचारों का अर्थ एवं प्रभाव तत्काल ग्रहण नहीं कर पाते हैं।

(iv) परिचर्चा का संचालन करना भी एक कठिन कार्य होता है।

3. **विक्रय सम्मेलन पद्धति :** इसका प्रमुख उद्देश्य एक समूह के ज्ञान एवं अनुभव से सबको लाभान्वित करना है। सम्मेलन में विभिन्न विषयों पर आपसी विचार-विमर्श एवं अनुभवों के आदान-प्रदान द्वारा सीखने पर बल दिया जाता है। सम्मेलन में भाग लेने वाले प्रशिक्षणार्थी अपने विचारों, ज्ञान एवं द ष्टिकोण को प्रकट करने के लिए स्वतन्त्र होते हैं। इनमें विचार-विनिमय अनौपचारिक रूप से किया जाता है।

सम्मेलन, सभाओं (Meetings) से भिन्न होते हैं। सभाएँ आपैचारिक होती हैं, जिनमें सभापति एक व्यवस्था बनाये रखता है तथा वह किसी विषय पर अपना उपदेश या भाषण देता है। सम्मेलन प्रायः प्रबन्धकीय पदों पर कार्यकरने वाले कर्मचारियों के प्रशिक्षण के लिए रखे जाते हैं तथा इनमें भाग लेने वाले व्यक्तियों को विषय के सम्बन्ध में थोड़ा-बहुत ज्ञान अवश्य होता है। सम्मेलनों की सफलता बहुत कुछ सीमा तक भाग लेने वालों की इच्छा पर निर्भर करती है।

गुण (Merits) :

(i) सूचनात्मक एवं तर्कमूलक पद्धति है।

(ii) इसमें प्रशिक्षणार्थी सजग होकर भाग लेता है, उसकी रुचि बनी रहती है तथा उसका बौद्धिक विकास सम्भव होता है।

(iii) यह प्रशिक्षणार्थी को विचार प्रकट करने का अवसर प्रदान करती है।

दोष (Demerits) :

(i) प्रशिक्षणार्थियों की अधिक संख्या होने के कारण सबको अपने-अपने विचार प्रकट करने का अवसर नहीं मिल पाता है।

(ii) असंगत मामलों पर वार्तालाप होने से समय नष्ट होने का भय।

(iii) प्रशिक्षण की इस विधि में समय अधिक खर्च होता है।

4. **समस्या अध्ययन पद्धति :** इसमें प्रशिक्षणार्थियों के सम्मुख किसी समस्या के तथ्यों का वर्णन कर इन तथ्यों के आधार पर उन्हें समस्या का हल खोजने के लिए कहा जाता है। समस्या काल्पनिक अथवा वास्तविक हो सकती है। प्रशिक्षणार्थी समस्त स्थितियों पर विचार करते हुये समस्या का समाधान अथवा वैकल्पिक क्रिया-विधियाँ (Lines of Action) प्रस्तुत करते हैं। इन प्रस्ताविक हलों पर समूह द्वारा विचार-विमर्श किया जा सकता है।

प्रशिक्षणार्थियों को सदैव सतर्क रहकर समस्या का अध्ययन करना पड़ता है। साथ ही, इस पद्धति की बहुत-कुछ सफलता प्रशिक्षक की निर्देशक-योग्यता पर भी निर्भर करती है।

गुण (Merits) :

(i) यह पद्धति व्यावहारिक प्रशिक्षण प्रदान करती है।

(ii) इस विधि से विश्लेषण-योग्यता, तर्क शक्ति एवं अवलोकन व निर्णय कौशल का विकास होता है।

(iii) प्रशिक्षणार्थी सतर्कता के साथ प्रशिक्षण ग्रहण करता है।

(iv) कुशल प्रशिक्षकों द्वारा निर्देशन प्राप्त होता है तथा प्रशिक्षार्थी को क्रमबद्ध प्रशिक्षण मिलता है।

दोष (Demerits) :

(i) इस पद्धति में प्रशिक्षण व्यय अधिक होते हैं।

(ii) प्रशिक्षण में अधिक समय लगता है।

5. **भूमिका निर्वाह पद्धति :** इस पद्धति में प्रशिक्षाणार्थियों को प्रशिक्षण नाटकीय विधि से दिया जाता है। उन्हें विभिन्न पदों पर अपनी-अपनी भूमिका अदा करनी होती है। उदाहरण के लिए, प्रशिक्षणार्थियों में से कुछ को विक्रयकर्ता, कुछ को विक्रय पर्यवेक्षक, कुछ को ग्राहक तथा कुछ को अन्य भूमिकायें दे दी जाती हैं तथा फिर उन्हें विशिष्ट परिस्थितियों में अपने भूमिकाओं का निर्वाह करना होता है। प्रशिक्षक उनकी भूमिका के निर्वाह का अवलोकन एवं मूल्यांकन करते हैं तथा अन्त में आवश्यक निर्देशन भी देते हैं।

गुण (Merits) :

(i) यह पद्धति स्व-मूल्यांकन, स्व-प्रेरणा व मनोविश्लेषण का अवसर प्रदान करती है।

(ii) यह अच्छे मानवीय सम्बन्धों, नये विचारों एवं द ष्टिकोणों, स्व-शिक्षण, अन्तद ष्टि व मानवीय गुणों के विकास में सहायक रहती है।

(iii) यह भावात्मक रूप से विषय-विस्तु मानसिक आवश्यकताओं की सन्तुष्टि प्रदान करने में सहायक होती है।

(iv) नये विक्रेताओं के लिए यह विधि अत्यन्त उपयुक्त है।

(v) यह प्रशिक्षण की एक ऐसी विधि है जो प्रशिक्षणार्थियों को विभिन्न व्यवहारों, मनोव त्तियों एवं मनोदशाओं का अनुभव कराती है।

(vi) इसमें प्रतिपुष्टि निरन्तर बनी रहने के कारण क्रियाओं के परिणामों एवं प्रगति का तत्काल ज्ञान होता रहता है।

(vii) विक्रय-क्षेत्र की कठिन समस्याओं के हल खोजने में सफलता।

दोष (Demerits) :

(i) यह खर्चीली पद्धति है।

(ii) कभी-कभी व्यक्ति इसे मात्र अभिनय मानकर वास्तविक स्थिति से नहीं जुड़ पाते।

6. **अनुरूपन या क्रीडा पद्धति :** इस विधिमें प्रशिक्षणार्थियों को विक्रय प्रयासों, विज्ञापन, विक्रय शक्ति के प्रबन्धन, आदेशों का आकार, आदेशों का समय आदि से सम्बद्ध निर्णय लेने की विधि का ज्ञान कराया जाता है। प्रशिक्षणार्थियों के द्वारा लिये गये निर्णयों का मूल्यांकन प्रशिक्षकों के द्वारा किया जाता है।

7. **विशेष पाठन पद्धति :** विशेष पाठन कार्यक्रम विधि में एक व्यक्ति किसी विशिष्ट विषय पर अपना भाषण पढ़ता है एवं अन्य प्रशिक्षणार्थी उसे सुनते हैं तथा उस पर विचार-विमर्श करते हैं। भाषण प्रवाचक पूर्ण तैयारी के साथ अपना पत्र तैयार करता है। वह उसमें नवीन जानकारी को सम्मिलित करता है। यह विधि भी आपसी विचार-विमर्श द्वारा प्रशिक्षण की विधि है। ऐसे कार्यक्रम संस्थाओं द्वारा अपने विभाग में ही नये व पुराने विक्रेताओं के लिए आयोजित किये जाते हैं।

8. **गोलमेज पद्धति :** इस विधि में अनौपचारिक पारस्परिक वार्ता के माध्यम से विभिन्न विषयों पर विचार-विमर्श किया जाता है। यह वार्ता प्रशिक्षणार्थियों द्वारा एक प्रशिक्षक के निर्देशन में एक गोलमेज के इर्द-गिर्द बैठकर की जाती है। प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के विभिन्न विषयों पर ये वार्तायें आयोजित की जाती हैं तथा प्रश्नोत्तर वं विचार-विनिमय के द्वारा यह प्रशिक्षण सम्पन्न किया जाता है।

9. **सचेतनता प्रशिक्षण :** विक्रेताओं के लिए आवश्यक है कि अपने ग्राहक की भावनाओं, विचारों, मनोव त्तियों, भावनात्मक प्रतिक्रियाओं के प्रति सचेत उसे अपने क्रेताओं की उठोरणाओं व संवेदनाओं को भली-भांति समझना होता है। इस प्रशिक्षण विधि में प्रशिक्षणार्थियों को अपने व्यवहार से दूसरे पर पड़ने वाले प्रभावों के प्रति जाग त करना है।

इस प्रशिक्षण का प्रमुख उद्देश्य प्रशिक्षणार्थियों में मानवीय व्यवहार की योग्यता का विकास करना है।

10. **विक्रय नाट्य प्रशिक्षण :** इसमें प्रशिक्षक विक्रय प्रबन्धक अथवा पुराने विक्रयकर्ता, विक्रय व्यवहारों एवं कार्यों को अभिनय के रूप में प्रदर्शित करते हैं। उदाहरण के लिए, इसमें एक अधिकारी या प्रशिक्षक क्रेता की भूमिका निभाता है, तो दूसरा विक्रेता का अभिनय करता है। क्रेता अपनी क्रय समस्या सामने रखता है तथा विक्रेता उसे सहज रूप से हल करता है। साथ ही, विक्रय प्रस्तुति के अन्य चरण भी निष्पादित किये जाते हैं।

    इस प्रकार इस नाट्य प्रदर्शन को देखकर नये विक्रेता अपनी भूमिकाएँ कार्य व विक्रय व्यवहारों के बारे में महत्त्वपूर्ण बातें सीखते हैं। प्रशिक्षण की यह पद्धति प्रभावी होने के साथ-साथ अत्यन्त रोचक भी है। विक्रय क्षेत्र में इसका प्रयोग निरन्तर बढ़ रहा है।

    गुण (Merits) :

    (i) नाट्य-शैली के कारण प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले विक्रेता की रुचि बनी रहती है।

    (ii) यह व्यावहारिक एवं सैद्धान्तिक दोनों ही पहलुओं की जानकारी कराती है।

    (iii) इसमें वास्तविक विक्रय स्थिति को देखने व समझने का अवसर मिलता है।

    (iv) यह प्रशिक्षण कुशल विक्रयकर्ताओं द्वारा किया जा सकता है।

    दोष (Demerits) :

    (i) कई प्रशिक्षाणार्थी प्रशिक्षण प्राप्त करने एवं सीखने पर कम ध्यान दे पाते हैं अभिनय पक्ष पर ज्यादा।

    (ii) पुराने विक्रयकर्ताओं के प्रशिक्षण में व्यस्त हो जाने के कारण उनके नियमित कार्य-निष्पादन में बाधा पड़ती है।

11. **विशेष पाठ्यक्रम :** आजकल विभिन्न विश्वविद्यालयों एवं प्रबन्ध संस्थाओं द्वारा विपणन, विक्रय प्रबन्ध, विक्रयकला, विज्ञापन एवं प्रचार, विपणन अनुसन्धान आदि विषयों के प्रशिक्षण हेतु विशिष्ट पाठ्यक्रम तैयार किये गये हैं। इसके अतिरिक्त अनेक पेशेवर संस्थान भी समय-समय पर प्रशिक्षण कार्यक्रम तैयार करते हैं। व्यावसायिक संस्थायें इन पाठ्यक्रमों की सहायता से अपने विक्रेताओं को प्रशिक्षण प्राप्त करने का प्रबन्ध करती हैं।

II वैयक्तिक प्रशिक्षण विधियाँ

(Individual Training Methods)

जब एक व्यक्ति को प्रशिक्षण दिया जाता है तब ऐसे प्रशिक्षण को वैयक्तिक प्रशिक्षण कहते हैं। इस प्रकार के प्रशिक्षण की प्रमुख प्रचलित विधियाँ निम्न हैं :

1. **कार्य पर प्रशिक्षण :** इस विधि के अन्तर्गत प्रशिक्षक जो कि वरिष्ट विक्रयकर्ता या पेशेवर प्रशिक्षक हो, प्रशिक्षणार्थी को वस्तुओं, विक्रय शर्तों व विशिष्ट विक्रय स्थितियों के बारें में बतलाता है, विभिन्न विक्रय तकनीकें समझता है। और प्रयुक्त किए जाने वाले तर्कों से अवगत करता है। तदुपरान्तए प्रशिक्षक प्रशिक्षाणाथी, को अपने साथ रखते हुए विभिन्न प्रकार के ग्राहकों को विक्रय करता है और विक्रय कर चुकने के बाद प्रशिक्षणार्थी के साथ प्रत्येक ग्राहक के सम्बन्ध में बातचीत करता है। कुछ दिनों तक इस प्रकार प्रशिक्षक प्रशिक्षणार्थी को समझाता रहता है। इसके उपरान्त वह प्रशिक्षणार्थी से ग्राहकों के साथ व्यवहार करने एवं उन्हें बेचने के लिए कहता है प्रशिक्षक प्रशिक्षणार्थी के समस्त क्रिया-कलापों को देखता रहता है और यथा समय अथवा हर विक्रय के बाद प्रशिक्षणार्थी के दोषों को दूर करता रहता है। इसमें व्यक्ति प्रशिक्षण के साथ-साथ अनुभव भी प्राप्त करता रहता है तथा यह विधि मितव्ययी भी है। इस विधि में प्रशिक्षण वास्तविक कार्य स्थितियों में दिया जाता है और प्रशिक्षण हेतु कृत्रिम वातावरण तैयार करने की जरूरत नहीं पड़ती है। इसके अतिरिक्त इस विधि में प थक पाठ्यक्रम व प्रशिक्षकों की व्यवस्था भी नहीं करनी पड़ती हैं। यह प्रशिक्षण विधि सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक दोनों ही प्रकार का प्रशिक्षण प्रदान करती

है और विक्रयकर्ताओं में आत्मविश्वास पैदा करती है।

2. **निजी चर्चायें :** इस विधि में सामान्यतः वरिष्ठ विक्रय अधिशासी अपने विक्रयकर्ताओं के साथ निजी तौर पर चर्चायें करता है और उनकी कठिनाइयाँ, शंकायें आदि दूर करता है। इस विधि के जरिए, विक्रय समय के प्रभावी उपयोग, मार्ग-नियोजन, क्रेता सम्पर्क कार्यक्रम सूचियन तथा अन्य असाधारण समस्याओं के निवारण का प्रशिक्षण अच्छी तरह दिया जा सकता है।

3. **पत्राचार पाठ्यक्रम :** पत्राचार पाठ्यक्रमों द्वारा संस्थाएँ अपने अनुभवी विक्रयकर्ताओं, वितरकों एवं अन्य बाहरी व्यक्तियों को उत्पाद सुधार, विक्रय शर्तों में परिवर्तन आदि की जानकारी देने का कार्य सम्पन्न करती है। ऐसे प्रशिक्षण हेतु संस्थाओं को समय-समय पर विक्रय साहित्य तैयार करना पड़ता है और अपने विक्रयकर्ताओं, वितरकों तथा अन्य प्रशिक्षणार्थियों को उसे भेजना होता है। शंका समाधान भी पत्राचार द्वारा ही किया जाता है।

   यह विधि नये विक्रयकर्ताओं के लिए अनुपयुक्त रहती है। पाठ्यक्रमों की विषय-वस्तु तथा लिखित सामग्री हेतु सूचनाओं का एकत्रीकरण काफी कठिन कार्य होता है। इस विधि को अन्य विधियों के साथ ही प्रयुक्त किया जाना चाहिए।

4. **कार्य आवर्तन हेर-फेर प्रशिक्षण :** विक्रयकर्ताओं को विविधतापूर्ण कार्यों में दक्षता प्रदान करते हेतु एक वस्तु विभाग से दूसरे विभाग में या एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में समय-समय पर आवर्तित किया जा सकता है। इस प्रशिक्षण को भली प्रकार से सोच विचारकर नियोजित किया जाना चाहिए ताकि प्रशिक्षणार्थी को प्रत्येक क्षेत्र व वस्तु विभाग का पूर्ण ज्ञान हो सके और विशेष रूप से उन बातों का जो विक्रय से सम्बन्ध रखती है। आकस्मिक आवश्यकताओं के समय उसे किसी भी वस्तु विभाग या क्षेत्र में स्थानान्तरित किया जा सकता है। पदोन्नति किए जाने पर उसे अधीनस्थों के कार्यों का व्यक्तिशः व्यवहारिक अनुभव होता है।

5. **व्यक्तिगत मूल्यांकन एवं मार्गदर्शन :** इस विधि में प्रशिक्षणार्थी के कार्य में प्रशिक्षण (On the Job Training) करते समय जो कमियाँ व अच्छाइयाँ सामने आती है। उनकी समीक्षा की जाती है और इस सम्बन्ध में कदम उठाये जाते हैं कि उनकी कार्यक्षमता एवं ज्ञान को किस प्रकार सुधारा जाये। इस प्रकार के सम्मेलन विक्रय कायोलयों (Sales offices) पर होते है और इसमें प्रशिक्षार्थी को पढ़ाने के लिए अतिरिक्त साहित्य दिया जाता है। यह पुराने एवं अनुभवी विक्रयकर्ताओं को पुनः प्रशिक्षण (re training) के लिए भी किया जाता है जिससे कि उनकी कार्यकुशलता में और अधिक व द्धि हो सके।

6. **विश्वविद्यालयों तथा प्रशिक्षण संस्थाओं, कॉलेजों में प्रशिक्षण :** विश्वविद्यालयों व कॉलेजों में भी विक्रय कला व तकनीकी विषयों से सम्बन्धित पाठ्यक्रम होते हैं जहां सायंकालीन या दिन की कक्षाओं के स्कूलों में पढ़ाई होती है। इन संस्थाओं में उन्नत ज्ञान व प्रशिक्षण पर बल दिया जाता है।

प्रशिक्षण की सीमायें

(Limitations of Training)

विक्रेताओं को प्रशिक्षण देने से निम्नबाधाएँ तथा सीमाएँ उत्पन्न होती है :

1. **दैनिक कार्यों में बाधा :** विक्रेताओं को प्रशिक्षण कार्यक्रम की वजह से कार्यालय में बुला लिया जाता है जिसके कारण उनके दैनिक कार्यों में बाधाएँ उत्पन्न हो जाती हैं जो उचित नहीं है।

2. **अच्छे प्रशिक्षकों का अभाव :** प्रशिक्षण कार्य के लिए दक्ष एवं अनुभवी व्यक्तियों की आवश्यकता पड़ती है जिनकी प्रायः कमी पाई जाती है।

3. **छोटी संस्थाओं के लिए अपव्ययी :** विक्रेताओं के प्रशिक्षण पर काफी मात्रा में व्यय करना पड़ता है जिनको छोटी संस्थायें वहन करने में असमर्थ होती हैं। इससे उन्हें इतना लाभ प्राप्त नहीं होता जितना उन्हें व्यय करना

पड़ता है।

4. **प्रशिक्षण मात्र से क्षमता में व द्धि नहीं :** केवल प्रशिक्षण देने मात्र से विक्रेता की क्षमता में व द्धि नहीं हो जाती बल्कि इसके लिये सत्य निष्ठा, लग्न तथा मेहनत की आवश्यकता भी होती है। यदि विक्रेता इनमें चूक करता है तो उसको दिया गया प्रशिक्षण उसकी क्षमता में व द्धि नहीं कर पायेगा।

5. **विक्रेताओं के आवर्त से प्रशिक्षण व्यय की हानि :** कई बार विक्रेता प्रशिक्षण तथा अनुभव प्राप्त होने के बाद इस संस्था को छोड़कर चले जाते हैं जिसके कारण उनके प्रशिक्षण पर किये गये व्यय की हानि होती है।

6. **विक्रय के प्रत्येक पहलू का ज्ञान कराना सम्भव नहीं :** प्रशिक्षण से प्रत्येक व्यक्ति को प्रत्येक बात सिखाया जाना संभव नहीं है। कई बार उसे अपने विवेक तथा बुद्धि से निर्णय करने पड़ते हैं।

7. **अरुचि की समस्या :** अनुभवी विक्रेता कई बार प्रशिक्षण में रुचि ही नहीं लेते। उनका मानना होता है कि उन्हें सब कुछ आता है।

8. **चुनाव की त्रुटियों का निवारण प्रशिक्षण से नहीं :** यदि विक्रेताओं के चुनाव में सावधानी तथा सर्तकता न बरतकर अयोग्य, निष्ठाहीन, शरारती व्यक्तियों का चुनाव कर लिया जाता है तो इन कमियों को प्रशिक्षण से पूरा करना सम्भव नहीं है जिससे उनके प्रशिक्षण पर किया गया व्यय भी अपव्यय साबित होता है।

उपयोगी प्रश्न

(Useful Questions)

1. विक्रय प्रशिक्षण के महत्व का संक्षिप्त विवरण दें और विक्रय-प्रशिक्षण की विभिन्न विधियों की व्याख्या करें।
Describe in brief the importance of Sales-training. Explain different methods of training salesmen.

2. 'जन्मजात विक्रयकर्ता अच्छे होते हैं, लेकिन प्रशिक्षित विक्रयकर्ता उनसे भी अच्छे होते हैं।' इस कथन की व्याख्या करो, विक्रयकर्ताओं को प्रशिक्षण देने की विभिन्न प्रचलित विधियों की व्याख्या करो।
'Born Salesmen are good but trained salesman are better.' Discuss. Explain the methods usually employed to trained salesmen.

3. प्रशिक्षण से आपका क्या अभिप्राय है? विक्रयकर्ताओं के प्रशिक्षण-कार्यक्रम के विभिन्न चरणों की व्याख्या करें।
What do you mean by Training? Explain various steps in Sales-force-training.

4. विक्रयकताओं के प्रशिक्षण से आपका क्या अभिप्राय है? विक्रय-प्रशिक्षण के लाभ व प्रशिक्षण तत्त्वों की व्याख्या करें।
What do you mean by training of Salesmen? Discuss the advantages of training and explain Training-Contents.

5. अच्छे विक्रय-प्रशिक्षण-कार्यक्रम के विषयों/तत्वों की व्याख्या करें। आप किसी संगठन के विक्रयकर्ताओं को प्रशिक्षण देने के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम को किस तरह संगठित करेंगे?
Discuss the contents of a good salesmen-training-programme. How will you organise a training-programme for sales-personnel of any organisation?

6. विक्रयकर्ताओं के प्रशिक्षण के उद्देश्य लिखें और प्रभावी विक्रय-प्रशिक्षण-प्रोग्राम के विषय-सामग्री की व्याख्या

करें।

State the objectives of salesmen's training and explain the subject-matter of effective salesmen-training-programme.

7. **विक्रय-शक्ति-प्रबन्ध से आपका क्या तात्पर्य है? विक्रय-शक्ति-प्रबन्ध की भर्ती, चयन और प्रशिक्षण क्रिया का अर्थ समझायें।**

What do you mean by Sales-Force-Management? Explain the meaning of Recruitment, Selection, Training activities of Sales-force-management.

8. **विक्रय-शक्ति की भर्ती और चयन से आपका क्या अभिप्राय है? विक्रयकर्ता-भर्ती के विभिन्न स्रोतों की व्याख्या करें और इनकी चयन प्रक्रिया समझायें।**

What do you mean by Recruitment and Selection of Sales-force? Explain various source of their Recruitment and narrate the selection process.

अध्याय - 20
अभिप्रेरणा
(Motivation)

अभिप्रेरणा का अर्थ
(Meaning of Motivation)

विक्रयकर्ताओं की उपक्रम के प्रति सत्यनिष्ठा, उत्साह अधिक से अधिक कार्य करने की इच्छा का होना आवश्यक है। इनके होने से विक्रेता अधिकतम कुशलता से कार्य करके विक्रय के निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने में सफल होते हैं। विक्रेता में इन गुणों को उत्पन्न करने के लिए उन्हें अभिप्रेरित किया जाना आवश्यक होता है। विक्रेता समूह को उपक्रम का कार्य करने, उसके प्रति उत्साह उत्पन्न करना तत्परता व निष्ठा की भावनाओं को जाग त करना ही अभिप्रेरणा कहलाती है। अतः अभिप्रेरणा एक आन्तरिक इच्छा या भावना है जो किसी व्यक्ति को पूर्व निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए उत्प्रेरित आवश्यकताओं को समझने एवं सन्तुष्ठ करने की प्रक्रिया है जो उसे किन्हीं कार्यों के लिए गति, शक्ति एवं उत्साह प्रदान करती है।

परिभाषाएँ

1. माइकल जे. जूसियस के अनुसार, "अभिप्रेरणा स्वयं को अथवा अन्य व्यक्ति को इच्छित कार्य करने हेतु प्रोत्साहित करने की क्रिया है अथवा वांछित प्रतिक्रया प्राप्त करने के लिये सही बटन दबाना है।"
   "Motivation is the act of stimulating some one else or ourself to take a desised course of action,"
   — Jucius Miachel
2. मैक्फारलैण्ड के शब्दों में, "अभिप्रेरणा एक तरीका है जिसेमें प्रेरणाओं, उद्वेगों, महत्वाकांक्षाओं, प्रयत्नों या आवश्यकताओं के जरिये मानवीय व्यवहार का निर्देशन, नियन्त्रण एवं स्पष्टीकरण किया जाता है।"
   "Motivation refers to the way in which urges, desires aspirations, strings or needs direct, control or explain the behaviour of human being. **— Mc Farland**

ऊपर वर्णित परिभाषाओं के आधार पर अभिप्रेरणा उन शक्तियों का एक मिश्रित रूप है जो कि व्यक्तियों को कार्य प्रारम्भ करने एवं कार्य पर बनाये रखने में सहयोग करती है। अर्थात् अभिप्ररेणा एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा कर्मचारियों की आवश्यकताओं, इच्छाओं व भावनाओं को समझकर उनके व्यवहार को लक्ष्य की ओर निर्देशित एवं उत्प्रेरित किया जाता है।

अभिप्रेरणा की विशेषताएँ
(Characteristics or Features of Motivation)

1. **मनोवैज्ञानिक विचारधारा –** अभिप्रेरण एक मनोवैज्ञानिक विचारधारा होती है। समस्त इच्छाओं व प्रेरणाओं का

जन्म मानवीय मस्तिष्क से होता है। इनकी सन्तुष्टि व असन्तुष्टि की अनुमति भी मास्तिष्क की आन्तरिक अनुभूति है। इस आन्तरिक अनुभूति पर बाह्य वातावरण का प्रभाव पड़ता है। अतः अभिप्रेरणा के माध्यम से विक्रेता को यह अनुभूति करायी जाती है कि उसका उस संस्था के लिए कितना महत्व है।

2. **अभिप्रेरण लक्ष्य प्रधान व्यवहार है –** संस्था के लक्ष्य ही अभिप्रेरण की दिशा निश्चित करते हैं। अतः संगठन के जो लक्ष्य हैं उसकी प्राप्ति के लिए ही एक लक्ष्य प्रधान व्यवहार है जिसके द्वारा व्यक्तियों को उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप प्रलोभन या आश्वासन देकर संस्था के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए अभिप्रेरित किया जाता है।
3. **आवश्यकता सन्तुष्टि की प्रक्रिया –** असन्तुष्ट आवश्यकताओं को पूरा करने की इच्छा ही व्यक्तियों को कार्य करने के लिए प्रेरित करती हैं। इन्हें सन्तुष्ट करने के लिए व्यक्ति साधनों की खोज व प्रयास करता है। अभिप्रेरण व्यक्ति की असन्तुष्ट आवश्यकताओं को सन्तुष्ट करने की प्रक्रिया है।
4. **अभिप्रेरणा प्रयास व कार्य करने की प्रेरणा है –** अभिप्रेरण कार्य एवं प्रयास करने के लिए प्रेरणा है। व्यक्ति में जिन इच्छाओं व आशाओं का संचार होता है, उनकी पूर्ति के प्रलोभन में ही उसे संगठन के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु कार्य करने के लिए प्रेरित किया जाता है।
5. **अभिप्रेरण हेतु प्रेरणायें विविधप्रकार की होती है –** किसी एक ही प्रकार की प्रेरणा से सबको अभिप्रेरित नहीं किया जा सकता है। भिन्न-भिन्न समय पर व भिन्न-भिन्न व्यक्तियों के लिए भिन्न-भिन्न प्रेरणाओं का प्रयोग किया जाता है। ये प्रेरणायें वित्तीय व अवित्तीय हो सकती है।
6. अभिप्रेरणा रुचि, लगन एवं उत्साह उत्पन्न करती है। अभिप्रेरण से विक्रेताओं में कार्य के प्रति रुचि उसमें लगन तथा उत्साह उत्पन्न किया जाता है।
7. **यह एक सतत् प्रक्रिया है –** अभिप्रेरण लगातार चलने वाली प्रक्रिया है। विक्रेताओं के कुशलतापूर्वक कार्य सम्पादन के लिए उन्हें निरन्तर प्रेरित किये जाने की आवश्यकता होती है। निरन्तर प्रेरणा मिलने पर ही वे कार्य के लिए सदैव तत्पर व सचेष्ट रहेंगे।
8. **अभिप्रेरणा आन्तरिक ऊर्जा को गतिशील बनाती है –** प्रत्येक व्यक्ति में आन्तरिक ऊर्जा होती है। विक्रेता को अभिप्रेरण के द्वारा प्रेरित करके उसमें छुपी आन्तरिक ऊर्जा को विक्रय कार्य को उत्साहित ढंग से करने के लिए क्रियाशील बनाया जाता है।

अभिप्रेरणा का उद्देश्य

(Objectives of Motivation)

अभिप्रेरणा का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति को कार्य करने के लिए अभिप्रेरित करना है। सामान्यतः अभिप्रेरणा की प्रक्रिया के निम्नांकित उद्देश्य होते हैं।

1. विक्रेताओं को अधिक कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करना।
2. विक्रेताओं तथा प्रबन्धकों के बीच अच्छे सम्बन्ध स्थापित करना।
3. विक्रेताओं की आर्थिक, सामाजिक एवं मानसिक आवश्यकताएँ सन्तुष्ट करना।
4. विक्रेताओं की कार्य क्षमता में व द्धि करने के लिए प्रेरित करना।
5. विक्रेताओं को अधिक कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करना।

6. विक्रेताओं के कार्य या सेवा की किस्म में सुधार लाने की प्रेरणा देना।
7. विक्रेताओं को कार्य सन्तुष्टि प्रदान करना।
8. विक्रेताओं का पूर्ण सहयोग प्राप्त करना।
9. पर्यवेक्षण निर्देशन व नियन्त्रण की आवश्यकता को कम करना।
10. अपव्ययों पर नियन्त्रण।

अभिप्रेरणा की आवश्यकता और महत्त्व

(Need & Importance of Motivation)

किसी भी उपक्रम का अस्तित्व व विकास उसके विक्रय स्तर पर निर्भर करता है और विक्रय स्तर एक बड़े स्तर तक विक्रेताओं के विक्रय प्रयासों पर निर्भर करता है। जबकि विक्रेताओं की निष्ठा, निष्पादन व प्रयास उन्हें प्राप्त होने वाली प्रेरणाओं से प्रभावित होते हैं। अतः विक्रेताओं का अभिप्रेरणा उपक्रम की सफलता का आधार है। इसकी आवश्यकता और महत्त्व को निम्न बातों से समझा जा सकता है :

1. **व्यावसायिक उपक्रमों की आकार व द्धि –** व्यावसायिक इकाईयों का आकार तथा उनके विक्रय क्षेत्रों में हो रही व द्धि के कारण सभी कर्मचारियों के उचित पर्यवेक्षण तथा निर्देशन में अत्यन्त कठिनाई होती है। समस्त प्रयासों के बावजूद कर्मचारियों की क्रियाएँ उद्देश्यों से विमुख हो जाती हैं। उपक्रम के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए कर्मचारियों द्वारा दिये गये योगदान के एवज में यदि उपयुक्त प्रतिफल एवं प्रेरणा का प्रावधान कर दिया जाता है तो कर्मचारी को पर्यवेक्षण एवं निर्देशन की आवश्यकता होती है तथा वे स्वतः ही कार्य को कुशलता से सम्पादित कर लेते हैं।
2. **पूर्ण कार्यक्षमता का सदुपयोग –** विक्रताओं में विक्रय करने की क्षमता होती है किन्तु अधिकांश विक्रेता अपनी केवल उतनी ही कार्यक्षमता का उपयोग करते हैं जिनसे उनकी नौकरी बनी रहे। विक्रेता को प्रेरणाएँ देकर उनकी क्षमता का अधिकतम उपयोग किया जा सकता है। अतः विक्रेताओं के लिए अभिप्रेरणा आवश्यक है।
3. **मानवीय स्वभाव –** मानवीय स्वभाव के अनुसार व्यक्ति सामन्य स्तर से अधिक कार्य तभी करता है जबकि उसे कोई आर्थिक लाभ या सामाजिक महत्त्व की प्राप्ति रही हो। अतः उनसे औसत स्तर से अधिक कार्य करवाने के लिए अभिप्रेरण की आवश्यकता होती हैं।
4. **कार्यक्षमता में व द्धि –** अभिप्रेरणाओं से प्राप्त होने वाली सन्तुष्टि विक्रेता को अपनी कार्यक्षमता बढ़ाने के लिए प्रेरित करती है। इस सम्बन्ध में कंडिफ के ये शब्द महत्त्वपूर्ण हैं, "विक्रेताओं में उच्च उत्पादकता न तो स्वतः ही आती है और न आकस्मिक रूप से ही। यह विक्रेताओं के साथ बुद्धिमतापूर्वक सम्बन्ध रखने तथा यथा समय उपयुक्त अभिप्रेरणाओं के प्रयोग से ही विकसित होती है।
5. **कार्य सन्तुष्टि में व द्धि –** अभिप्रेरणा के अर्न्तगत दी जाने वाली मौद्रिक व अमौद्रिक प्रेरणाएँ विक्रेता को उसके कार्य से सन्तुष्टि का अनुभव कराती है जिसके परिणामस्वरूप विक्रेताओं तथा प्रबन्धकों के बीच मधुर सम्बन्ध स्थापित होते हैं।
6. **नीरसता की समाप्ति –** जब विक्रेता एक ही कार्य को बार-बार करता है तो उसे उस कार्य में नीरसता का अनुभव होने लगता है, लेकिन विभिन्न मौद्रिक अभिप्रेरणाएँ देकर उसकी इस नीरसता को समाप्त करके उसमें कार्य के प्रति एक नये उत्साह का संचार किया जा सकता है।

7. **परस्पर सहयोग** – विक्रेताओं को अभिप्रेरित करने से वे सन्तुष्ट रहते हैं जिससे उनका प्रबन्धकों तथा सहयोगियों के साथ व्यवहार सहयोगपूर्ण रहता है। उत्पादकता व द्धि तथा कार्य के समुचित ढंग से संचालन की द ष्टि से सहयोगपूर्ण वातावरण होना अत्यन्त आवश्यक है। इस स्थिति की प्राप्ति अभिप्रेरणाओं से ही हो सकती है।
8. **जटिल कार्य आसान** – विक्रेता को वस्तु का विक्रय करने में ग्राहक की जेब से पैसे निकलवाने होते हैं जोकि एक जटिल कार्य है। इसके अतिरिक्त उसे क्रेताओं की शंकाओं का समाधान करना होता है उनकी आलोचनाओं का सुनना होता है जो कि आसान कार्य नहीं है। अतः ऐसे कार्यों को रुचीकर बनाने के लिए तथा उन्हें उत्साहित करने के लिए अभिप्रेरणा आवश्यक है।
9. **मनोबल में व द्धि** – विक्रेताओं के मनोबल में व द्धि करने के लिए भी कुछ विशिष्ट सुविधाएँ व लाभ प्रदान किये जाने आवश्यक हैं। विक्रेताओं को जितनी अधिक अभिप्रेरणाएँ दी जाएँगी, उनका मनोबल उतना ही ऊँचा उठेगा क्योंकि इनसे उनकी आवश्यकताएँ सन्तुष्ट होती है। उच्च मनोबल संस्था के विक्रय व द्धि में सहायक होता है।
10. **व्यक्तिगत समस्याएँ** – विक्रेताओं को व्यवसाय के कार्य से अनेक बार अपने घर से दूर जाना पड़ता है। इसके कारण वह अपने परिवार के कष्टों में भागीदार नहीं बन पाता। घर से दूर उसे अकेलापन भी अनुभव करना पड़ता है जिसका उसकी कार्यकुशलता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। उसे इनसे उभारने के लिए अमौद्रिक प्रेरणाएँ देकर अभिप्रेरित किया जा सकता है।

अभिप्रेरणा के सिद्धान्त

(Principles of Motivation)

विक्रेताओं को अभिप्रेरित करने की प्रक्रिया में निम्न सिद्धान्तों का पालन करना चाहिये -

1. विक्रेताओं के साथ मानवीय व्यवहार किया जाना चाहिये।
2. विक्रेताओं का कुशल नेत त्व प्रदान किया जाना चाहिये।
3. विक्रेताओं के सुझावों व विचारों का सम्मान करना चहिए तथा उन पर प्रयाप्त ध्यान देना चाहिए।
4. विक्रेताओं के अस्तित्व एवं व्यक्तित्व को स्वीकार करना चाहिये।
5. विक्रेताओं में सुरक्षा की भावना उत्पन्न की जानी चाहिये।
6. विक्रेताओं के कार्यों को मान्यता दी जानी चाहिए।
7. विक्रेताओं को प्रगति एवं विकास के अवसर प्रदान किये जायें।
8. विक्रेताओं की विक्रय कार्यों के नियोजन एवं नीतिनिर्धारण में सहभागिता हो।
9. संगठन में दलीय भावना उत्पन्न की जाये।

अभिप्रेरणा प्रक्रिया

(Motivation Process)

किसी भी व्यावसायिक संस्था की सफलता बहुत कुछ उसकी अभिप्रेरण पद्धति पर ही निर्भर करती है। अतः उपक्रम की सफलता के लिए उचित अभिप्रेरणा की प्रक्रिया को अपनाना अत्यन्त आवश्यक है। अभिप्रेरणा एक निरन्तर जारी रहने वाली प्रक्रिया है जिसे निम्नलिखित चरणों में पूरा किया जाता है :

1. **उद्देश्य निर्धारण** (Determining Objective) – सर्वप्रथम यह निश्चित करना चाहिए कि अभिप्रेरण से क्या अर्जित करने के लिए कर्मचारियों को प्रेरित करना है। मितव्ययता, किस्म सुधार, उत्पादन व द्धि, प्रतिस्पर्द्धा पर नियन्त्रण

आदि लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु कर्मचारियों को अभिप्रेरित किया जा सकता है। इनका निर्धारण आवश्यक है ताकि उन्हें उद्देश्यों के साथ जोड़ा जा सके।

2. **आवश्यकताओं का अध्ययन** (Study of The Needs) – उद्देदश्य निश्चित होने के बाद प्रबन्धकों को कर्मचारियों की समस्याओं, आवश्यकताओं, महत्वाकांक्षाओं आदि का पता लगाना चाहिए, ताकि उनके लिए उचित प्रेरणाओं का निर्धारण किया जा सके। कर्मचारियों की आवश्यकताओं का पता लगाने के बाद ही उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति के प्रलोभन से ही उन्हें अभिप्रेरित किया जा सकता है।

3. **अभिप्रेरकों का चयन** (Selection of the Motivators) – कर्मचारियों की आवश्यक आवश्यकताओं को जान लेने पर अभिप्रेरणाओं का निर्धारण किया जा सकता है। भिन्न-भिन्न स्तर, रुचि एवं प ष्टभूमि के व्यक्तियों की आवश्यकतायें भिन्न-भिन्न होने से उनके लिए अभिप्रेरक भी भिन्न-भिन्न होते हैं, अतः इस तथ्य को द ष्टिगत रखते हुए अभिप्रेरकों का चयन किया जाना चाहिए।

4. **अभिप्रेरणाओं का उपक्रम के उद्देश्यों के साथ संयोजन** (Integration of Motivations with Objectives of the Enterprise) – उपक्रम के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए कर्मचारियों की उपलब्धि के विशिष्ट स्तरों के लिए उचित अभिप्रेरणाओं को जोड़ा जाना चाहिए। अर्थात् किसी लक्ष्य की प्राप्ति अथवा किसी विशेष निष्पादन स्तर के लिए क्या प्रतिफल या अभिप्रेरणा प्रदान किया जायेगा, यह बात निर्धारित कर ली जानी चाहिए। प्रत्येक निष्पादन स्तर के लिए समुचित प्रेरणा होनी चाहिए जो न सामान्य से अधिक हो और न कम हो। जिससे कर्मचारी वाँछित लक्ष्य या निष्पादन स्तर प्राप्त करने के लिए यथेष्ट प्रयास करें।

5. **अभिप्रेरकों का सम्प्रेषण** (Communication of Motivators) – कर्मचारियों को यह विदित होना चाहिए कि उनके किस निष्पादन स्तर के लिए क्या प्रतिफल या प्रेरणा प्रदान की जयेगी। प्रत्येक कार्य के लिए प्रदान की जाने वाली प्रेरणा ही कर्मचारियों के प्रयासों को निर्धारित करता है। यदि प्रेरणाओं का कर्मचारियों को ज्ञान न होगा वे किसी भी लक्ष्य के लिए अपनी पूर्ण क्षमता के अनुसार प्रयास नहीं करेंगे।

6. **योजना का क्रियान्वयन** (Execution of Plans) – उपक्रम की अभिप्रेरण योजना का उचित ढंग एवं निष्ठा से क्रियान्वयन किया जना चाहिए। इस सम्बन्ध में निम्नांकित बातों पर ध्यान दिया जाना चाहिए।

   (i) अभिप्रेरणा योजना के लिए उचित वातावरण तैयार किया जाना चाहिए। प्रतिकूल वातावरण में कोई भी योजना वांछित परिणाम नहीं दे सकती है। अनौपचारिक समूहों की उस पर सहमति होनी चाहिए जिससे वे उसका विरोध न करें व उसके प्रतिकूल आचरण न करें।

   (ii) किसी भी नवीन अभिप्ररेण योजना को लागू करने से पूर्व उसका प्रायोगिक परीक्षण कर लिया जाना चाहिए। क्योंकि एक बार लागू करने के बाद प्रतिकूल परिणाम मिलने पर उसे वापस लेना अपेक्षाकृत कठिन होता है।

   (iii) अभिप्रेरण योजना को क्रियान्वित करने वाले प्रबन्धकों एवं पर्यवेक्षकों को योजना के प्रभावी व सही परिप्रेक्ष्य में क्रियान्वयन हेतु आवश्यक प्रशिक्षण भी दिया जाना चाहिए।

   उपरोक्त तीनों ही प्रक्रियाओं को पूरा करने के बाद ही किसी योजना को क्रियान्वित किया जाना चाहिए।

7. **अनुवर्तन एवं संशोधन** (Follow up and Correction) – योजना को लागू करने के उपरान्त उसके प्रभावों का निरन्तर अवलोकन, अध्ययन एवं विश्लेषण करते रहना चाहिए एवं आवश्यकतानुसार उसमें संशोधन व परिवर्तन करते रहना चाहिए जिनसे उसे बदलती परिस्थितियों में अधिक से अधिक प्रभावशाली बनाया जा सके।

विक्रेताओं को दी जाने वाली प्रेरणायें

अथवा

विक्रय शक्ति अभिप्रेरण की विधियाँ

(Incentives to Salesmen or Methods of Motiveating the Sales Force)

अभिप्रेरणा मनुष्य की एक आन्तरिक अनुभूति है। इसलिए मनुष्य को भीतर से अभिप्रेरित करना आवश्यक होता है। उसके लिए उसकी प्रमुख आवश्यकताओं को पूरा करना होता है। लेकिन वैयक्तिक विविधताओं व परिस्थितिवश हर व्यक्ति की आवश्यकतायें भिन्न-भिन्न होती है। इसलिए भिन्न-भिन्न व्यक्तियों के लिए भिन्न-भिन्न अभिप्रेरणा विधियों का प्रयोग किया जाता है।

सामान्यतः व्यवहार में विक्रयकर्ताओं को अभिप्रेरित करने हेतु दी जाने वाली प्रेरणायें अथवा अपनायी जाने वाली प्रमुख विधियाँ निम्नलिखित हैं :

1. **प्रेरणात्मक पारिश्रमिक (Incentive Remuneration) –** मनोवैज्ञनिकों ने प्रेरणात्मक परिश्रमिक भुगतान की महत्ता एवं प्रभाव को निर्विवाद रूप से स्वीकारा है। केवल वेतन से विक्रयकर्ताओं को अधिकाधिक बिक्री करने की प्रेरणा नहीं दी जा सकती है। वेतन के साथ-साथ उन्हें अन्य आर्थिक प्रेरणाएँ भी उपलब्ध की जानी चाहिए। अतएव प्रेरणात्मक पारश्रिमिक योजनाएँ विक्रयकर्ताओं के अभिप्रेरणा का महत्त्वपूर्ण उपाय है। इन योजनाओं में वेतन एवं कमीशन योजना, कमीशन एवं आहरण लेखा योजना, कमीशन योजना, लाभ-भागिता, बोनस योजना, विशिष्ट कार्य योजना, अनुषंगी लाभ व्यवस्था, अभ्यंश योजना आदि को मुख्यतः सम्मिलित किया जा सकता है।

2. **पदोन्नति (Promotion) –** पदोन्नति का अर्थ संगठन में कर्मचारी अथवा अधिकारी के पद में ऐसी व द्धि से है जिससे उसके स्तर, वेतन, अधिकारों, एवं कर्तव्यों में व द्धि होती है। हर व्यक्ति में उन्नति की प्रबल चाह होती है और उसकी पूर्ति के लिए वह जीवन भर प्रयास भी करता है अपनी योग्यता व कार्यक्षमता में व द्धि करता है, अपने व्यवहार को संयत एवं प्रभावी बनाये रखता है और अपने अधिकारियों तक को भी यथासम्भव सन्तुष्ट व प्रसन्न रखने की कोशिश करता है। वस्तुतः समयानुकूल पदोन्नतियाँ व्यक्ति में आशावादी द ष्टिकोण का स जन करती है, कार्य में रूचि व उत्साह व द्धि करती है। मनोबल एवं निष्ठा को बढ़ाती है, कार्यक्षमता मे व द्धि करती है समूह भावना को विकसित करती है, और अनुशासनात्मक वातावरण की स्थापना करती है। अतएव विक्रयकर्ताओं को अभिप्रेरित करने के लिए पदोन्नति भी एक महत्त्वपूर्ण प्रेरणा हैं।

3. **प्रभावी संचार व्यवस्था (Effective Communication System) –** पूर्णतः सूचित कर्मचारी (Fully informed employee) संस्था की स्थायी और मूल्यवान सम्पदा है। ऐसा कर्मचारी संस्था की नीतियों, कार्यक्रमों, योजनाओं और गतिविधियों के बारे में अन्य लोगों को विश्वास के साथ जानकारी भी दे सकता है एवं उनकी व्याख्या भी कर सकता है। विक्रयकर्ताओं को समुचित जानकारियाँ न होने पर वह क्रेताओं की कई जिज्ञासाओं का उत्तर नहीं दे पाता है। इससे उसमें निराशा व्याप्त होती है। इसके अतिरिक्त सही एवं पर्याप्त जानकारी दुविधाओं व पारस्परिक भ्रम को भी दूर करती है, मनोबल को बढ़ाती है और मधुर मानवीय सम्बन्धों व सहयोगी वातावरण का स जन करती है। अतएव उपक्रम में प्रभावी संचार व्यवस्था परमावश्यक है।

   इस लिए विक्रयकर्ताओं को अभिप्रेरित करने हेतु द्विमार्गी संचार आवश्यक है। प्रत्येक विक्रयकर्ता को अपने उच्चाधिकारियों से "वैयक्तिक भेंट" करने की छूट होनी चाहिए। उच्चाधिकारियों को भी समय-समय पर अपने विक्रयकर्ताओं से "व्यक्तिगत सम्पर्क" (लिखित अथवा मौखिक साधनों के जरिये) करना चाहिए। "अभिप्ररेणात्मक साक्षात्कारों" (Motivational

Interviews) की व्यवस्था भी की जानी चाहिए। अर्न्तवैयक्तिक सम्पकों को प्रगाढ़ बनाने के लिए उच्चाधिकारियों द्वारा विक्रयकर्ता को पत्र भी लिखना चाहिए, टेलीफोन वे टेलेक्स पर भी सम्पर्क करना चाहिए। परिपत्रों, बुलिटिनों, ग ह पत्रिकाओं एवं विक्रय साहित्य का भी विक्रयकर्ताओं को उपक्रम के समस्त पहलुओं से सूचित रखने हेतु उपयोग किया, जाना चाहिए।

4. **सहभागिता (Particlpation) –** निर्णयन या प्रबन्ध में सहभागिता भी विक्रयकर्ताआं को अभिप्रेरित करने का एक महत्वपूर्ण उपाय है। विक्रयकर्ताओं के साथ संयुक्त परामर्श करके उपक्रम की विक्रय नीतियों व कार्यक्रमों के निर्माण में उन्हें सम्मिलित करके तथा अन्य महत्वपूर्ण निर्णयों में भी प्रतिनिधिन्व देकर उन्हें अभिप्रेरित किया जा सकता है। सहभागिता विक्रयकर्ता को आत्म सम्मान प्रदान करती है और उसे स्व-अभिव्यक्ति का भी अवसर देती है। विक्रयकर्ता अपने महत्व को पहचानने लगते हैं। सूचनाओं का आदान-प्रदान परामर्श, विचार-विमर्श और अनुभवों का हस्तान्तरण विक्रयकर्ताओं की मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। अतएव विक्रयकर्ताओं को अधिकाधिक अभिप्रेरित करने के लिए उपक्रम में सहभागी व्यवस्थाओं की स्थापना की जानी चाहिए।

5. **चलचित्र वीडियो केसेट्स आदि (Motion Picture Video Casscttes etc.) –** विक्रयकर्ताओं को अधिकाधिक सूचनायें सम्प्रेषित करने व मनोरंजन हेतु चलचित्रों व वीडियों कैसेटों की सहायता भी ली जाती है। इनकी सहायता से विक्रयकर्ताओं को विक्रयकला एवं विक्रय प्रक्रिया में दक्ष किया जा सकता है उनकी सुप्त आन्तरिक योग्यताओं को मुखरित व विकसित किया जा सकता है, ग्राहक मनोविज्ञान का ज्ञान कराया जा सकता है, उत्पादों के निर्माण तथा उत्पाद बाजारों की जानकारी दी जा सकती है, और उनका मनोरंजन भी किया जा सकता है। इनसे विक्रयकर्ताओं के ज्ञान व कार्य के प्रति रूचि में व द्धि होती है।

6. **सम्मानसूचक पुरस्कार एवं मान्यता (Honour Awards and Recognition) –** ऐसे पुरस्कार नकद धनराशि, निःशुल्क सपरिवार भ्रमण, विशिष्ट वेतन व द्धियाँ, प्रशंसा पत्र, प्रमाण-पत्र, वस्तु, मोटर साइकिल, कार या स्कूटर जैसे वाहन, टेलीविजन व अन्य घूरेलू वस्तुएँ या उनके लिए सुगम ऋण आदि के रूप में दिये जा सकते हैं। ये पुरस्कार न केवल उन्हें प्राप्त करने वाले को अपितु अन्य विक्रयकर्ताओं को भी प्रेरणा देते हैं कि वे भी इसके लिए प्रयास करें। यहाँ तक कि मौखिक प्रशंसा तक भी अभिप्रेरित करने की क्षमता रखती है।

7. **विक्रय सम्मेलन एवं सभाएं (Sales Conferences, Sales Conventions and Sales Meetings) –** उपक्रम द्वारा समय-समय पर अपने विक्रेकर्ताओं के लिए राष्ट्रीय, प्रादेशिक एवं स्थानीय स्तरों पर नियमित रूप से आयोजित किये जाने वाले विक्रय सम्मेलन एवं विक्रय सभाएँ भी विक्रयकर्ताओं के लिए प्रभावी प्रेरणाएँ सिद्ध होती है। ये विक्रयकर्ताओं को सामूहिक रूप से अभिप्ररित करती है और इन्हें नये तथा अनुभवी विक्रयतकर्ताओं के अभिप्रेरण, प्रशिक्षण और कार्यकुशलता से व द्धि की द ष्टि से अत्यन्त उपयोगी माना गया है।

   इनसे उनके पारस्पिरिक सामाजिक सम्बन्ध प्रगाढ़ होते है। जिससे उनका मनोबल उच्च होता है। विक्रय सम्मेलन एवं सभाएँ प्रायः विणपन प्रबन्धकों या विक्रय प्रबन्धकों द्वारा नियमित अन्तराल पर बुलायी जाती है इनमे विक्रय सम्बन्धी समस्याओं पर खुले रूप से विचार-विमर्श किया जाता है इनसे विक्रयकर्ताओं के सामाजिक सम्पर्क में भी व द्धि होती है।

विक्रय सम्मेलन व सभाओं से निम्न प्रमुख लाभ है -

(1) विक्रयकर्ताओं को परस्पर मिलने का अवसर मिलता है।

(2) विक्रयकर्ताओं की जानकारी में व द्धि होती है।

(3) पारस्परिक सहयोग की भावना का विकास होता है।

(4) स्व-अभिव्यक्ति का अवसर प्राप्त होता है।

(5) विक्रय समस्याओं के हल ढूँढ़े जाते हैं।

(6) प्रबन्धकों को कुशल विक्रयकर्ताओं की पहचान व जानकारी हो जाती है।

(7) विक्रय संवर्द्धन, विक्रय कला, विक्रय प्रक्रिया व समस्याओं, ग्राहक मनोविज्ञान, नवीन उत्पाद, नवीन वितरण श्रंखलाएँ नई नीतियाँ, संस्था की प्रगति, बाजार क्षेत्रीय प्रतिस्पर्द्धा आदि के बारे में सभी समुचित जानकारी प्राप्त होती है। उपर्युक्त वर्णित लाभों के उपारान्त भी इन्हें खर्चीली तथा समय-साध्य प्रेरणाएँ कहा गया है। इनसे दैनिक कार्य-संचालन में भी रुकावटें आती है। कभी-कभी ये सम्मेलन, सभाएँ और प्रस्ताव परस्पर संघर्षों व तनावपूर्ण सम्बन्धों को भी जन्म दे देते है।

(8) **विक्रय पत्रिकाओं का प्रकाशन** (Publication of Sales Magazines) – विक्रयकर्ताओं को प्रोत्साहित करने एवं उनकी कुशलता में व द्धि करने हेतु प्रतिष्ठित संस्थाएँ अपनी विक्रय पत्रिकाओं का प्रकाशन करती है। इनमें संस्था की उन्नति सम्बन्धी सूचनाएँ, नये उत्पादों की जानकारी, विक्रय संवर्द्धन लेख, अच्छे विक्रयकर्ताओं की उपलब्धियाँ एवं उनके परिणामस्वरूप दिये गये पुरस्कार, पदोन्नतियाँ संस्था द्वारा अपने विक्रयकर्त्ताओं व अन्य कर्मचारियों को प्रदान की गई तुलनात्मक सुविधाएँ, संस्था की विक्रय नीति सम्बन्धी विवेचन, ग्राहकों की प्रमुख शंकाओं, एवं आपत्तियों के समाधान पर प्रश्नोत्तर आदि से सम्बन्धित विषय-सामग्री रहती है।

(9) **विक्रयकर्ताओं के पत्राचार** (Correspondence with Salesman) – विक्रय प्रबन्धक अथवा विक्रय निरीक्षक द्वारा विक्रेताओं के साथ व्यक्तिगत पत्र व्यवहार करने से भी उन्हें प्रेरणा मिलती है। उनकी समस्याओं का तुरन्त समाधान हो जाने पर उनकी निष्ठा व मनोबल में व द्धि होती है और उनका आत्म-विश्वास भी बढ़ता है।

(10) **अधिकारों का प्रत्यायोजन** (Delegation of Authority) – विक्रयकर्ताओं की योग्यता एवं क्षमता के अनुसार उन्हें सतत अधिकाधिक अधिकार सौंपकर भी प्रोत्साहित किया जा सकता है। ऐसा करने से उनके मन में यह भावना जाग त होती है कि उनका अधिकारी उन्हें यथेष्ठ महत्व दे रहा है। वे उनके उत्कृष्ट गुणों, कार्यों एवं क्षमता से परिचित हैं एवं उन्हें अपेक्षाकृत अधिक उत्तरदायी व्यक्ति मानता है। इससे उनके व्यक्तित्व के विकास में सहायता मिलती है और उनकी निष्ठा व प्रतिबद्धता में व द्धि होती है।

(11) **विक्रय प्रतियोगताएँ** (Sales Contests) – व्यक्ति स्वभावतः चुनौती पूर्ण कार्य से प्रेरित होता है। इसलिए विक्रय प्रतियोगिताएँ आयोजित की जाती है। उत्साही विक्रयकर्ता इस चुनौती को स्वीकार करते हैं और अपने विक्रय स्तर को उच्चतम करने हेतु जी जान से लग जाते है। यही कारण है कि प्रबन्धक योग्य एवं कुशल व्यक्तियों को अभिप्रेरित करने हेतु कार्यों या लक्ष्यों का अक्सर चुनौती के रूप में प्रस्तुत करते हैं। विक्रय प्रतियोगिताएँ भी एक प्रकार से विक्रयकर्ताओं के लिए चुनौती स्वरूप प्रस्तुत की गई प्ररेणाएँ है।

प्रतियोगिता के प्रकार – सामान्यता, विक्रय प्रतियोगिता निम्न स्वरूपों में से किसी भी रूप में आयोजित की जा सकती है।

(1) **न्यूनतम विक्रय अभ्यंश** – इस स्वरूप में सभी विक्रयकर्ताओं के लिए एक न्यूनतम अथवा समान विक्री अभ्यंश निश्चित कर दिया जाता है और जो भी विक्रयकर्ता एक निश्चित अवधि में उस निश्चित बिक्री अभ्यंश को प्राप्त

कर लेता है उसे पुरस्कार दिया जाता है। इस विधि में जितने भी विक्रयकर्ता निश्चित अवधि में उस निश्चित मात्रा की बिक्री कर लेते हैं, वे सब पुरस्कार प्राप्ति के अधिकारी बन जाते हैं।

(2) **व्यक्तिगत विक्रय अभ्यंश** – व्यवहार में भिन्न, क्षेत्रों में विक्रय सम्भावनाएँ प्रायः अलग-अलग होती है, ऐसी दशा में बिक्री प्रतियोगिता के लिए प्रत्येक विक्रयकर्ता के लिए अलग लक्ष्य या उसके पिछले बिक्री के अभिलेख को देखकर उसमें एक निश्चित प्रतिशत से विक्रय कोटा निर्धारित कर दिया जाता है और जो निर्धारित समय में अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है, उसे घोषित पुरस्कार दिया जाता है।

(3) **समूह अभ्यंश** – विक्रयकर्ताओं में अवांछित स्पर्द्धा व ईर्ष्याभाव रोकने व समूह भावना विकसित करने के लिए कभी-कभी विक्रय प्रतियोगिता मे विक्रयकर्ताओं को समूहों में विभक्त करके उनके लिए विक्रय के क्षेत्रीय बिक्री अभ्यंश निश्चित कर लिये जाते हैं। जो समूह निश्चित अवधि में अपना लक्ष्य पूरा कर लेता है उसे घोषित पुरस्कार दिया जाता है जिसे विजेता समूह के सदस्य परस्पर बाँट लेते हैं। यह विधि समूह सहकारिता की भावना को भी विकसित करती है।

(4) **आदेश की संख्या** – इस विधि में सर्वाधिक मात्रा अथवा सर्वाधिक बिक्री के आदेश लाने वाले विक्रयकर्ताओं को या उनके समूहों को घोषित पुरस्कार दिये जाते है। इसमें नये पुराने क्रेताओं के आदेशों को भिन्न-भिन्न प्रकार से भारित भी किया जा सकता है।

(5) **अंक पद्धति** – इस विधि का प्रयोग तब किया जाता है जबकि विक्रयकर्ताओं को बिक्री के साथ-साथ अन्य कार्य भी करने होते हैं। ऐसी स्थिति में हर कार्य के लिए कुछ अंक निर्धारित कर दिये जाते है और विक्रयकर्ता द्वारा प्राप्त किये गये अंकों को जोड़कर विजेताओं को पुरस्कार वितरित किये जाते हैं। विक्रयेतर कार्यों में ग्राहक समस्याओं का समाधान करना, अनुरक्षण व मरम्मत, पुराने खातों को चालू करना, नये ग्राहकों से भेंट करना, प्रचार-प्रसार करना आदि को सम्मिलित किया जा सकता है।

लाभ (Advantages) – प्रतियोगिताओं के निम्न लाभ है -

(1) विक्रयकर्ताओं को क्षमता का पूर्ण लाभ मिलता है। उसकी कार्य-क्षमता निरन्तर बढ़ती भी रहती है।

(2) बिक्री एवं लाभों में सतत व द्धि होती है।

(3) विक्रयकर्ताओं को न्यूनतम प्रशिक्षण व पर्यवेक्षण प्रदान करने से ही काम चल जाता है।

(4) कुशल विक्रयकर्ता संस्था की ओर आकृष्ट होते है और बने रहते हैं।

(5) नये बाजार व नये ग्राहक प्राप्त होते हैं।

(6) सामूहिक प्रतियोगिताओं से समूह भावना विकसित होती है।

(7) विक्रयकर्ताओं के मनोबल एवं पारस्परिक सहयोग की भावना में व द्धि होती है।

अभिप्रेरण की कुछ आधुनिक अथवा बहुलवादी विचारधाराएँ (Some Modern Theories of Motivation) – आधुनिक विचारधारायें इस बात पर बल देती हैं कि व्यक्ति का लक्ष्य केवल अधिकतम आय उपार्जित करना ही नहीं वरन् उसकी कुछ सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक आवश्यकतायें भी होती है। अतएव कर्मचारियों को आर्थिक प्रेरणाओं के अतिरिक्त उचित सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक अभिप्रेरणाओं से भी अभिप्ररित किया जा सकता है व किया जाना चाहिए। एक से अधिक

प्रकार की अभिप्रेरणाओं पर आधारित ये विचारधारायें बहुलवादी विचारधारायें भी कहलाती हैं क्योंकि ये मानवीय आवश्यकताओं में विविधता या अनेकता को स्वीकार करती है।

अभिप्रेरण की अनेक विचारधारायें हैं जिनमें निम्नलिखित प्रमुख हैं -

1. मास्लो की "आवश्यकता क्रम सम्बन्धी" विचारधारा,
2. हर्जबर्ग की "द्विकारक" विचारधारा,

1. **मास्लो की "आवश्यकता-क्रमबद्धता" विचारधारा (Maslow's Need Hierarchy Theory)** – अमरीकन मनोवैज्ञानिक अब्राहम एच. मास्लो (Abraham H, maslow) द्वारा सन् 1943 में प्रतिपादित इस विचारधारा के अनुसार व्यक्ति की आवश्कतायें एक निश्चित क्रम में उत्पन्न होती है। जैसे-जैसे वे उत्पन्न होती है उसी क्रम मे उन्हें सन्तुष्ट करके या सन्तुष्टि का प्रावधान करके व्यक्ति को अभिप्रेरित किया जा सकता है। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन की अवस्था विशेष में जो आवश्यकता प्रबल हो उसे सन्तुष्ट करके या सन्तष्टि का आश्वासन देकर ही उसे संगठन के कार्यों की ओर अभिप्ररित किया जा सकता है। जो आवश्यकता सन्तुष्ट हो चुकी है या जो उत्पन्न ही नहीं हुई है उससे नहीं। इस विचारधारा का विवेचन अग्र बिन्दुओं के अन्तर्गत किया जा सकता है।

   (अ) **मानवीय आवश्यकताएँ असीमित (Human Needs are Infinite)** – व्यक्ति की अनेक इच्छाएँ होती हैं जिनमें से एक पूर्ति हो जाने पर दूसरी उत्पन्न हो जाती है और यह प्रक्रिया जवीनपर्यन्त चलती रहती है अर्थात् व्यक्ति की आवश्यकतायें बढ़ती रहती हैं।

   (ब) **आवश्यकताओं का एक निश्चित क्रम (Arranged Hierarchy of Needs)** – मास्लो के अनुसार ये आवश्यकतायें एक निश्चित क्रम से उत्पन्न होती हैं। सर्वप्रथम व्यक्ति की जीवन रक्षा हेतु भोजन, वस्त्र, आवास आदि से सम्बन्धित आवश्यकतायें होती हैं जिसके लिए वह कार्य करता है। जब ये सन्तुष्ट हो जाती हैं तब सुरक्षा सम्बन्धी व अन्य आवश्यकतायें एक निश्चित क्रम में उत्पन्न होती हैं जिनका विवेचन आगे किया जा रहा है। जैसे-जैसे निम्न स्तरीय आवश्यकतायें पूरी हो जाती हैं उच्च आवश्यकतायें उत्पन्न होती रहती हैं।

   (स) **सन्तुष्ट आवश्यकता अभिप्रेरक नहीं :** अतः लोगों की असन्तुष्ट आवश्यकताओं को ज्ञात करके (उनकी पूर्ति द्वारा) ही उनकी अभिप्रेरित किया जा सकता है। सामान्यतया जब तक निम्नस्तरीय आवश्यकतायें पूरी नहीं होती तब तक उच्च स्तरीय आवश्यकतायें उत्पन्न नहीं होती हैं।

   (द) **आवश्यकताओं का क्रम (Hierarchy of Needs)** – मास्लों ने मानवीय आवश्यकताओं को पाँच श्रेणियों में बाँट कर उनका एक निश्चित क्रम निर्धारित किया है जो निम्नानुसार हैं।

1. **शारीरिक आवश्यकताएँ (Physiclogical Needs)** – सर्वप्रथम जीवन को बनाए रखने हेतु शारीरिक आवश्यकताएँ जैसे भोजन, पानी कपड़ा, मकान आदि उत्पन्न होती है। ये आवश्यकताएँ जीवनपर्यन्त बनी रहती है, लेकिन इन आवश्यकताओं को पूरा करने हेतु पर्याप्त साधन या आय प्राप्त हो जाने पर ये आवश्यकताएँ अभिप्रेरक का कार्य नहीं करती है। इनकी पूर्ति का मुख्य साधन मुद्रा है अतः मौद्रिक पारिश्रमिक ही व्यक्ति के लिए प्रारम्भिक अभिप्रेरणा हैं।

2. **सुरक्षात्मक आवश्यकताएँ (Safety Needs)** – व्यक्ति चाहता हैं कि रोजगार व आय में स्थायित्व हो व बीमारी दुर्घटना व द्धावस्था आदि के विरुद्ध भी विकित्सा भत्ता दुर्घटना बीमा, ग्रेच्युटी व पेन्शन योजनाओं से इन जोखिमों के विरुद्ध सुरक्षा का लाभ मिलें।

3. **सामाजिक आवश्यकताएँ (Social Needs)** – शारीरिक एवं सुरक्षात्मक आवश्यकताएँ सन्तुष्ट होने पर सामाजिक आवश्यकताएँ उत्पन्न होती हैं और वे ही मानवीय व्यवहार को प्रभावित करती हैं। प्रत्येक मानव सामाजिक प्राणी हैं। अतः वह लोगों से जुड़ाव चाहता है व समूह में रहना चाहता हैं। वह मित्रों से स्नेह आत्मीयता एवं अपनत्व की आशा रखता है। उपक्रम में अनौपचारिक समूहों का निर्माण इन्हीं सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए होता है। प्रबन्धकों को इन अनौपाचारिक संगठनों को प्रोत्साहित करना चाहिए। यदि लोगों का सामाजिक आवश्यकताएँ पूरी नहीं हागी तो उनमें असहयोग एवं विरोध की भावनाएँ उत्पन्न होगी तथा उनमें संगठन के प्रति लगाव व आकर्षण समाप्त हो जायेगा।

4. **अहम एवं सम्मान सम्बन्धी आवश्यकताएँ (Ego and Esteem Need)** – सामाजिक अवश्यकताओं की सन्तुष्टि के बाद व्यक्ति में अहम आत्मसम्मान या स्वाभिमान सम्बन्धी आवश्यकतायें उत्पन्न होती है। वह संगठन में सम्मान प्रशंसा, मान्यता, स्वतन्त्रता, उच्च पद प्रतिष्ठा व ख्याति और अन्य व्यक्तियों से श्रेष्ठा आदि चाहता है। इसलिए एक सीमा के बाद मात्र आय व द्धि से ही अभिप्रेरित नहीं किया जा सकेगा। इस अवस्था में व्यक्ति के प्रयासों को मान्यता प्रदान कर पदोन्नति देने से उसकी अहम सम्बन्धी आवश्यकताओं की सन्तुष्टि हो सकती है। मौद्रिक लाभ सभी को दिया जा सकता है किन्तु पदोन्नति प्रशंसा, पारितोषिक आदि कुछ को ही दिये जाते हैं। अतएव अधिकांश व्यक्तियों की ये आवश्यकतायें आंशिक रूप से ही सन्तुष्टि होती है।

5. **आत्म विकास की आवश्यकता (Self Actualisation Needs)** – मास्लों की आवश्कता की क्रमबद्धता में अन्तिम स्थान "आत्म विकास की आवश्यकताओं का है। अन्य सारी आवश्यकतायें पूर्ण हो जाने के बाद व्यक्ति सर्वाधिकार सम्पन्न व आत्मनिर्णन के अधिकार से सम्पन्न बनना चाहता है। वह चाहता है कि वह जीवन के सर्वोच शिखर पर पहुँचे या उसकी कल्पना सर्वोच्च पद को प्राप्त कर लेने की होती है। लेकिन आवश्यकताओं के इस स्तर पर कुछ ही लोग पहुँच पाते हैं। अधिकांश व्यक्ति सामाजिक आश्यकताओं की सन्तुष्टि प्राप्त करके आत्म सम्मान की आवश्यकताओं के स्तर तक ही पहुँच पाते हैं। भारत में तो गैर संगठित क्षेत्रों में व्यक्ति प्रारम्भिक भौतिक आवश्कताओं की पूर्ति के संघर्ष में ही अपना जीवन बिता देते हैं।

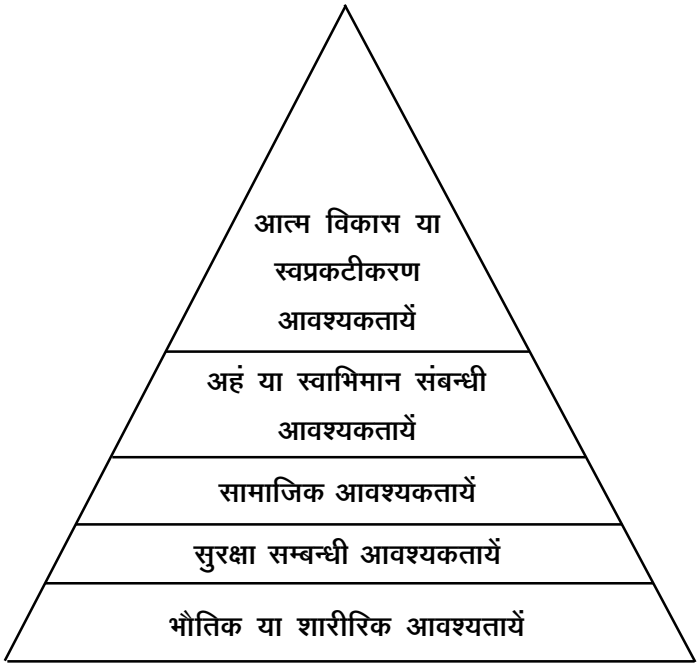

चित्र : मास्लो का आवश्यकता क्रम

उपरोक्त आवश्यताओं के सम्बन्ध में मास्लो का विचार था कि उपक्रम में व्यक्तियों की इस क्रम में जिस स्तर तक की आवश्यकतायें संतुष्ट हो चुकी हैं, उनसे निकटतम अगले स्तर की आवश्कतायें ही उन्हें अभिप्रेरित कर सकती हैं उन आवश्यकताओं से निम्न या अति उच्च स्तर की आवश्यकतायें नहीं। जैसे- एक बेरोजगार व्यक्ति को सर्वप्रथम उचित पारिश्रमिक पर रोजगार ही प्रेरित करेगा, फिर स्थायी होने का आकर्षण होगा, फिर वह लोगों से मेलजोल बढ़ाने की आवश्यकता महसूस करेगा, तदुपरान्त वह प्रतिष्ठा व द्धि हेतु पदोन्नति चाहेगा।

अन्ततः वह सर्वोच्च पद प्राप्त करके सर्वाधिकार सम्पन्न व अन्य लोगों (उपक्रम में कार्यरत लोगों सहित) का भाग्य निर्धारक बनने की लालसा रखेगा। आवश्यकताओं के इस क्रम को निम्न चित्र से सपष्ट किया जा सकता है -

1. **मास्लों की विचारधारा की कमियाँ या आलोचनाएँ** (Limitations of Criticism of Maslow's Theory) :

इस विचारधारा की निम्न कमियाँ हैं -

1. यह विचाराधारा यह मानती हैं कि व्यक्ति में एक समय में एक प्रकार की आवश्यकतायें ही विद्यमान होती हैं जबकि व्यक्ति में एक समय में एक से अधिक आवश्यकतायें भी विद्यमान हो सकती है।
2. व्यवहार में यह ज्ञात करना कठिन हैं कि व्यक्ति आवश्यकता क्रम की किस अवस्था में है व कौन-सी आवश्यकता की पूर्ति उसे अभिप्रेरित कर सकती हैं।
3. आवश्यकता क्रम व्यक्ति की पारिवारिक प ष्ठभूमि से भी प्रभावित होता है, जिससे यह क्रमिकता सदैव ही नहीं पायी जाती हैं।
4. आवश्यकता क्रम परिस्थितिजन्य होता है जो बदल भी सकता है।
5. मुद्रा की अभिप्रेरण क्षमता कभी समाप्त नहीं होती, जबकि मास्लों के अनुसार एक सीमा के बाद मुद्रा या आय की व द्धि व्यक्ति को अभिप्रेरित नहीं करती हैं।

2. **हर्जबर्ग की द्विकारक विचारधारा** (Herzberg's Two factor Theory) :

प्रो. फ्रेडरिक हर्जबर्ग (Prof, Fredrick Herzberg) ने इस सिद्धान्त का प्रतिपादन अमेरिका के पिट्सबर्ग (Pittsburgh) की विभिन्न कम्पनियों में कार्यरत दो सौ इन्जीनियरों एवं लेखापालकों के साक्षात्कार के आधार पर किया। हर्जवर्ग का कहना है कि मनुष्य की आवयकताओं के दो समूह हैं जो एक दूसरों से स्वतन्त्र व भिन्न हैं। प्रथम समूह में वे उन कार्य परिस्थितियों को सम्मिलित करते हैं, जिनका अभाव होने से कर्मचारियों को अपने कार्यों से असंतुष्टि होती है, किन्तु उनके विद्यमान होने से इन्हें कोई सशक्त प्रेरणा नहीं मिलती है। कार्य परिस्थितियों के इन तत्वों को उन्होंने अनुरक्षण या स्वास्थ्यप्रद कारण या घटक के नाम से सम्बोधित किया है। दूसरी और कार्य परिस्थितियों के कुछ ऐसे तत्व होते हैं, जिनक विद्यमानता से कर्मचारियों को प्रबल प्रेरणा मिलती है किन्तु उनके न होने पर कोई विशेष असंतोष नहीं होता है। इन्हें अभिप्ररेण कारकों के नाम से सम्बोधित किया।

(अ) **अनुरक्षण आरोग्य स्वास्थ्य घटक या कारक (Hygiene Factors) –** हर्जबर्ग ने अनुरक्षण या स्वास्थ्य तथ्वों में निम्नलिखित को सम्मिलित किया है -

1. कम्पनी नीति एवं प्रशासन (Company Policy and Administration)
2. पर्यवेक्षण (Supervision)
3. कार्य दशाएँ (Working condtions)
4. वेतन (Salary)
5. अर्न्तव्यक्ति सम्बन्ध (Interpersonal Relation) पर्यवेक्षकों, सहकर्मियों व अधीनस्थों के साथ
6. पद-स्थिति (Status)

7. **कार्य सुरक्षा** (Job Security)
8. **व्यक्तिगत जीवन** (Personal Life)

कार्य वातावरण से सम्बन्धित ये घटक संगठन में अनुकूल वातावरण बनाकर उसकी (उसके कर्मचारियों की) उत्पादकता को बनाये रखने में सहयोग देते हैं।

अतः इन्हें अनुरक्षण तत्व (Maintenance Factors) भी कहते हैं। हर्जबर्ग के अनुसार इनके अभाव में व्यक्ति को असंतोष उत्पन्न होता है या उसके कार्य निष्पादन में गिरावट आती है किन्तु इनकी विद्यमानता अभिप्रेरक का कार्य नहीं करती है अर्थात् इनके होने से या अनुकूल होने से व्यक्ति को सामान्य से अधिक कार्य करने की कोई प्रेरणा नहीं मिलेगी गेलरमेन के अनुसार, 'स्वास्थय तत्व अच्छे व प्रभावी अभिप्रेरक के लिए आवश्यक हैं, परन्तु ये स्वयं अभिप्रेरित नहीं करते हैं।'

(ब) **अभिप्रेरक तत्व (Motivators) –** हर्जबर्ग ने अभिप्रेरक तत्वों में निम्नलिखित को सम्मिलित किया है -

1. **उपलब्धि** (Achievement)
2. **मान्यता** (Recognition)
3. **कार्य** (Work)
4. **उत्तरदायित्व** (Responsibility)
5. **उन्नति एवं विकास** (Growth & Advancement)
6. **किवास की सम्भावनाएँ** (Possibility of growth)

ये तत्व या कारक कार्य से सम्बन्धित होते (Job Content Factors) हैं तथा व्यक्ति की कार्य संतुष्टि एंव प्रसन्नता प्रदान करके अधिक एवं अच्छा कार्य करने के लिए अभिप्रेरित करते है। इनको संतोष प्रदान करने वाले तत्व भी कहते हैं

हर्जबर्ग की अभिप्रेरणा विचारधारा के अनुसार व्यक्तियों को अभिप्रेरक तत्व प्रदान करके ही अभिप्रेरित किया जा सकता है, स्वास्थ्य तत्वों से नहीं। लेकिन अभिप्रेरण हेतु इनका होना भी अनिवार्य है। एक प्रकार से ये अभिप्रेरण की पूर्व आवश्यकतायें हैं। हर्जबर्ग के अनुसार स्वास्थ्य तत्व प्रेरणाएँ है, अभिप्रेरणा नहीं। प्रेरणाएँ कार्य के वातावरण से सम्बन्धित होती है तथा इनका नियन्त्रण प्रबन्धक करते हैं जबकि अभिप्रेरणा आन्तरिक अनुभूतियों से सम्बन्धित होती है तथा व्यक्ति की आन्तरिक क्षमताओं पर निर्भर करती हैं। इन दोनों ही तत्वों का प्रभाव भिन्न-भिन्न व्यक्तियों पर भिन्न-भिन्न होता है।

हर्जबर्ग की विचारधारा का आलोचनात्मक मूल्यांकन (Critical Evaluation of Herzbergs Theroy) – अभिप्रेरण की द्विकारक विचारधारा सरल, बोधगम्य व प्रभावशाली होने से बहुत लोकप्रिय रही है। हर्जबर्ग की विचारधारा से ही कार्य परिष्कृतिकरण विचारधारा (Job Enrichment Theory) विकसित हुई है। हर्जबर्ग के अनुसार अभिप्रेरक तत्व कार्य को परिष्कृत करके व्यक्ति को कार्य से संतोष प्रदान करते हैं। ये व्यक्ति को अपनी क्षमताओं का अधिकाधिक प्रयोग करने की प्रेरणा देते हैं वे इनके प्रयोग के अवसर भी प्रदान करते हैं।

आलोचनाएँ
(Criticisms)

1. हर्जबर्ग की मान्यता है कि अनुरक्षण या स्वास्थ्य तत्व या कारक व्यक्ति को अभिप्रेरित नहीं करते हैं, पूर्ण सही नहीं है। संगठन के निम्न स्तरों पर तथा विकासशील देशों में स्वास्थ्य तत्व भी अभिप्रेरक का कार्य करते हैं, क्योंकि अधिकांश संगठनो में इनका अभाव होता है जिससे जहाँ ये उपलब्ध होते हैं वहाँ ये कर्मचारियों को अभिप्रेरित भी करते हैं।
2. हर्जबर्ग का यह कथन सही नहीं है कि अभिप्रेरकों के प्रयोग से ही कार्य संतुष्टि व अभिप्रेरण मिलता है। वस्तुतः

कार्य संतुष्टि व अभिप्रेरण स्वास्थ्य तत्व एवं अभिप्रेरक तत्व, दोनों से ही प्रभावित होते हैं।

3. कुछ विद्वानों का आक्षेप है कि यह सिद्धान्त संकुचित व दोषपूर्ण अनुसंधान विधि पर आधारित है। व्यक्तियों से मात्र यह जानकरी लेकर कि, उन्हें कब एवं किस कार्य से अत्याधिक दुःख हुआ? तथा कब और किस घटना से अत्याधिक सुख मिला? अभिप्रेरण प्रक्रिया व अभिप्रेरणाओं की सही वह विश्वसनीय जानकारी नहीं ली जा सकती है।

4. विविध कारकों के सापेक्ष प्रभाव के सम्बन्ध में भी हर्जबर्ग से कोई स्पष्ट मत या विचार नहीं रखे हैं कि किस कारक की अभिप्रेरण क्षमता क्या है?

मास्लों एवं हर्जबर्ग की विचारधाराओं में तुलना (Comparision between Maslow's and Herzberg's Theories) :

(अ) भिन्नतायें (Distinctions) – मास्लों एवं हर्जबर्ग की अभिप्रेरणा विचारधाओं में प्रमुख भिन्नतायें निम्नलिखित हैं -

1. मास्लों की विचारधारा मूलतः अत प्त मानवीय आवश्यकताओं पर आधारित है, जबकि हर्जबर्ग की विचारधारा मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाली प्रेरणाओं पर आधारित हैं

2. मास्लों के अनुसार सभी असन्तुष्ट आवश्यकतायें मानवीय व्यवहार को अभिप्रेरित करती हैं, जबकि हर्जबर्ग के अनुसार केवल अभिप्रेरणा श्रेणी की आवश्यकताएँ ही अभिप्रेरित करती हैं, अनुरक्षण आवश्यकतायें नहीं।

3. मास्लों के अनुसार संतुष्ट आवश्यकता अभिप्रेरक का कार्य नहीं करती है। जबकि हर्जबर्ग की अनुसार अभिप्रेरक तत्व सदैव ही अभिप्रेरण करते हैं।

4. मास्लों की विचारधारा अपेक्षाकृत अधिक व्यावहारिक एवं सार्वभौमिक है, जबकि, हर्जबर्ग की विचारधारा स्वास्थ्य तत्वों को अभिप्रेरक नहीं मानती हैं। अतः परिकल्पानात्मक, अल्प व्यावहारिक एवं सीमित क्षेत्रीय महत्व की है। विकासशील राष्ट्रों में अनुरक्षण तत्व भी अभिप्रेरक सिद्ध होते है।

5. मास्लों के अनुसार सभी प्रकार के असन्तुष्ट आवश्यकताओं की पूर्ति ही कार्य सन्तुष्टि प्रदान करती है, जबकि हर्जबर्ग के विचारधारा के अनुसार केवल अनुरक्षण कारकों से ही कार्य संतुष्टि प्राप्त की जा सकती है।

(ब) समानतायें (Similarities) – मास्लों एवं हर्जबर्ग की अभिप्रेरण विचाराधारओं में निम्नलिखित समानतायें हैं :

1. मास्लों की निम्न-स्तरीय आवश्यकतायें (शारीरिक, सुरक्षात्मक एवं कुछ सामाजिक आवश्यकतायें) तथा हर्जबर्ग के स्वास्थ्य तत्वों में लगभग समानता है। मास्लों को उच्च स्तरीय आवश्यकतायें (कुछ सामाजिक आवश्यकतायें, अहम एवं आत्मविश्वास की आवश्यकतायें) तथा हर्जबर्ग के अभिप्रेरण तत्व लगभग समान है। इस प्रकार स्वास्थ्य तत्वों से निम्न स्तरीय तथा अभिप्रेरक तत्वों से उच्चस्तरीय आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। यह समानता निम्न चित्र द्वारा स्पष्ट की जा सकती है -

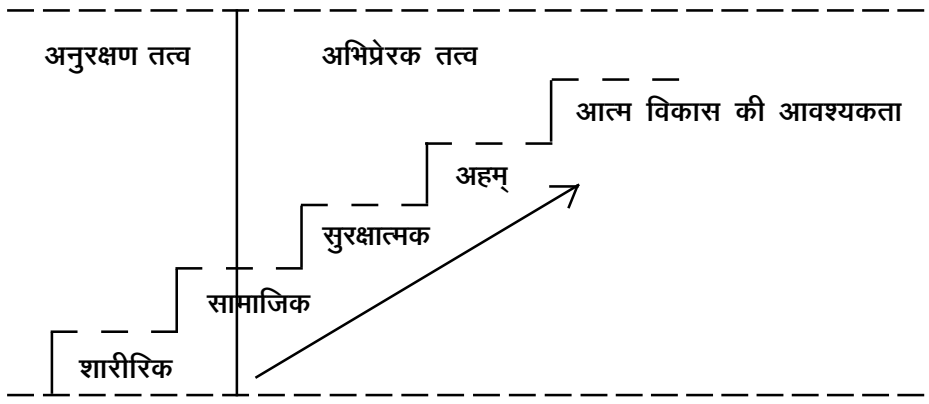

चित्र : मास्लों तथा हर्जबर्ग की विचारधारा की समानता

2. दोनों ही विचारधारायें व्यवहार में काफी लोकप्रिय रही हैं।
3. दोनों ही विचारधारायें मूलतः मानवीय इच्छाओं व उनकी सन्तुष्टि से सम्बन्धित हैं
4. दोनों ही विचारधारायें लगभग समान अभिप्रेरणाओं का प्रतिपादन करती हैं व अभिप्रेरण के लगभग समान तरीकों का वर्णन करती हैं।

अभिप्रेरण की समस्यायें अथवा सीमायें

(Problem or Limitation of Motivation)

अभिप्रेरण एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है और मानवीय मनोविज्ञान अत्यन्त जटिल, परिवर्तनशील एवं अकल्पनीय वैयक्तिक विविधताओं से युक्त होता है।

इसलिए कर्मचारियों के प्रभावी अभिप्रेरणा में अनेक समस्याएँ आती है, जिनमें प्रमुख निम्न हैं :

1. **छदम आवश्यकताएँ (Disguised Needs)** – व्यक्ति की कुछ इच्छाएँ एवं आवश्यकताएँ ऐसी हैं जिन्हें वह सार्वजनिक रूप से व्यक्त करना नहीं चाहता, किन्तु कई बार इन आवश्यकताओं की अनूभूति उसके अन्दर अत्यन्त प्रबल होती है जिसके फलस्वरूप उसकी व्यक्त इच्छाओं को पूरा कर देने पर भी वह अभिप्रेरित नहीं हो पाता है।
2. **वैयक्तिक विविधताएं (Individual Diversities)** – प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकताएँ, इच्छाएँ बौद्धिक स्तर, नैतिक मूल्य, रुचि आदि एक-दूसरे से भिन्न होते हैं, इसलिए विविध अभिप्रेरणाओं का प्रभाव प्रत्येक व्यक्ति पर भिन्न-भिन्न होता है, इसलिए उपक्रम के सभी कर्मचारियों को एक समान योजना से प्रभावशाली ढंग से अभिप्रेरित करना कठिन होता है व उनमें विभेद करना भी उचित नहीं होता है।
3. **परिस्थिति सापेक्षता (Situation Relative)** – अभिप्रेरण की प्रभावशीलता परिस्थितियों पर निर्भर करती हैं। एक योजना किन्हीं विशेष परिस्थितियाँ में प्रभावी सिद्ध होती हैं, वही अन्य परिस्थितियों में निष्प्रभावी हो सकती हैं। चूँकि परिस्थितियाँ बदलती रहती है। इसलिए अभिप्रेरण की कोई भी योजना, विचारधारा या सिद्धान्त सर्वत्र एवं सदैव समान रूप से लागू नहीं किये जा सकते हैं।
4. **पक्षपात (Partiality)** – अभिप्रेरणाएँ प्रदान करने में प्रबन्धकों द्वारा जाने या अनजाने में कोई पक्षपात या भेदभाव करने पर उसका नकारात्मक प्रभाव होता है। पक्षपात में पीड़ित व्यक्ति क्षुब्ध एवं अनुशासनहीन हो सकता हैं एवं उसे लाभान्वित व्यक्ति कार्य के प्रति लापरवाह।
5. **साधनों की आपर्याप्तता (Inadequate Resources)** – मौद्रिक अभिप्रेरणाएँ सर्वाधिक महत्वपूर्ण होती है, किन्तु कई बार पर्याप्त साधनों के अभाव में इन्हें प्रदान करना सम्भव नहीं होता है।
6. **अभिप्रेरणाओं की अपार्याप्ता (Ioadquacy of Insentiees)** – सौपें हुए कार्य की तुलना में उसके लिए निर्धारित अभिप्रेरणा को यदि कर्मचारी अपर्याप्त मानता है तब वह उससे अभिप्रेरित नहीं होता हैं और उस पर किया व्यय व्यर्थ जाता है।
7. **उद्देश्यों की एकात्मकता की समस्या (Problem of Integration of Objectives)** – यदि अभिप्रेरणाओं का उपक्रम के लक्ष्यों के साथ ठीक से एकीकरण न हो तब अभिप्रेरणाएँ व्यर्थ जाती हैं और उद्देश्यों की पूर्ति नहीं हो पाती हैं। क्योंकि यदि कर्मचारी के संगठन के लक्ष्यों की पूर्ति किये बिना ही अभिप्रेरणाएँ प्राप्त हो जायें या लक्ष्य अर्जित करने पर भी प्रेरणा नही मिल पाये तो वह योजना व्यर्थ व सकारात्मक सिद्ध होती है।

प्रभावी अभिप्रेरण प्रणाली के लिए आवश्यक तत्व बातें या नियम
(Elements or Pre-requisites or Rules for Effectives Motivation Systems)

1. अभिप्रेरण प्रणाली उत्पादकता एवं कुशलता पर आधारित होनी चाहिए।
2. अभिप्रेरणाएँ वांछित लक्ष्यों के लिए किये जाने वाली प्रयासों के अनुपात में होनी चाहिए।
3. अभिप्रेरणाएँ मितव्ययतापूर्ण होनी चाहिए।
4. अभिप्रेरणाएँ कर्मचारियों में स्वस्थ प्रतिस्पर्धा उत्पन्न करने वाली होनी चाहिए।
5. अभिप्रेरणाएँ निष्पादन पर आधारित होनी चाहिए एवं उन्हें निष्पक्षता के साथ लागू किया जाना चाहिए।
6. अभिप्रेरणाएँ विविधतापूर्ण होनी चाहिए, जिससे सभी प्रकार के कर्मचारियों को अभिप्रेरित किया जा सके।
7. अभिप्रेरणा निरन्तर जारी रखनी चाहिए, जिससे कर्मचारियों में निरन्तर सक्रियता बनी रहे।
8. अभिप्रेरणा प्रणाली सरल एवं कर्मचारियों के लिए सुगम व बोधगम्य होनी चाहिए।
9. अभिप्रेरणा प्रणाली लोचशील होनी चाहिए, जिससे परिस्थितियों के अनुरूप वांछित परिवर्तन किये जा सकें।
10. अभिप्रेरणा प्रणाली मानवीय कल्याण की भावना पर आधारित होनी चाहिए अर्थात कर्मचारी को अपने स्वास्थ्य के विपरीत कार्य करने के लिए प्रेरित नहीं किया जाये।
11. अभिप्रेरणा योजना द्वारा समूह भावना को नष्ट नहीं करना चाहिए। कर्मचारियों में अवांछित होड़, ईर्ष्या व द्वेष उत्पन्न नहीं होना चाहिए।

अभिप्रेरण या प्रेरणाओं के प्रकार या घटक
(Types or Factors of Motivation)

मानवीय अवश्यकताएँ एवं अभिप्रेरण
(Human Needs & Motivation)

मानवीय आवश्यकताएँ ही अभिप्रेरण का आधार है इनकी आवश्यकताओं को सन्तुष्टि के साधन ही व्यक्ति को अपनी ओर आकृष्ट करते हैं एवं इन्हें ही प्रेरणाएँ या अभिप्रेरणाएँ कहते हैं। एक व्यक्ति की अनेक विविधतापूर्ण आवश्यकताएँ होती है, जिनमें से कुछ तो मुद्रा से पूरी हो सकती हैं जबकि कुछ अन्य साधनों या माध्यमों से। इच्छाओं और आवश्यकताओं की विविधता के कारण ही इनकी पूर्ति के साधन अर्थात् अभिप्रेरिणाएँ भी अनेक हैं, जिनमें से प्रमुख को निम्न प्रकार से वर्गीकृत कर सकते हैं -

प्रेरणाओं या अभिप्रेरणओं के प्रकार या उनका वर्गीकारण अथवा अभिप्रेरण के घटक -

(i) वित्तीय, अवित्तीय एवं मिश्रित अभिप्रेरणाएँ
(ii) धनात्मक एवं ऋणात्मक अभिप्रेरणाएँ
(iii) व्यक्तिगत, सामूहिक एवं संस्थागत अभिप्रेरणाएँ

1. **वित्तीय, अवित्तीय एवं मिश्रित अभिप्रेरण, प्रेरणायें या अभिप्रेरणायें** (Financial, Non-Financial and Mixed Incentives, Motivators or Motivations) :

   (अ) **वित्तीय अभिप्रेरणायें –** मौद्रिक भुगतान से सम्बन्धित प्रेरणायें इस श्रेणी में आती हैं। चूँकि मौद्रिक साधनों से ही जीवन की अधिकांश आवश्यकतायें क्रय की जाती हैं एवं सामाजिक प्रतिष्ठा भी इससे प्रभावित होती है। अतएव मुद्रा को अभिप्रेरण की आरम्भिक अवस्था में सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रेरणा माना जाता है। वित्ततीय प्रेरणाओं में सामान्यतः निम्न प्रेरणाओं को सम्मिलित किया जाता है।

   1. पारिश्रमिक 2. पारिश्रमिक व द्धि, 3. कमीशन, 4. भत्ते, 5. बोनस 6. पुरस्कार 7. सामाजिक सुरक्षा लाभ, जैसे - भविष्य निधि, ग्रेच्युटी आदि।

(ब) **अवित्तीय अभिप्रेरणायें –** मानवीय मनोविज्ञान अत्यन्त जटिल हैं एवं मानवीय व्यवहार को केवल मौद्रिक लाभ ही नहीं वरन् उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा एवं अन्य कई अमौद्रिक घटक भी प्रभावित करते हैं। व्यक्ति अनेक कार्य अपनी सामाजिक व मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए करता है इसलिए कर्मचारियों के प्रभावी अभिप्रेरण हेतु अनेक अवित्तीय अभिप्रेरणाओं का भी उपयोग किया जाता है इनमें प्रमुख निम्न है - 1. कार्य प्रशंसा 2. सुरक्षा 3. पद 4. अधिकार प्रत्यायोजन 5. कार्य विस्तार 6. कार्य सफलता 7. सुधार योजना 8. स्वतन्त्रता 9. प्रतियोगितायें 10 मानवीय सम्बन्ध 11. सही समीक्षा एवं मूल्यांकन 12. सहयोग 13. अन्य अभिप्रेरणा।

(स) **मिश्रित अभिप्रेरणायें –** कुछ अभिप्रेरणायें वित्तीय एवं अवित्तीय दोनों ही गुणों से युक्त होती हैं। जैसे पदोन्नति, जिससे व्यक्ति के पद व प्रतिष्ठा में तथा पारिश्रमिक दोनों में व द्धि होती हैं।

2. धनात्मक एवं ऋणात्मक अभिप्रेरणा प्रेरणायें या अभिप्रेरेणायें (Postive and Negative Motivators Motivatives or Incentives) :

(i) धनातम्क अभिप्रेरणायें (Positive motivators) - धनात्मक अभिप्रेरणा' हेतु निम्न प्रेरणाओं का प्रयोग किया जाता है - (i) प्रशंसा एवं सम्मान (ii) वेतन व द्धि (iii) भत्ते (iv) कमीशन (v) बोनस (vi) बेहतर कार्य दशायें (vii) पदोन्नति (viii) उत्तरदायित्व व द्धि (ix) अतिरिक्त सुविधायें (x) अधिकारों में व द्धि (x) कर्मचारी कल्याण एवं सामाजिक सुरक्षा (xii) इच्छित स्थान पर स्थानान्तरण आदि।

(ii) ऋणात्मक अभिप्रेरणाऐं Negative Motivatives) - ऋणात्मक अभिप्रेरणाओं के उदाहरण निम्न हैं - (i) वेतन से कटौती (ii) सामान्य वेतन व द्धि पर रोक (iii) अनुशासनात्मक कार्यवाही (iv) सुविधाओं में कटौती (v) अनइच्छित स्थानान्तरण (vi) सहानुभूति रहित व्यवहार (vii) पदावनति (viii) निष्कासन एवं सेवा मुक्ति।

व्यक्तिगत, सामूहिक एवं संस्थागत अभिप्रेरण प्रेरणायें या अभिप्रेरणाएँ (Individual group and Insititutional motivation, Incentives or motivators) -

1. **व्यक्तिगत, अभिप्रेरणाएँ (Individual Group) –** व्यक्तिगत प्रेरणाओं के कुछ उदाहरण निम्न हैं - 1. पारिश्रमिक व द्धि 2. व्यक्तिगत प्रशंसा पत्र 3. पदोन्नति 4. प्रेरणात्मक पारिश्रमिक पद्धति 5. उत्तरादायित्व एवं अधिकार में व द्धि 6. पुरस्कार प्रदान करना आदि।

2. **सामूहिक अभिप्रेरणाएँ (Group Motivations) –** सामूहिक अभिप्रेरणाओं के कुछ उदाहरण निम्न हैं- 1. सामूहिक प्रशंसा 2. कार्य दशाओं में सुधार 3. वार्षिक बोनस में व द्धि 4. कर्मचारी सहभागिता एवं लाभ भागिता योजनाएँ 5. सामूहिक उत्पादकता बोनस 6. कर्मचारी कल्याण एवं सामाजिक सुरक्षा योजनाएँ 7. वेतनमानों में सुधार एवं अन्य सामूहिक लाभ की योजनाएँ।

3. **संस्थागत अभिप्रेरणाएँ (Institutional Motivations) –** संस्थागत अभिप्रेरणाओं के उदाहरण निम्नलिखित हैं - 1. मानवीय सम्बन्ध विचारधारा का विकास 2. प्रबन्ध में कर्मचारी सहभागिता 3. संप्रेषण तन्त्र को प्रभावशील बनाना 4. अनुशासन के वातावरण का विकास 5. समूह भावना का विकास 6. अनौपचारिक सम्बन्धी का उन्नयन आदि।

उपयोगी प्रश्न

(Useful Questions)

1. अभिप्रेरण से क्या समझते है? इसकी प्रकृति एवं महत्व को समझाइये।
What do you understand by Motivation? Exaplain its nature and importance.

2. अभिप्रेरण की परिभाषा दीजिए एवं इसकी प्रक्रिया एवं सिद्धान्तों को समझाइये।
Define motivation and explain its process and principles.

3. **विक्रेता प्रोत्साहन से आप क्या समझते हैं? विक्रेता को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता बताइये।**
What do you understand by Salesman Stimulation? Explain the need of stimulating salesman.

4. **विक्रयकर्ताओं को अभिप्रेरित के प्रमुख विधियाँ या प्रेरणाएँ कौन-कौन सी है? उनके सापेक्षिक महत्व को समझाइये।**
What are the major methods or incentives of motivating salesman ? Explain their relative importance.

5. **विक्रेताओं को अभिप्रेरित करने वाली विधियों का वर्णन कीजिए।**
Discribe different mehtods of Motivating Salesman.

6. **अभिप्रेरणा से क्या आशय है? इसकी सीमाएँ एवं प्रभावी अभिप्रेरणा के आवश्यक तत्वों को समझाइये।**
What is meant by motivation ? Explain its limitation and prerequests of effective motivation.

7. **निम्न पर टिप्पणियाँ लिखिए।**
(Write short notes on the following.)

   (i) **मास्लों की आवश्यकता क्रमबद्धता विचारधारा**
   (Maslow's need Hierarchy theory of motivation)

   (ii) **हर्जबर्ग की द्विकारक विचारधारा**
   (Herzberg's two factor theory)

   (iii) **वित्तीय एवं अवित्तीय अभिप्रेरणायें**
   (Financial and Non-Financial motivations)

अध्याय - 21
विक्रयकर्त्ताओं का पारिश्रमिक
(Remunerating Sales Personnel)

विक्रय की मात्रा में व द्धि के लिए फर्म में प्रतिभाशाली, योग्य, परिश्रमी, निष्ठावान तथा प्रशिक्षित एवं अनुभवी विक्रेताओं को नियुक्त करना आवश्यक होता है। किन्तु ऐसे विक्रताओं को आकर्षित करने के लिए उन्हें, उचित पारिश्रमिक, अच्छी कार्यदशाएँ, प्रगति तथा पदोन्नति के अवसरों से प्रेरित करने का प्रयास किया जाता है। अतः आधुनिक अर्थप्रधान व्यवस्था में कर्मठ विक्रेताओं को आकर्षित करने तथा पहले से कार्यरत् श्रेष्ठ विक्रेताओं को उपक्रम में बनाये रखने के लिए पारिश्रमिक भुगतान की उत्तम तथा प्रेरणादायक पद्धतियों की अपनाये जाने की आवश्यकता है।

विक्रयकर्ता को पारिश्रमिक भुगतान का अर्थ
(Meaning of Remurerating Salesman)

विक्रयकर्ता को उनके द्वारा किये गये कार्य के बदले कितना पारिश्रमिक दिया जाये? यह एक ऐसा प्रश्न है जिसका सर्वमान्य उत्तर मिलना उत्यन्त कठिन है क्योंकि ऐसा कोई प्रभापित सूत्र (Standard formula) नहीं है। जिसको सभी परिस्थितियों में लागू किया जा सके। प्रत्येक संस्था अपने विक्रयकर्ताओं का पारिश्रमिक अपने व्यापार की स्थिती, उत्पादन, बिक्री, लाभों एवं अन्य प्रतियोगी संस्थाओं में दिये जाने वाले पारिश्रमिक की विधियों को ध्यान में रखकर तय करती हैं। परन्तु इतना तय है कि विक्रयकर्ता को पर्याप्त पारिश्रमिक दिया जाना चाहिए, जिससे कि वह आवश्यक प्रयत्न कर वस्तुओं का उचित मात्रा में विक्रय कर सके। इस धारणा का आधार यह है कि "वस्तु स्वयं नहीं बिकती है उसे तो बेचा जाता है।" अतः पारिश्रमिक योजना का विकास सुव्यवस्थित ढंग से किया जाना चाहिए। फ्रेडरिक वेस्टर के अनुसार, "श्रेष्ठ पारिश्रमिक योजना वह विवेकशील परिपूर्ति (Compenstion) योजना है जो प्रबन्ध को सर्वोच्च स्तर तक उसके उद्देश्यों की प्राप्ति में सहयोग करती है। एक श्रेष्ठ पारिश्रमिक योजना के बिना प्रबन्ध को अपने उद्देदश्यों को प्राप्त करने में कठिनाई आ सकती है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि पारिश्रमिक देने की ऐसी पद्धति अपनानी चाहिए जिससे विक्रयकर्ताओं को अधिकतम प्रेरणा व सन्तोष प्राप्त हो तथा प्रबन्धकों को उनके उद्देश्यों की पूर्ति में सहायता प्राप्त हो।

विक्रयकर्ता को उचित पारिश्रमिक देने की आवश्यकता
(Need for Proper Remuneration to Salesman)

प्रायः विक्रेताओं को आवश्यकता से अधिक पारिश्रमिक का भुगतान तथा कम पारिश्रमिक पाने वाले विक्रेता दोनों ही व्यवसाय को मँहगे पड़ते हैं। यदि विक्रेताओं को पारिश्रमिक का भुगतान सस्ती दरों से किया जाता है तो वे लगन तथा उत्साह से कार्य नहीं करते हैं जिससे उनकी कार्य-क्षमता घट जाती है। इसके विपरीत अगर उनको आवश्यकता से अधिक पारिश्रमिक

दिया जाता है तो इससे वस्तु की कार्य के लिये उचित दिया जाना चाहिए, ताकि उसमें कार्य करने के लिए प्रेरणा बनी रहे। इस सम्बन्ध में स्टिल, कंडिफ एवं गोबानी ने श्रेष्ठ पारिश्रमिक योजनाओं की आवश्यकता पर बल देते हुए लिखा है कि, श्रेष्ठ पारिश्रमिक योजनाएँ विक्रय कर्मचारियों के प्रयासों को सर्वाधिक उत्पादक क्रियाओं की ओर प्रवाहित करने में सहायता करती हैं जिससे विक्रय संगठन के उद्देदश्यों को पूरा करने में सहायता मिलती हैं।"

विक्रयकर्ताओं को पर्याप्त पारिश्रमिक देने के पक्ष में निम्न तर्क प्रस्तुत किये जा सकते हैं :

1. **उपक्रम के प्रति निष्ठा उत्पन्न करना :** विक्रेताओं को उचित पारिश्रमिक का भुगतान करने से उनके मन में उपक्रम के प्रति निष्ठा उत्पन्न होती है तथा वे मन लगाकर कार्य करते हैं जिससे विक्रय में व द्धि होती है। इससे संस्था को लाभ होता है।

2. **अच्छे रहन-सहन का आकर्षण :** विक्रयकर्ता का आकर्षक व्यक्तित्व ग्राहकों को प्रभावित करता है। अतः उसे अपने व्यक्तित्व को आकर्षक बनाये रखने के लिए अच्छे वस्त्र एवं अच्छे भोजन की आवश्यकता रहती है। कहने का तात्पर्य है कि उसे अच्छे रहन-सहन को बनाये रखने के लिए अच्छे वेतन की आवश्यकता रहती है, ताकि उसका व्यक्तित्व ग्राहकों को आकर्षित कर सके।

3. **त्याग के बदले प्रतिफल :** विक्रयकर्ता को विक्रय को पेशे के रूप में अपनाकर कुछ व्यक्तिगत सुविधाओं का त्याग करनापड़ता है। उसे अपने घर-परिवार से दूर भी रहना होता है एवं घर पर उपलब्ध सुविधाओं से भी वंचित रहना होता है जिसके लिए उसे पर्याप्त पारिश्रमिक दिया जाना चाहिए।

4. **आत्म-सम्माान को बनाये रखने के लिए :** विक्रयकर्ता को आत्म-सम्मान बनाये रखने के लिए पर्याप्त वेतन दिया जाना चाहिए। इससे उसमें हीन भावना नहीं आ पायेगी। वह अपने प्रतिद्वन्द्वी विक्रेताओं से अपने आपको कम नहीं समझे, तभी वह प्रतिस्पर्द्धा में आगे निकल पायेगा।

5. **बौद्धिक स्तर बनाये रखने के लिए :** विक्रयकर्ताओं को अपना बौद्धिक स्तर बनाये रखने के लिए विभिन्न पत्र पत्रिकाओं पर पर्याप्त व्यय करना होता है और उसे पर्याप्त वेतन की आवश्यकता रहती है।

6. **कार्य-सन्तोष :** विक्रय-कर्ता को कार्य के प्रति सन्तोष बनाये रखने के लिए यह जरूरी है कि उसे वांछित वेतन दिया जाये। असन्तुष्ट व्यक्ति कभी भी अपने कार्य के साथ न्याय नहीं कर पायेगा और वह सदैव दूसरे कार्य की तलाश में ही लगा रहेगा।

7. **पारिवारिक खर्चों से मुक्ति :** पारिवारिक चिन्ता से ग्रस्त विक्रयकर्ता ईमानदारी से अपने कर्तव्य को नहीं निभा पायेगा। अतः उसे इतना पारिश्रमिक अवश्य दिया जाना चाहिए, ताकि वह पारिवारिक खर्चों के बारे में चिन्तित न रहे।

8. **पद की ओर आकर्षण :** पर्याप्त एवं उचित पारिश्रमिक ही शिक्षित एवं कुशल व्यक्तियों को विक्रयकर्ता के रूप में कार्य करने के लिए आकर्षित कर पायेगा। यदि उसको कम पारिश्रमिक दिया जायेगा तो शिक्षित एवं कुशल व्यक्ति विक्रयकर्ता के रूप में कार्य करने के लिए आकर्षित नहीं होंगे।

9. **संस्था की ख्याति बढ़ाने के लिए :** विक्रयकर्ताओं को यदि पारिश्रमिक का भुगतान उचित रीति से किया जाता है तो इससे संस्था की ख्याति में व द्धि होती है तथा कुशल विक्रेता उस संस्था में प्रवेश पाने के इच्छुक होंगे जिससे संस्था के विक्रय में व द्धि होने की संभावनाएँ बढ़ जाती हैं।

पारिश्रमिक योजना के उद्देश्य
(Objectives of Remuneration Plan)

किसी उपक्रम में विक्रयकर्ताओं को पारिश्रमिक भुगतान सम्बन्धी योजना को निर्मित करते समय उसके उद्देदश्यों का निर्धारण करना आवश्यक है। **प्रो. नाइस्ट्रोम** के अनुसार पारिश्रमिक योजना के निम्नलिखित उद्देश्य हो सकते हैं :

1. विक्रेताओं को संस्था के उद्देश्यों के अनुरूप तैयार करना।
2. निष्ठावान विक्रेता वर्ग को तैयार करना।
3. विक्रयकर्ताओं में स्थायित्त्व उत्पन्न करना।
4. अधिकतम लाभकारी विक्रय के लिए प्रोत्साहित करना।
5. उपक्रम में उपलब्ध साधनों के अनुरूप पारिश्रमिक योजना का संचालन करना।
6. न्यूनतम लागत पर उपभोक्ताओं तक माल पहुँचाना।
7. विक्रय क्षेत्रों में संस्था की वर्तमान तथा भावी स्थिति को द ढ़ बनाना।
8. विक्रेताओं में विश्वाश उत्पन्न करना कि उन्हें उनकी सेवाओं का उचित प्रतिफल मिल रहा है।
9. विक्रेताओं के कार्यों पर प्रभावशाली नियन्त्रण स्थापित करना।
10. विक्रेताओं को अतिरिक्त दायित्व ग्रहण करने के लिए तैयार करना।
11. कुशलता आधारित पारिश्रमिक प्रदान करना।

एक आदर्श पारिश्रमिक योजना के तत्त्व एवं विशेषताएँ
(Features or Elements of an Ideal Remuneration Plan)

एक विक्रयकर्ता की उचित की उचित मजदूरी क्या होनी चाहिए, इस प्रश्न पर विचार करना नितान्त जरूरी है। विक्रयकर्ता को जो पारिश्रमिक दिया जाय, वह किस रूप में हो तथा उसका भुगतान किस प्रकार किया जाय, ये समस्त प्रश्न विचारणीय हैं। इस सम्बन्ध में एक आदर्श पारिश्रमिक योजना में जिन तत्त्वों का समावेश होना चाहिए, यदि उनका अध्ययन कर लिया जाय तो इस प्रश्न का उत्तर भी स्वतः प्राप्त हो जाता है :

1. **न्यूनतम वेतन की गारण्टी :** एक आदर्श पारिश्रमिक योजना वह होती है जिसमें विक्रयकर्ता को अपने जीवन-यापन को आसानी से चलाने के लिए पर्याप्त न्यूनतम वेतन की गारण्टी रहे।
2. **उचित एवं न्यायपूर्ण :** एक आदर्श पारिश्रमिक योजना उचित एवं न्यायपूर्ण होनी चाहिए, ताकि मालिक एवं विक्रयकर्ता दोनों सन्तुष्ट रहें। विक्रयकर्ता के पारिश्रमिक का निर्धारण मालिक एवं विक्रयकर्ता दोनों की राय से होना चाहिए।
3. **प्रेरणा के आधार पर :** एक आदर्श पारिश्रमिक योजना ऐसी होनी चाहिए जिसमें विक्रयकर्ता को और अधिक ध्यान से कार्य करने की प्रेरणा मिल सके।
4. **उत्पादकता के आधार पर :** एक आदर्श पारिश्रमिक योजना उत्पादकता के आधार पर अधिक कार्य करने वाले विक्रयकर्ता को अधिक व कम कार्य करने वाले विक्रयकर्ता को कम पारिश्रमिक देने वाली होनी चाहिए।
5. **योग्यता के आधार पर :** एक आदर्श पारिश्रमिक योजना विक्रयकर्ताओं को उनकी योग्यता के आधार पर पारिश्रमिक देने वाली होनी चाहिए, ताकि योग्य विक्रयकर्ताओं को भी और अधिक कार्य करने की प्रेरणा मिलती रहे।
6. **प्रतियोगिता की भावना जगाने वाली :** एक आदर्श पारिश्रमिक योजना ऐसी होनी चाहिए जो विक्रयकर्ताओं को प्रतियोगिता की भावना से कार्य करने को प्रेरित करे।

7. **सरलता के आधार पर** : एक आदर्श पारिश्रमिक योजना सरलता के आधार पर होनी चाहिए जिसमें वेतन की गणना करना व भुगतान करना दोनों ही सरल हों।

8. **न्यूनतम पर्यवेक्षण :** एक आदर्श पारिश्रमिक योजना ऐसी होनी चाहिए जिसमें न्यूनतम पर्यवेक्षण की आवश्यकता हो, विक्रयकर्ता स्वयं ही अपना कार्य करते रहें।

9. **अच्छे विक्रयकर्ताओं को आकर्षित करने वाली :** एक आदर्श पाश्रिमिक योजना ऐसी होनीी चाहिए जो विक्रयकर्ताओं को आकर्षित कर सके।

10. **स्थिरता :** विक्रता का परिश्रमिक निर्धारित करते समय यह ध्यान देना चाहिए कि जो कुछ भी पारिश्रमिक निश्चित किया जाय उसमें बार-बार या थोड़े समय के अन्दर परिवर्तन नहीं होना चाहिए। बराबर परविर्तन करते रहने से विक्रेता के दिमाग में हर समय पारिश्रमिक बढ़ाने का लोभ उत्पन्न होता है तथा पारिश्रमिक मिलने के बारे में भी अनिश्चितता रहती है, जिससे उसका अपने काम में मन नहीं लगता है। इसलिए यह आवश्यक होता है कि निश्चित समय में नियमित रूप से पारिश्रमिक में परिवर्तन लाना चाहिए।

11. **लोचशीलता के आधार पर :** पारिश्रमिक देने में लोचशीलता बरतनी चाहिए। अगर कोई विक्रेता मन लगाकर, कड़ी मेहनत तथा दिलचस्पी लेकर काम करता है, तब उसको पर्याप्त प्रोत्साहन पारिश्रमिक के रूप में मिलना चाहिए। फिर अगर कोई विक्रेता में अधिक कुशलता है और वह फर्म को ज्यादा से ज्याद सेवा कर रहा है तब उसका पारिश्रमिक भी अन्य विक्रेताओं के मुकाबले में ज्यादा होना चाहिए।

12. **तत्काल भुगतान करना :** जो कुछ भी पारिश्रमिक निश्चित हो उसका भुगतान समय पर होना चाहिए। अगर विक्रेता के मन में यह भावना आ गयी कि उसके परिश्रम की कमाई समय पर नहीं मिलेगी, तब वह दिलचस्पी से काम नहीं करेगा। इसलिए पारिश्रमिक का भुगतान निर्धारित समय पर ही किया जाना चाहिए।

13. **प्रतियोगिता की भावना रहना :** पारिश्रमिक का निर्धारण इस तरह से होना चाहिए कि विक्रेता अधिक काम करने के लिए आपस में होड़ लगा दे। ऐसा होने से मालिक का कुल लाभ बढ़ेगा और विक्रेताओं को भी ज्यादा पारिश्रमिक मिलेगा।

14. **स्पष्टता का विद्यमान होना :** विक्रेता की कार्य की शर्ते तथा पारिश्रमिक के भुगतान विधि का तरीका आदि लिखित होना चाहिए। उनके बीच हुए प्रसंविदे की सभी बातें दोनों पक्षों को साफ-साफ समझ लेना चाहिए। इसके होने से भविष्य में गलतफहमी नहीं होगी।

15. **व्यक्तिगत तत्व :** विक्रय का कार्य एक व्यक्ति का अपना व्यक्तित्व परिणाम होता है। ऐसा हमेशा होता है कि कुछ विक्रेता ज्यादा माल बेच पाते हैं तो कुछ कम बेचते है। इसलिए सभी विक्रेताओं की योग्यताओं को एक तरह का समझना तथा उनको पारिश्रमिक भी एक ही देना व्यापार के द ष्टिकोण से भारी भूल होगा। अतः पारिश्रमिक की रकम एक विक्रेता से दूसरे विक्रेता में भिन्न-भिन्न होना चाहिए।

विक्रयकर्ता के पारिश्रमिक को प्रभावित करने वाले घटक

(Factors Affecting Remuneration of Salesman)

विक्रयकर्ता के पारिश्रमिक को निर्धारित करना कोई आसान कार्य नहीं है। इसका निर्धारण करते समय विभिन्न बातों पर विचार करना होता है। सामान्यतः विक्रयकर्ता के पारिश्रमिक को प्रभावित करने वाले घटक निम्नलिखित हैं :

1. **वस्तु या सेवाओं की प्रकृति (Nature of Product and Services) :** यदि विक्रयकर्ता किसी तकनीकी (Technical) वस्तु को अथवा सेवा को बेचने के लिए रखा गया है, तब उसका पारिश्रमिक गैर-तकनीकी वस्तु अथवा सेवा के विक्रयकर्ता से अधिक होना चाहिए, जैसे- मशीनरी बेचने के लिए नियुक्त विक्रयकर्ता से कपड़ा बेचने के लिए रखे गये विक्रयकर्ता का परिश्रमिक कम होना चाहिए।

2. **विक्रयकर्ता का स्तर (Level of Salesman) :** विक्रयकर्ताओं का पारिश्रमिक उनके स्तर के आधार पर निश्चित किया जाना चाहिए, जैसे- कनिष्ठ (Senior) विक्रयकर्ता से जूनियर विक्रयकर्ता का परिश्रमिक कम होना चाहिए।

3. **विक्रय-प्रतिरोध (Sales Resistance) :** जिन वस्तुओं को बेचना मुश्किल है, उनमें कार्य करने वाले विक्रयकर्ताओं का पारिश्रमिक अधिक होना चाहिए, उन विक्रयकर्ताआं की तुलना में जो ऐसी वस्तुएँ बेचते हैं जिनका बेचा जाना तुलनात्मक रूप से आसान है।

4. **बाजार (Market) :** वस्तुओं को बेचने के लिए समस्त बाजार एक जैसे नहीं होते। कहीं प्रतिस्पर्द्धा कम होती है तो कहीं कम। कहीं जनता की क्रय शक्ति ज्यादा होती है तो कहीं कम। अतः पारिश्रमिक का निर्धारण करते समय इस बात को भी ध्यान में रखना चाहिए।

5. **विक्रयकर्ताओं की कुशलता एवं अनुभव (Experience and Efficiency of the Salesmen) :** विक्रयकर्ताओं की कुशलता एवं अनुभव को ध्यान में रखते हुए उनके पारिश्रमिक का निर्धारण किया जाना चाहिए।

6. **विक्रय की मात्रा (Volume of Sale) :** विक्रय की मात्रा के आधार पर विक्रयकर्ताओं को पारिश्रमिक दिया जाना चाहिए। बड़े आदेश लाने वाले विक्रयकर्ताओं को अधिक पारिश्रमिक तथा छोटे आदेश लाने वाले विक्रयकर्ताओं को कम पारिश्रमिक दिया जाना चाहिए।

7. **विक्रय लक्ष्य (Sales Target) :** संस्था का विक्रय लक्ष्य भी पारिश्रमिक निर्धारण को प्रभावित करता है। ऊँचे लक्ष्य होने पर पारिश्रमिक अधिक एवं प्रेरणादायक होने चाहिए।

8. **योग्यता एवं अनुभव (Ability and Experience) :** योग्य एवं अनुभवी विक्रयकर्ताओं का पारिश्रमिक अधिक तथा अयोग्य एवं कम अनुभवी विक्रयकर्ताओं का कम परिश्रमिक दिया जाना चाहिए।

9. **देश की आर्थिक स्थिति (Economic Conditionof the Country) :** विक्रयकर्ताओं का परिश्रमिक देश की स्थिति से प्रभावित होता है। यदि देश में मुद्रा प्रसार की स्थिति नहीं है, मूल्य स्तर नीचा है तो विक्रयकर्ताओं को कम वेतन दिया जा सकता है परन्तु यदि देश में मुद्रा प्रसार है एवं चारों तरफ महँगाई, तब विक्रयकर्ता को अपेक्षाकृत अधिक पारिश्रमिक देना होगा।

10. **वस्तुओं के मूल्य (Prices of the Products) :** जिन वस्तुओं का मूल्य अधिक है तथा क्रेता कम हैं उन वस्तुओं को विक्रयकर्ताओं के पारिश्रमिक का मूल्य अधिक होता है। इसके विपरीत जिन वस्तुओं का मूल्य कम होता है तथा ग्राहक अधिक या विभिन्न क्षेत्रों में फैले रहते हैं उनके विक्रेताओं के प्ररिश्रमिक की दर कम होती है क्योंकि उन्हें क्रेताओं को बहुत अधिक प्रेरित करने की आवश्यकता नहीं होती है। इस प्रकार वस्तुओं के मूल्यों से भी विक्रेताओं का पारिश्रमिक प्रभाावित होता है।

11. **लाभ का प्रतिशत (Margin of Profit) :** यदि वस्तु के मूल्य में लाभ का प्रतिशत अधिक होता है तो विक्रेताओं को उच्च दर से पारिश्रमिक दिया जायेगा। इसके विपरीत यदि वस्तु के मूल्य मे लाभ की मात्रा कम हो तो उन्हें पारिश्रमिक निम्न दरों से भुगतान किया जायेगा।

12. **विज्ञापन एवं विक्रय संवर्द्धन (Advertising & Sales Promation) :** जिन संस्थाओं द्वारा अपनी वस्तुओं का विज्ञापन पर्याप्त मात्रा में करना होता है तथा समय प्रति समय विक्रय संवर्द्धन का सहारा लेना पड़ता हो उनके द्वारा पारिश्रमिक कम दरों से भुगतान किया जाता है। इसका कारण यह है कि इनसे सम्बन्धित विक्रेताओं के विक्रय प्रयास अपेक्षाकृत कम होते हैं। इसके विपरीत जिन संस्थाओं द्वारा इन दोनों साधनों पर व्यय कम करना पड़ता हो उनके विक्रेताओं के विक्रय प्रयास अपेक्षाकृत अधिक होंगे जिसके प्रतिफल के रूप में उन्हें अधिक पारिश्रमिक का भुगतान करना होगा।

13. **उद्योग व क्षेत्र में प्रचलित पारिश्रमिक (Remuneration Prevalent in the Industry and Area) :** जिस उद्योग व क्षेत्र में जो पारिश्रामिक स्तर प्रचलित होता है उसे भी द ष्टिगत रखकर उपक्रम को विक्रयकर्ताओं का पारिश्रमिक तय करना चाहिए वरना उनमें असंतोष होने के कारण वे अन्य किसी संस्था में चले जायेंगे।

14. **नया उत्पाद अथवा नया बाजार (New Product or Market) :** नये उत्पाद को नये बाजार में बेचना कठिन होता है जिसके लिए अतिरिक्त श्रम व व्यय की आवश्यकता पड़ती है। किसी प्रचलित उत्पाद की तुलना में नये उत्पाद की व किसी पुराने बाजार की तुलना में नये बाजार में उत्पाद का विक्रय करना कठिन होता है। अतः नये उत्पाद का अथवा नये बाजार में विक्रय करने वाले विक्रेताओं को बेहतर पारिश्रमिक दिया जाता है।

पारिश्रमिक देने की विधियाँ
(Methods of Remuneration)

विक्रेताओं का पारिश्रमिक निर्धारण तथा देने की विधियाँ दोनों को जटिल समस्या समझी गयी है; जिसके बारे में अर्थशास्त्रियों का अध्ययन अभी भी जारी है। इसका कोई भी एक तरीका हर समय, हर परिस्थिति के लिए सही नहीं समझा जाता है। वे एक फर्म तथा एक विक्रेता से दूसरे विक्रेता में अलग-अलग होती है। पारिश्रमिक देने की विधियाँ जो भी अपनायी जायें; कम-से-कम यह ख्याल रखना चाहिए कि वह इस प्रकार की हो कि जो कुशल विक्रेता आकर्षित करे तथा उनकी सेवा के अनुकूल उनको परिश्रमिक दिलावे। पारिश्रमिक निर्धारण एक मुश्किल काम है और कभी-कभी तो ऐसा भी देखा गया है कि एक फर्म में एक वस्तु को तो आसानी से बेचा जा सकता है। फिर कुछ माल बेचने से ज्यादा लाभ प्राप्त होता है, तब दूसरे में कम मिलता है। तेजी के समय माल बेचना आसान है और इसके विपरीत मन्दीकाल में माल बेचना मुश्किल है। कुछ जगहहों में विक्रेता को कम पारिश्रमिक देना पड़ता है। फिर, जो कुशल विक्रेता है उसके काम का जो भविष्यकालीन परिणाम निकलेगा, उसको पारिश्रमिक में शामिल करने में कठिनाई का अनुभव होता है। इसलिए विक्रेता को पारिश्रमिक देने की विभिन्न विधियाँ निम्नलिखित हैं :

1. **वेतन विधि (Salary Method) :** वेतन देने की यह विधि सबसे सरल है। इस विधि के अनुसार विक्रयकर्ता को वेतन नियमित रूप से मासिक किस्तों में मिलता रहता है यद्यपि वेतन का भुगतान पाक्षिक या साप्ताहिक भी हो सकता है। यह वेतन उसकी कुशलता, संस्था की क्षमता एवं अन्य प्रतियोगी व्यापार की स्थिति आदि को देखकर तय किया जाता है। वेतन पद्धति में वेतन दो प्रकार से दिया जा सकता हैः (i) निश्चित वेतन, तथा (ii) वेतन क्रम से। निश्चित वेतन में वार्षिक वेतन में बढ़ोत्तरी नहीं होती, जबकि वेतन क्रम पद्धति में वार्षिक बढ़ोत्तरी होती है।

   वेतन पद्धति के गुण (Merits of Salary Method) :

   (i) विक्रयकर्ता की आय निश्चित होने के कारण उसको अपना पारिवारिक बजट बनाने में सुविधा रहती है।

(ii) नये विक्रयकर्ता के लिए लाभप्रद पद्धति है।

(iii) व्यापारी के लाभ-हानि का विक्रयकर्ता के पारिश्रमिक पर कोर्ठ प्रभाव नहीं पड़ता।

(iv) विक्रयकर्ता की सेवा को ध्यान में रखा जाता है।

(v) विक्रयकर्ता को नया क्षेत्र मिलने पर आपत्ति नहीं होती क्योंकि उसको अपने वेतन की निश्चितता रहती है।

(vi) विक्रयकर्ता अपनी कार्यक्षमता को बराबर बनाये रखता है क्योंकि उसे अपनी आय की निश्चितता एवं वार्षिक व द्धि के बारे में चिन्ता नहीं होती है।

वेतन पद्धति के अवगुण (Demerits of Salary Method) :

(i) विक्रयकर्ता को अधिक कार्य करने के लिए कोई प्रलोभन नहीं होता।

(ii) कुशल एवं अकुशल व्यक्तियों में कोई भेद नहीं किया जाता है।

(iii) बढ़ती हुई कीमतों के साथ यह पद्धति मेल नहीं खाती है।

(iv) विक्रयकर्ताओं का वेतन एक बार तय हो जाने के बाद उसको बढ़ाया नहीं जाता जिससे विक्रयकर्ताओं को अधिक कार्य करने की प्रेरणा नहीं मिलती।

2. **कमीशन विधि (Commission Method) :** इस विधि के अनुसार, विक्रयकर्ता को उसके द्वारा की गयी बिक्री के अनुसार पारिश्रमिक दिया जाता है। यह पद्धति प्रलोभन पर आधारित है। जितनी अधिक बिक्री विक्रयकर्ता के द्वारा की जायेगी, उतना ही अधिक उसको पारिश्रमिक मिलगा। पारिश्रमिक देने की इस विधि के अन्तगर्त भुगतान दो तत्वों पर आधारित होता है - (i) बिक्री की मात्रा (Volume of Sales) या लाभ की मात्रा (Volume of Profit) एवं (ii) कमीशन की दर (Commission Rate) दो प्रकार की हो सकती है- (अ) स्थिर (Fixed), तथा (ब) प्रतिगामी (Progressive) । स्थिर दर के अनुसार निश्चित दर से कमीशन मिलता है, जबकि प्रतिगामी दर के अनुसार बिक्री बढ़ने के साथ-साथ दर में भी व द्धि हो जाती है।

कमीशन पद्धति के गुण

(Merits of Commission Method)

(i) कार्य और परिणाम में प्रत्यक्ष सम्बन्ध होने के कारण विक्रयकर्ताओं को अधिक कार्य करने की प्रेरणा मिलती है।

(ii) विक्रयकर्ता अपना कार्य करने में स्वतन्त्र होता है, उसे पारिश्रमिक तब मिलेगा जब कार्य होगा।

(iii) कुशल विक्रयकर्ताओं को अधिक से अधिक कार्य करने की प्रेरणा मिलती है।

(iv) अन्य विक्रयकर्ताओं के सहयोग की इसमें आवश्यकता नहीं है।

(v) व्यवसायी और विक्रयकर्ताओं में आपसी मतभेद की कम सम्भावना रहती है क्योंकि इस पद्धति से दोनों पक्षों को पूर्ण सन्तुष्टि प्राप्त होती है।

(vi) नियोक्ता पर वेतन, भत्ता आदि की कोई जोखिम नहीं होती। यदि विक्रयकर्ता कोई काम नहीं करता तो उसको कोई वेतन नहीं मिलता। यह लाभ व्यवसायी को प्राप्त होता है।

कमीशन पद्धति के अवगुण
(Demerits of Commission Method)

(i) विक्रयकर्ता की आय अनियमित रहती है जिससे वह अपने पारिवारिक दायित्व को ढंग से नहीं निभा पाता।

(ii) विक्रयकर्ताओं को मन्दी के समय कम बिक्री होने से कम पारिश्रमिक प्राप्त होता है। कभी-कभी तो उनको अपना जीवन-निर्वाह करना भी दूभर हो जाता है।

(iii) विक्रयकर्ता नियोक्ताओं से बहुत कम सुविधाएँ उठा पाते हैं।

(iv) विक्रयकर्ता पर मालिक का नियन्त्रण बहुत कम होता है। मालिक और विक्रयकर्ताओं में पारस्परिक सहयोग की कमी रहती है।

(v) विक्रयकर्ताओं को अपनी आय बढ़ाने के लिए अनुचित साधन अपनाने पड़ते हैं।

(vi) वेतन की अनिश्चितता के कारण उनकों सदैव चिन्ता रहती है जिससे उनके स्वास्थ्य व कार्य-क्षमता पर कुप्रभाव पड़ता है।

3. **वेतन तथा कमीशन विधि (Salary and Commission Method) :** यह पद्धति उपर्युक्त दोनों विधियों का सम्मिश्रण है। इसमें विक्रयकर्ता को एक निश्चित मासिक वेतन भी मिलता है और साथ ही उसके द्वारा की गयी बिक्री पर कमीशन। विक्रयकर्ता को एक नियत आय की गारण्टी के साथ-साथ अधिक परिश्रम करके बिक्री बढ़ाने की प्रेरणा भी मिलती है। इस पद्धति के अन्तर्गत दोनों पद्धतियों के गुणों का समावेश होता है तथा दोनों पद्धतियों के अवगुणों का निराकरण भी हो जाता है।

वेतन तथा कमीशन पद्धति के गुण
(Merits of Salary and Commission Method)

(i) विक्रयकर्ता को निश्चित वेतन मिलने के कारण अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियाँ निभाने में कठिनाई नहीं होती है।

(ii) विक्रयकर्ता को वेतन के साथ-साथ कमीशन भी मिलता है जिससे उसको अधिक कार्य करने के लिए प्रेरणा भी मिलती है।

(iii) विक्रयकर्ताओं एवं नियोक्ता में पारस्पारिक सम्बन्ध भी अच्छे बने रहते हैं।

(iv) मन्दी के समय में भी निश्चित वेतन मिलने के कारण उसे अधिक कठिनाई नहीं उठानी पड़ती।

(v) व्यवसायी कभी-कभी न्यूनतम बिक्री निश्चित कर देता है जिससे बिक्री घटने की सम्भावना नहीं रहती।

वेतन तथा कमीशन पद्धति के अवगुण
(Demerits of Salary and Commission Method)

(i) इस पद्धति में जो वेतन विक्रयकर्ता को दिया जाता है, वह अत्यन्त कम होता है जिससे उसकी न्यूनतम आवश्यकताएँ भी पूरी नहीं हो पाती।

(ii) कमीशन की दरें भी अत्यन्त कम होती हैं जिससे विक्रयकर्ता को अधिक कार्य करने के लिए कोई विशेष प्रोत्साहन भी नहीं मिलता।

यह पद्धति पूर्व-वर्णित विधियों से श्रेष्ठ मानी जाती है, यदि न्यूनतम वेतन उसकी आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर निर्धारित किया गया हो तथा कमीशन की दरें प्रतिगामी (Progresive) हों।

4. **आहरण लेखा एवं कमीशन विधि (Drawings Account and Commission Method) :** यह विधि केवल कमीशन विधि का ही एक अंग है। इस विधि के अन्तर्गत विक्रयकर्ताओं को प्रत्येक माह एक निश्चित रकम निकालने का अधिकार दिया जाता है जिसको उसके आहरण खाते में लिखते रहते हैं और एक निश्चित समय क बाद (वार्षिक या छमाही) उसके द्वारा अर्जित कमीशन से समायोजित कर देते हैं। यदि उसका कमीशन उसके द्वारा निकाली गयी राशि से अधिक है तो बकाया राशि उसको निकालने का अधिकार दे दिया जाता है और यदि उसके द्वारा निकाली गयी राशि अधिक है तो बकाया राशि को भविष्य में अर्जित कमीशन से समायोजित कर दिया जाता है।

आहरण लेखा एवं कमीशन विधि का गुण
(Merits of Drawings Account and Commission Method)

(i) विक्रयकर्ता को एक निश्चित राशि मिलती रहती है जिससे उसको अपना पारिवारिक बजट बनाने में सुविधा रहती है।

(ii) विक्रयकर्ता को कार्य करने की प्रेरणा बनी रहती है जिससे वह अपनी आय को बढ़ा सकता है।

(iii) विक्रयकर्ता को कार्य करने की स्वतन्त्रता रहती है जिससे उसका मनोबल ऊँचा रहता है।

(iv) कमीशन पद्धति के समस्त लाभ इस पद्धति में प्राप्त हो जाते हैं।

आहरण लेखा एवं कमीशन विधि के अवगुण
(Demerits of Drawings Account and Commission Method)

(i) विक्रयकर्ता की आहरण की रकम कम होने से पारिवारिक जिम्मेदारियाँ निभाने में असुविधा का सामना करना पड़ता है।

(ii) अधिक आहरण आदि विक्रयकर्ता से समायोजित न हो सके तो उसे विक्रयकर्ता से वसूल करने में कठिनाई होती है।

(iii) आहरण कर लेने की सम्भावना से विक्रयकर्ता आलसी बन जाता है।

(iv) विक्रयकर्ता पर व्यवसायी का नियन्त्रण कम रहता है।

5. **लाभ-भाजन विधि (Profit-Sharing Method) :** लाभ-भाजन विधि समानता के सिद्धान्तों पर आधारित है क्योंकि लाभ पाने का आधिकार संस्था के मालिक का ही नही अपितु उन सब कर्मचारयों का भी है जिसके सहायोग से लाभ कमाया गया है। संसार के अन्य प्रगतिशील देशों के साथ-साथ भारत में भी इस प्रणाली को कानूनी रूप दे दिया गया है जिसके अनुसार प्रत्येक व्यवसायी को अपने कर्मचारियों को लाभ का एक निश्चित प्रतिशत देना अनिवार्य कर दिया गया है। इस कानून को 'बोनस अधिनिमय' (Bonus Act) कहते हैं।

लाभ-भाजन विधि के गुण
(Merits of Profit-Sharing Method)

(i) इस पद्धति का सबसे प्रमुख गुण यह है कि विक्रयकर्ता अपने आपको संस्था का कर्मचारी न मानकर उसका साझीदार मानता है।

(ii) विक्रयकर्ता मितव्ययी होकर संस्था के लाभ बढ़ाने की भरसक कोशिश करता है।

(iii) विक्रयकर्ता का मनोबल ऊँचा होता है तथा उसकी कार्यक्षमता बढ़ जाती है।

(iv) बिक्री में व द्धि होने से व्यवसायी एवं विक्रयकर्ता दोनों को लाभ प्राप्त होते हैं।

लाभ-विभाजन विधि के अवगुण

(Demerits of Profit-Sharing Method)

(i) सभी विक्रयकर्ताओं को समान दर से लाभ में हिस्सा मिलता है, जबकि व्यवहार में सभी विक्रयकर्ता एकसमान नहीं होते।

(ii) व्यवसाय का लाभ समान न होने के कारण व्यवसायी एवं विक्रयकर्ता की आय अनिश्चित रहती है।

(iii) व्यवसायी विक्रयकर्ता को लाभ में तो भागीदार बना लेता है लेकिन प्रबन्ध में उसको हिस्सा नहीं दिया जाता।

(iv) विक्रयकर्ता को केवल लाभ में हिस्सा मिलता है, जबकि व्यवसायी की हानि होने पर उसको स्वयं वहन करनी पड़ती है। व्यवसायी की द ष्टि से यह उसकी सबसे बड़ी हानि है। इसके साथ ही साथ विक्रयकर्ता को कोई पारश्रमिक नहीं प्राप्त होता है।

6. **अन्य विधियाँ (Other Methods) :** विक्रयकर्ता को पारिश्रमिक देने की निम्नलिखित कुछ और विधियाँ भी हैं जिनको उपर्युक्त विधियों में सुधार करके बनाया गया है :

(अ) **कोटा योजना (Quota Plan) :** इस विधि के अन्तर्गत प्रत्येक विक्रयकर्ता की न्यूनतम बिक्री निर्धारित कर दी जाती है जिसको पूरा करना उसके लिए आवश्यक कर दिया जाता है। जब बिक्री की मात्रा सीमा से बढ़ जाती है तो उसको इस बढ़ी हुइ मात्रा पर निश्चित दर से कमीशन या बोनस दिया जाता है। यदि कोई विक्रयकर्ता किसी माह अपना कोटा पूरा नहीं कर पाता तो उसको उसे पूरा करने का अधिकार एक निश्चित समय तक दिया जाता है।

(ब) **विशेष कार्य-विधि (Special Task Method) :** यह एक विशेष पद्धति है जो विशष कार्य या विशेष अवसर पर ही बनायी जाती है। इस विशैष कार्य को पूरा करने के लिए विक्रयकर्ता भी अलग से नियुक्त नहीं किये जाते अपितु पुराने विक्रयकर्ताओं को ही विशेष कार्यों को पूरा करने के लिए पारिश्रमिक दिया जाता है, जैसे- पुराने विक्रयकर्ताओं को नया ग्राहक बनाने पर अतिरिक्त पारिश्रमिक दिया जाय।

विक्रयकर्ता को पारिश्रमिक देने की सर्वोत्तम विधि

(Best Method of Remunerating Salesman)

विक्रयकर्ता को पारिश्रमिक देने की सर्वोत्तम विधि कौन-सी है। अर्थात् विक्रयकर्ताओं को पारिश्रमिक किस विधि से दिया जाना चाहिए? यह एक ऐसा प्रश्न है जिसका हल निकालना आसान नहीं है। कोई विधि एक मालिक के लिए श्रेष्ठ है तो किसी दूसरे के लिए कोई दूसरी विधि श्रेष्ठ है तथा कोई विधि किसी संस्था में कार्य कर रहे विक्रयकर्ताओं को पसन्द है तो कोई दूसरी विधि दूसरी जगह कार्य करने वाले विक्रयकर्ताओं को पसन्द है। वास्तव में, सर्वोत्तम विधि वही है जो मालिक एवं विक्रयकर्ताओं को पसन्द है और सन्तुष्टि प्रदान कर रही है। सामान्यतः वेतन एवं कमीशन विधि को ही अधिकतर विक्रयकर्ता पसन्द करते हैं। एक श्रेष्ठ पारिश्रमिक पद्धति के लक्षणों का उल्लेख पहले ही आदर्श पारिश्रमिक योजना के तत्त्वों में किया जा चुका है।

उपयोगी प्रश्न
(Useful Questions)

1. **विक्रेताओं को पारिश्रमिक देने की विभिन्न पद्धतियों का वर्णन करो।**
   Discuss the different methods of remuenerating salesmen.

2. **एक विक्रय-प्रबन्धक को विक्रेताओं के पारिश्रमिक निर्धारित करते समय कुछ बातों को ध्यान में रखना चाहिए। वे बातें कौन-कौन सी है?**
   While determining remuneration to salesmen the sales manager must consider certain things. What are these things ?

3. **विक्रयकर्ता को पारिश्रमिक देने की क्या पद्धतियाँ है? एक खुदरा भण्डार में विक्रय बढ़ाने के लिए आप किस पद्धति को अच्छा समझेंगें?**
   What are the methods of remunerating a salesman ? Which of these do you consider best for pushing sales in a retail store ?

4. **एक उत्तम पारिश्रमिक योजना के आवश्यक लक्षणों का वर्णन कीजिये।**
   Describe the essential characteristics of a sound remuneration plan.

5. **श्रेष्ठ पारिश्रमिक योजना के तत्वों, महत्व एवं उद्देश्यों पर प्रकाश डालिए।**
   Describe the essentials importance and objectives of a good remuneration plan.

6. **उन विभिन्न घटकों की व्याख्या कीजिये जो एक विक्रेता के पारिश्रमिक को निश्चित करते हैं।**
   Describe the different factors that decide a scale of remuneration of a salesman.

अध्याय - 22
विक्रयकर्त्ता का नियन्त्रण एवं निरीक्षण
(Control and Supervision of Salesman)

"नियन्त्रण से आशय घटनाओं को योजनाओं के अनुरूप बनाने से है" **बी. ई. गोत्ज**

नियन्त्रण एवं निरीक्षण का अर्थ एवं परिभाषाएँ
(Meaning and Definitions of Control & Supervision)

नियन्त्रण एवं निरीक्षण का सम्बन्ध संस्था में कार्यरत् कर्मचारियों के गुणों एवं दोषों को ढूँढने, उन्हें उचित मार्गदर्शन देने एवे उन्हें पुरस्कृत अथवा दण्डित करने से हैं। नियन्त्रण वास्तविक निष्ठपादन की निर्धारित प्रभावों से तुलना करता है तथा इसमें पाये जाने वाले विचलनों को दूर करने के लिए सुधारात्मक उपाय करता है, ताकि भविष्य में इनकी पुनराव त्ति न हो सके एवं उपक्रम की सभी क्रियाएँ निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिय योजनाओं के अनुसार निर्देशित की जा सकें। नियन्त्रण एवं निरीक्षण के सम्बन्ध में विद्वानों के विचार निम्न हैं

जार्ज. आर. टैरी (George R. Terry) के अनुसार, "नियन्त्रण से आशय यह निर्धारित करना है कि क्या किया जा रहा है अर्थात् कार्यों का मूलयांकन करना तथा यदि आवश्यकता हो तो उनमें सुधारात्मक उपाय करना, ताकि कार्य निष्पादन योजना के अनुसार हो सके।

वास्तव में, नियन्त्रण एवं निरीक्षण से हमारा आशय संस्था में कार्य कर रहे कर्मचारियों के गुणों एवं उनके दोषों को ढूँढ़कर, उन्हें उचित मार्गदेर्शन प्रदान कर पुरस्कृत अथवा दण्डित करने से है।

विक्रश्यकर्ता नियन्त्रण के उद्देश्य
(Objectives of Salesman Control)

साधारणतया विक्रयकर्ताओं के निरिक्षण एवं नियन्त्रण के निम्न चार उद्देश्य होते है :

1. **विक्रयकर्ताओं को प्रेरणा देना (To motivate The Salesman :** नियन्त्रण का उद्देश्य विक्रेताओं को प्रेरणा देना है ताकि वे और अधिक कुशलतापूर्वक कार्य कर सकें।
2. **कार्यों का मूल्यांकन करना (To Evaluate the Performance) :** नियन्त्रण का दूसरा उद्देश्य विक्रयकर्ताओं के कार्यों का समय-समय पर मूल्यांकन करना है जिससे कि उन विक्रयकर्ताओं को अपनी जीवका की समाप्ति का डर रहे जिनके द्वारा कार्य प्रभावों के अनुसार नहीं किया गया हो। इसके विपरीत जिन लोगों द्वारा कार्य प्रभावों से ऊँचा किया गया हो उनको पारितोषिक दिया जा सकता है।
3. **उन्नति के लिए निर्देशन (Direaction for Development) :** विक्रयकर्ताओं के नियन्त्रण का एक उद्देश्य यह भी है कि उन्हें समय-समय पर मार्गदर्शन दिया जाए ताकि वे अपना कार्य और उन्नत ढंग से कर सकें।

4. **संचार (Communicating) :** प्रबन्ध का कार्य है कि वे संस्थान में समुचित संचार व्यवस्था बनाकर रखें ताकि विक्रेताओं को संस्था की नीतियों, उद्देदश्यों, योजनाओं आदि की जानकारी दी जा सके। इसके द्वारा विक्रेताओं के कार्यों की भी जानकारी दी जाती है जिससे वे निरन्तर अपने कार्य में लगे रहे। यदि ये जानकारियाँ उन्हें समय प्रति समय प्रदान की जाती रहेंगी तो वे कार्य में अधिक संलग्नता दिखाऐंगे।

5. **त्रुटियों से संस्था को हानि से रक्षा (To Save the Institution from losses occuring due to mistakes of employees) :** कभी-कभी विक्रेताओं द्वारा अपने कार्यां में बरती गई असावधानियों के कारण संस्था को हानि होने का भय रहता है। अतः नियन्त्रण के द्वारा विक्रेताओं को एसी त्रुटियों या असावधानियों के प्रति सचेत किया जाता है ताकि संस्था को कोई हानि न हो।

6. **भ्रष्टाचार तथा अनैतिकता की समाप्ति (removal of Corruption and Immorality) :** नियन्त्रण के माध्यम से विक्रेताओं को सचेत किया जाता है कि अपने कार्यों में भ्रष्टाचार तथा अनैतिकता को कोई जगह न दें वरना उसके दुष्परिणाम होंगे।

7. **दायित्वों का निर्धारण (Determining the Responsibility) :** कार्य की सफलता के लिए सत्ता का किस प्रकार और किन व्यक्तियों में प्रत्यायोजन (Delegation किया गया है? और कार्य निष्पादन का श्रेय या विफलता की दशा में दायित्त्व किन व्यक्तियों का होगा इसे निर्धारित किया जाता है।

8. **साधनों, लागत तथा कार्य निष्पादन की जानकारी (To konw about the required resources, cost and work performance :** विक्रय कार्यों में लगने वाले साधनों, उन पर पड़ने वाली लागत तथा उससे प्राप्त परिणामों की जानकारी नियन्त्रण से प्राप्त करके उन्हें संयोजित किया जाता है।

विक्रयकर्ता नियंत्रण की आवश्यकता व महत्त्व

(Need amd Importance of Control on Sales Personnel)

आवश्यकता

(Need)

विक्रय प्रबंध में नियंत्रण की आवश्यकता अनेक कारणों से पड़ती है। इनमें से कुछ प्रमुख कारण है :

1. **लापरवाही तथा मनमानी :** नियंत्रण के बिना सभी लोग अपनी जिम्मेदारी की पूर्ति में लापरवाही और मनमानी का रास्ता अपनाएँगे जिससे विक्रय संगठन में अराजकता तथा अव्यवस्था का साम्राज्य फैल जाएगा। इसके लिए नियंत्रण आवश्यक है।

2. **संसाधनों का दुरुपयोग :** प्रत्येक संगठन में लगभग सभी कर्मचारियों को कंपनी के रहस्यों, वित्ततीय साधनों, माल, मशीन व अन्य मूल्यवान संपत्ति के इस्तेमाल के व्यापक अधिकार प्राप्त होते हैं। नियंत्रण के बिना इस बात का डर रहता है कि कहीं वे अपने लालच में इनका दुरुपयोग न करे बैंठें।

3. **पारस्परिक निर्भरता :** नियंत्रण के बिना स्वंय कर्मचारियों का हौंसला ढीला पड़ जाता है क्योंकि वे अन्य लोगों की कार्यवाहियों का पूर्वानुमान नहीं लगा सकते और स्वयं उनका काम अन्यों के काम से अभिन्न रूप से जुड़े होने के कारण अनियोजित (Unplanned) तथा अपूर्वानुमेय (Unforeseable) बन जाता है।

4. **जटिलता :** आज संगठन इतने बड़े तथा पेचीदा बन गए हैं कि सभी लागों को एक दिशा में, एक ही जोश के साथ समन्वित प्रयास के लिए प्रोत्साहित करने के लिए नियंत्रण की बढ़िया व्यवस्था बनाना अनिवार्य है।

महत्त्व
(Importance)

प्रबंध की प्रक्रिया में नियंत्रण, अंतिम कार्य होते हुए भी, अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। यह प्रबंध के अन्य सभी कार्यों की प्रभाविकता (Effectivencess) की जाँच भी कर देता है तथा संस्था के सामान्य स्वास्थ्य की भी। उदाहरण के लिए यदि कंपनी की योजना में कोई गलती रह गई है तो यह नियंत्रण में प्रकट हो जाएगी और यदि संगठन में कोई कमजोरी है या कार्य, अधिकार व दायित्व सही ढंग से नहीं बाँटे गए हैं तो प्रगति-रिपोर्ट तुरंत संकेत दे देती है। साथ ही नियंत्रण यह बतला देता है कि संस्था में नई चुनौतियों का सामाना करने के लिए कितनी स्फूर्ति तथा क्षमता है। इस तरह नियंत्रण प्रबंध का एक अपरिहार्य कार्य बन जाता है। व्यवसाय में इसके महत्त्व को हम निम्नलिखित बातों से स्पष्ट रूप में समझ सकते हैं :

1. **योजना क्रियान्वयन के लिए नियंत्रण अनिवार्य है :** संस्था में विक्रय योजनाओं को तब तक प्रभावपूर्ण ढंग से लागू नहीं किया जा सकता जब तक कि योजना के अनुसार किए जाने वाले कार्यों पर निगाह नहीं रखी जाएगी और इसमें कमी के लिए जिम्मेदारी तय करके सुधारात्मक कार्यवाही नहीं की जाएगी। अच्छी से अच्छी योजना भी अच्छे नियंत्रण के बिना केवल दिवास्वप्न (Day-Dreaming) बनकर रह जाएगी।

2. **अधिकार सौंपने तथा विकेंद्रीयकरण को संभव बनाता है :** अधिकार सौंपने (Delegation) तथा विकेंद्रीयकेरण (Decentralisation) का लाभ केवल तभी उठाया जा सकता है जबकि अधीनस्थों की जिम्मेदारीयाँ निश्चित की जाएँ तथा कार्य ठीक तरह से न होने पर सुधारात्मक कार्यवाही की जाए। जिम्मेदारी तय करने और सुधारात्मक कार्यवाही के निर्धारण में नियंत्रण की समूची प्रक्रिया शामिल है।

3. **समन्वय में सुविधा :** संस्था तभी प्रगति कर सकती है जब उस संस्था में लगे सभी लोगों तथा विभागों की क्रियाओं में तालमेल हो। यदि कुछ लोग अधिक तेजी से काम करें तथा विभागों की क्रियाओं में तालमेंल हो तथा कुछ धीरे-धीरे करें तो निश्चित रूप से कार्य ठीक प्रकार से नही हो सकेगा। नियंत्रण इस कठिनाई को दूर करता है क्योंकि प्रगति-मापन उसे प्रगति की सही सूचना दे देता है और विचलन-विश्लेषण (Variance Analysis) इसके कारणों का सही ज्ञान। तत्पश्चात उपयुक्त सुधारात्क कार्यवाही विक्रय विभागों की प्रगति में तालमेल पैदा कर सकता है।

4. **भविष्य में योजना बनाने में सहायक :** नियंत्रण में विक्रय विभाग की प्रगति का मूल्यांकन किया जाता हैं तथा योजनाओं से तुलना करके विचलन ज्ञात किए जाते हैं।

   इस प्रक्रिया से एक तरफ तो दोषी व्यक्तियों का पता चलता है तथा दूसरे, इससे योजनओं में रह गई कमियों का पता भी चल जाता है। इससे प्रबंधक भविष्य में और ज्यादा व्यावहारिक तथा मजबूत योजनाएँ बना सकते हैं।

5. **कुशलता में व द्धि :** नियंत्रण विक्रयविभाग में प्रत्येक काम समय पर और सही ढंग से करवाता है। इससे साधनों का सदुपयोग होता है तथा कुशलता में व द्धि होती है।

6. **मनोबल में सुधार :** नियंत्रण से संस्था में लगे कर्मचारियों का मनोबल ऊँचा उठता हैं क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति की जिम्मेदारी अलग-अलग होती है तथा एक व्यक्ति की कमजोरी के लिए दूसरे को दोषी नहीं ठहराया जा सकता। साथ ही कर्मचारियों को भी मालूम होता है कि किसने, कब क्या करना है और इसकी जिम्मेदारी किसकी है।

7. **अभिप्रेरण का साधन :** प्रभावी नियंत्रण व्यवस्था से यह पता लग जाता है कि कौन-सा कर्मचारी कुशल है और

कौन-सा अकुशल, कौन-सा कर्मचारी अच्छा कार्य करता है और कौन-सा काम से जी चुराता है। अतः कुशल कर्मचारियों की प्रशंसा करके तथा उन्हें अधिक वित्तीय प्रेरणाएँ देकर अभिप्रेरित किया जा सकता है; अकुशल कर्मचारियों को प्रशिक्षण देकर एवं जी चुराने वालों को दंडित करके अभिप्रेरित किया जा सकता है।

8. **अनुशासन की स्थापना :** बड़ी व्यावसायिक संस्थाओं में कर्मचारियों के पास बड़ी मात्रा में नकदी रहती है, और बहुमूल्य व्यावसायिक भेद रहते हैं। नियंत्रण के अभाव में वे बेईमानी कर सकते हैं, चोरी कर सकते हैं तथा दूसरे प्रलोभनों में फँस सकते हैं। नियंत्रण की कुशल व्यवस्था से इन सब पर रोक लगाई जा सकती है और अनुशासन का वातावरण पैदा होता हैं

9. **नियोजन निर्णय लेने में सहायोग देता है :** नियंत्रण व निर्णयन में घनिष्ठ संबध होता है। नियंत्रण से प्राप्त सूचनाओं, विचलनों एवं कठिनाईयों के आधार पर ही निर्णय लिए जाते हैं।

10. **अन्य :**
    I. नियंत्रण से विक्रय की लागत में कमी आती हैं
    II. नियंत्रण से सेवाओं की किस्म (Quality) को नियंत्रित किया जा सकता हैं।

नियंत्रण प्रक्रिया

(Control Process of Sales Personnel)

नियंत्रण प्रक्रिया में प्रमापों की स्थापना की जाती है (Setting Standards) वास्तविक कार्य की प्रमापों से तुलना की जाती हैं और यदि वास्तविक प्रगति निर्धारित प्रगति से भिन्न है तो उसके कारणों की जाँच करके आवश्यक सुधारक कार्यवाही की जाती है। इस प्रकार, नियंत्रण की प्रक्रिया में चार महत्त्वपूर्ण कदम उठाने पड़ते हैं :

1. प्रमापों का निर्धारण
2. वास्तविक कार्य का मापन
3. वास्तविक प्रगति की प्रमापों से तुलना तथा विचलन मालूम करना।
4. सुधारात्मक कार्यवाही करना।

1. **प्रमापों का निर्धारण (Setting Standards) :** यह नियंत्रण प्रक्रिया का पहला चरण है। इसके अंतर्गत प्रत्येक व्यक्ति, विभाग या दल के लिए कार्य के ऐसे प्रमाप (Standads) तय किए जाते हैं जिन्हें प्राप्त करने के लिए वह व्यक्ति, विभाग या दल प्रयत्न करें। प्रमाप, संस्था के समस्त नियोजन कार्यक्रम में से वे चुने हुए बिंदु (Selected points) हैं जिन पर वास्तविक कार्य को माप कर प्रबंधकों को यह संकेत दिया जाता है कि कार्य किस प्रकार चल रहा है। प्रमापों का निर्धारण भौतिक इकाइयों (Physical Terms), जैसे वस्तु की मात्रा (Quanitites of Priducts), श्रम-घंटे (Labour-Hours), सेवा की इकाइयाँ (Units of Service), गति (Speed) इत्यादि के रूप में, या मौद्रिक इकाइयों (Monetary Terms) जैसे विक्रय मूल्य (Sales Value), लागतें (Costs) , पूँजी (Capital), खर्च (Expenditure) या लाभ (Profits) इत्यादि के रूप में किया जाता है।

   काम के ये मापदंड ऐसे होने चाहिए कि उन्हें उपलब्ध योग्यता और साधनों से सरलता से प्राप्त किया जा सके। यही नहीं, ये मापदंड कम्पनी की प्रगति की योजना के अनुरूप होने चाहिए। इन्हें तय करते समय प्रबंधकों को यह ध्यान रखना चाहिए कि ये मापदंड (i) सरल हों तथा प्राप्त करने योग्य हों, (ii) निश्चित हों (iii) मापनीय हों, (iv) उद्देश्यों के अनुकूल हों, (v) लोचपूर्ण हों, (vi) सामयिक (Timely) हों तथा (vii) किफायती हो अर्थात् अधिक खर्चीले न हो।

प्रमापों को ज्यादा प्रभावशाली बनाने के लिए यह भी विचारणीय है कि सभी जिम्मेदारी के क्षेत्रों के लिए अलग-अलग प्रमाप तय किए जाएँ जिससे जिम्मेदारी तय करने और संबंधित पक्षों को अभिप्रेरित करने में आसानी हो।

इसके अतिरिक्त यह भी निश्चित करना आवश्यक है कि कितने विचलनों को सहन किया जा सकता है। वास्तविक कार्यों तथा प्रमापों के मध्य विचलन तो होंगे ही। अतः हमें उस सीमा को तय कर लेना चाहिए जिस सीमा तक विचलनों को सहन किया जा सकता है। विचलनों की सीमा तय करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि यह सीमा बहुत अधिक या बहुत कम न हो।

2. **वास्तविक का मापना (Measurement of Actual Performance) :** नियंत्रण प्रक्रिया की दूसरी अवस्था, में संस्था में काम की प्रगति का मापन (Measurement) किया जाता है।

वास्तविक प्रगति को मापते हुए ध्यान चाहिए कि (i) प्रगति के ये आँकड़े नियमित रूप से तथा निरंतर तैयार किऐ जाने चाहिए तथा (ii) प्रगति के ये आँकड़े पूर्णतया सही होने चाहिए।

नियंत्रण के लिए वास्तविक प्रगति की रिपोर्ट बनाते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि उच्च प्रबंधकों के पास इतनासमय नहीं होता कि वे हर रिपोर्ट का गौर से अध्ययन कर सकें। अतः प्रबंधकों के समक्ष केवल वे रिपोर्ट ही पेश की जानी चाहिए जिनमें विचलन महत्त्वपूर्ण हों। जो विचलन एक सीमा के भीतर हों, उन पर प्रबंधक ज्यादा ध्यान दें, यह आवश्यक नहीं है।

3. **वास्तविक प्रगति की प्रमापों से तुलना तथा विचलन मालूम करना :** नियंत्रण प्रक्रिया के तीसरे चरण में वास्तविक प्रगति की प्रमापों से तुलना की जाती है, विचलन मालूम किए जाते हैं तथा इन विचलनों के कारणों का पता लगाया जाता है। विचलनों के कई कारण हो सकते हैं जैसे नियोजन बनाने में गलती हो जाना, अथवा परिस्थितियों में अंतर आ जाना, अथवा भिन्न-भिन्न व्यक्तियों के द्वारा कम काम करना इत्यादि। यहाँ प्रबंधकों को ध्यान में रखना चाहिए कि वे केवल महत्त्वपूर्ण अंतरों को ही सुधारक कार्यवाही के लिए चुनें साधारण अंतर केवल संयोग की बात हो सकते हैं। अतः उन्हें ध्यान में रखना जरूरी नहीं है।

विचलनों को, विश्लेषण की द ष्टि से दो वर्गों में बाँटा जा सकता है :

(i) नियंत्रणीय विचलन - जिन्हें नियंत्रित किया जा सकता है, तथा

(ii) अनियंत्रणीय विचलन - जिन्हें दूर तो नहीं किया जा सकता, हाँ, पूर्वानुमान की अच्छी व्यवस्था द्वारा कम जरूर किया जा सकता है।

सुधारात्मक कार्यवाही द्वारा केवल नियंत्रणी विचलनों को ही नियंत्रित किया जा सकता है।

4. **सुधारात्मक कार्यवाही करना :** नियंत्रण प्रक्रिया का अंतिमचरण सुधारात्मक कार्यवाही करना है। वास्तव में सुधारात्मक कार्यवाही नियंत्रण प्रक्रिया की आत्मा है। इसका उद्देश्य वास्तविक प्रगति के अनुकूल बनाने में मदद देना है। इसमें दो प्रकार के कार्य शामिल हैं :

(i) वास्तविक प्रगति में कमी को दूर करना, तथा

(ii) इस कमी की पुनराव त्ति को भविष्य के लिए रोकना।

सुधारात्मक कार्यवाही करते समय प्रबंधकों को चार बातें ध्यान में रखनी चाहिएँ :

(i) सुधारक कार्यवाही तुरंत की जानी चाहिए।

(ii) सुधारक कार्यवाही विलचन-विश्लेषण पर आधारित होनी चाहिए, अटकलबाजी या जोड़-तोड़ पर नहीं।

(iii) सुधारक कार्यवाही, संबंधित कर्मचारी के मनोवैज्ञानिक द ष्टिकोण से मेल खाती हुई होनी चाहिए। तथा

(iv) सुधारक कार्यवाही उसी स्तर के प्रबंधकों के द्वारा शुरू कराई जानी चाहिए जिस स्तर पर विचलन रिकार्ड किए जाते हैं।

अच्छी नियंत्रण व्यवस्था के लिए आवश्यक तत्त्व

(Essential Elements or Characteristics for Establishing a Good Control System)

अथवा

प्रभावी नियंत्रण प्रणाली की विशेषताएँ

(Requisites of a Good Control System)

व्यावसायिक संस्था में एक सुद ढ़ नियंत्रण व्यवस्था बनाते समय प्रबंधकों को निम्नलिखित बातें ध्यान में रखनी चाहिएँ :

1. **उद्देश्यों की समझ :** एक अच्छी नियंत्रण व्यवस्था के निर्माण में सबसे बड़ी आवश्यकता यह है कि संस्था के उद्देश्यों का भली प्रकार से स्पष्टीकारण कर लिया जाए। उद्देश्यों को समझे बिना प्रमाप निश्चित नहीं हो सकते तथा प्रमापों के निर्धारित हुए बिना विचलन ज्ञात नहीं किए जा सकते।

2. **उपयुक्तता :** नियंत्रण की प्रणाली व्यावसायिक सस्था के कारोबार की प्रकृति और आवश्यकता के अनुकूल होनी चाहिए। उदाहरणार्थ, एक छोटी व्यावसायिक संस्था तथा बड़ी व्यावसायिक संस्था की नियंत्रण प्रणाली भिन्न होगी, एक ही संस्था में विक्रय विभाग में प्रयोग की जाने वाली तथा उत्पादन विभाग में प्रयोग की जाने वाली नियंत्रण व्यवस्था भिन्न हो सकती हैं

3. **प्रमापों का निर्धारण :** विक्रय की मात्रा, विक्रय मूल्य आदि के प्रमाप निर्धारित कर लेने चाहिए।

4. **शीघ्र रिपोर्ट की व्यवस्था :** एक अच्छी नियंत्रण प्रणाली में ऐसी व्यवस्था भी होनी चाहिए कि वास्तविक प्रगति में अंतर की सूचना तुरंत प्राप्त हो सके अन्यथा प्रबंधक हाथ मलते रह जाएँगे और नुकसान हो जाएगा।

5. **भविष्यदर्शी :** एक अच्छी नियंत्रण व्यवस्था संस्था की भावी योजनाओं को आधार प्रदान करती है। नियंत्रण का उद्देश्य केवल विचलनों को दूर करना ही नहीं होता, बल्कि इसका उद्देश्य तो एक ऐसी व्यवस्था बनाना होता है कि भविष्य में ये विचलन पैदा ही न हों।

6. **महत्त्वूपर्ण बिन्दुओं पर अधिक ध्यान :** एक अच्छी नियंत्रण व्यवस्था में उन क्षेत्रों पर ज्यादा ध्यान दिया जाता है जिनकी प्रगति संस्था की समूची प्रगति के लिए बहुत महत्त्वूपूर्ण होना। इसके फलस्वरूप प्रबंधक अपने समय का सदुपयोग कर सकते हैं और संस्था को बड़े-बड़े नुकसानों से बचाया जा सकता है।

7. **लोचदार :** एक अच्छी नियंत्रण व्यवस्था लोचदार होनी चाहिए जिसको बदलती हुई परिस्थितियों में भी उपयोग में लाया जा सके तथा जरूरत पड़ने पर उसमें संशोधन किया जा सके।

8. **समझने योग्य :** एक अच्छी नियंत्रण व्यवस्था के लिए यह जरूरी है कि वह सरल और स्पष्ट हो। प्रबंधकों को यह मालूम होना चाहिए कि इसे किस प्रकार लागू करना है तथा कर्मचारियों को भी यह मालूम होना चाहिए कि उनके कार्यों का मूल्यांकन कैसे किया जाएगा।

9. **मितव्ययी :** नियंत्रण व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए कि उसे लागू करने में अधिक खर्च न करना पड़ें। नियंत्रण व्यवस्था पर किया जाने वाला खर्च इससे प्राप्त होने वाले लाभों से कम होना चाहिए। नियंत्रण प्रणाली पर खर्च की मात्रा

संस्था के आकार पर भी निर्भर करेगी। छोटी संस्थाएँ कम खर्चीली व्यवस्था अपनाएँगी जबकि बड़े व्यावसायिक उपक्रम नियंत्रण की विस्त त प्रणाली को अपनाएँगे।

नियंत्रण के सिद्धांत
(Principles of Control)

हेरोल्ड कूण्ट्ज (Harold Koontz ने नियंत्रण के निम्नलिखित चौदह सिद्धांत बतलाए हैं :

1. **उद्देश्यों की सुरक्षा का सिद्धांत :** नियंत्रण का यह सिद्धांत बतलाता है कि नियंत्रण इस प्रकार का हो कि वह समूह के उद्देश्यों को प्राप्त करने में अपना योगदान प्रदान कर सके। इसके लिए आवश्यक है कि योजनाओं एवं वास्तविक कार्यों के मध्य विचलन ज्ञात करके सुधारात्मक कार्यवाही की जानी चाहिए।
2. **नियंत्रण की कुशलता का सिद्धांत :** प्रभावी नियंत्रण प्रणाली वह है जो प्रमापों तथा वास्तविक कार्यों के मध्य विचलनों को दूर करे तथा उनको दूर करने के लिए समय पर सुधारात्मक कार्यवाही करे ताकि संस्था की कार्यकुशलता में व द्धि हो सके।
3. **नियंत्रण के उत्तरदायित्व का सिद्धांत :** इस सिद्धांत के अनुसार नियंत्रण-कार्य उसी प्रबंधक का उत्तरदायित्व होना चाहिए जो कि योजना के अनुसार कार्यों का निष्पादन करने के लिए जिम्मेदार हैं।
4. **भावी नियंत्रण का सिद्धांत :** यह सिद्धांत यह बतलाता है कि नियंत्रण का उद्देश्य वर्तमान कार्यों और नियोजन में विचलनों को ज्ञात करना एवं समाप्त करना ही नहीं है बल्कि भावी कार्यों एवं नियोजनों में भी विचलनों को ज्ञात करना और उन्हें समाप्त करना है।
5. **प्रत्यक्ष नियंत्रण सिद्धांत :** इस सिद्धांत के अनुसार प्रबंधकों को अपने अधीनस्थों से प्रत्यक्ष संबंध रखने चाहिए तथा उन पर प्रत्यक्ष नियंत्रण स्थापित करना चाहिए।
6. **नियोजनों को दर्शाने का सिद्धांत :** नियंत्रण को इस प्रकार स्थापित किया जाना चाहिए जिससे वह संस्था की योजनाओं के ढ़ाँचे तथा उनके लक्ष्यों को स्पष्ट करने में सहायक हो।
7. **संगठन की उपयुक्तता का सिद्धांत :** नियंत्रण व्यवस्था इस प्रकार तैयार की जाए ताकि उसे संस्था के संगठनात्मक ढ़ाँचे के अनुरूप समायोजित किया जा सके तथा उसमें संगठन संरचना की विशेषताएँ भी हों।
8. **प्रमापों का सिद्धांत :** प्रभावशाली नियंत्रण के लिए कुछ निश्चित, सही एवं उपयुक्त प्रमाप होने चाहिए।
9. **नियंत्रण की वैयक्तिकता का सिद्धांत :** नियंत्रण प्रक्रिया ऐसी होनी चाहिए जो न केवल संगठन की आवश्यकताओं को पूरा करे बल्कि वह नियंत्रण करने वाले प्रबंधक को आवश्यकताओं को भी पूरा कर सके
10. **महत्त्वपूर्ण बिंदुओं पर नियंत्रण का सिद्धांत :** प्रभावशाली नियंत्रण प्रक्रिया के लिए यह भी आवश्यक है कि उसमें महत्त्वपूर्ण मामलों के नियंत्रण के संबंध में पहले से ही विशेष ध्यान दिया जाए।
11. **अपवाद का सिद्धांत :** नियंत्रण का अपवाद सिद्धांत यह बतलाता है कि प्रबंधकों को अपना ध्यान केवल अपवादों पर ही केंद्रित करना चाहिए।
12. **नियंत्रण को लोच का सिद्धांत :** इस सिद्धांत के अनुसार नियंत्रण कार्यक्रमों में पर्याप्त लोच होनी चाहिए ताकि योजनाओं में फेरबदल होने पर भी नियंत्रण करना कठिन न हो।
13. **पुनरावलोकन का सिद्धांत :** इस सिद्धांत के अनुसार नियंत्रण प्रक्रिया का समय-समय पर मूल्यांकन तथा पुरावलोकन करते रहना चाहिए तथा परिस्थितियों के अनुसार समायोजन (Adjustment) कर लेना चाहिए।

14. **कार्यवाही का सिद्धांत :** यह सिद्धांत इस बात की ओर संकेत करत है कि नियंत्रण करना तभी लाभप्रद है जबकि नियंत्रण के द्वारा ज्ञात हुए विचलनों को समाप्त करने के लिए यथोचित कार्यवाही की जाए। जब तक विचलनों को समाप्त करने के लिए प्रभावशाली कदम नहीं उठाए जाएँगें, नियंत्रण अधूरा ही रहेगा।

नियंत्रण की सीमाएँ
(Limitations of Control)

अथवा

नियंत्रण की कठिनाइयाँ
(Difficulties in Control)

नियंत्रण व्यवस्था एवं प्रणाली को आसानी से प्रयुक्त करने के लिए यह आवश्यक है कि प्रबंधक इसकी सीमओं को समझ लें। सामान्यतः नियंत्रण की निम्न सीमाएँ प्रकट होती हैं :

1. **बाह्य परिस्थितियों पर नियंत्रण का अभाव :** नियंत्रण के द्वारा संस्था के अंदर की जाने वाली कार्यवाहियों, जैसे उत्पादन, क्रय-विक्रय, मूल्य निर्धारण इत्यादि को तो नियंत्रित किया जा सकता है लेकिन बाहरी परिस्थितियों, जैसे- सरकारी नीति, फैशन परिवर्तन, माँग में उतार-चढ़ाव, बाजार में उथल-पुथल आदि को नहीं।
2. **व्यक्तिगत उत्तरदायित्व के निर्धारण में कठिनाई :** यदि किसी कार्य को एक से अधिक विक्रेता मिलकर पूरा करते हैं, और कार्य में कहीं कुछ कमी रह जाती है तो इसके लिए किसी एक व्यक्ति को जिम्मेदार ठहराना संभव नहीं। ऐसी स्थिति में नियंत्रण प्रभावहीन हो जाता है।
3. **प्रमापों के निर्धारण में कठिनाई :** नियंत्रण प्रमापों के आधार पर किया जाता है लेकिन न तो सभी क्षेत्रों में प्रमाप निर्धारित किए जा सकते हैं और न केवल द श्य प्रमाप कुशलता या सफलता के पूरे प्रतीक माने जा सकते हैं। उदाहरण के लिए परामर्श या सहायता का काम करने वाले विभागों में जैसे शोध विभाग, जनसंपर्क विभाग आदि के लिए कार्य के निशिचित प्रमाप तय करना कठिन है।
4. **नियंत्रण व्यवस्था में खर्चा :** नियंत्रण व्यवस्था एक खर्चीली व्यवस्था है। कभी-कभी नियंत्रण की व्यवस्था पर इतना अधिक खर्चा आ जाता है जो इससे प्राप्त लाभों में से पूरा नहीं किया जा सकता। ऐसी स्थिति में नियंत्रण बेकार हो जाता है।
5. **नियंत्रकों का ज्ञान :** जो व्यक्ति नियंत्रण कार्य से संबंधित हैं, उनके ज्ञान का नियंत्रण पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। यदि उनका ज्ञान सीमित हैं तो इस स्थिति में नियंत्रण व्यवस्था ठीक तरह से कार्य नहीं करेगी।
6. **मानवी समस्याएँ :** नियंत्रण की प्रक्रिया प्रायः कर्मचारियों के द्वारा आलोचना की द ष्टि से देखी जाती है। आमतौर पर, वे इसे जबरदस्ती या बल प्रयोग का साधन मानते है। नियंत्रण के प्रति संदेहात्मक तथा आलोचनात्मक रुख के कारण कर्मचारी के साथ सहयोग नहीं करते और नियंत्रण व्यवस्था असफल हो जाती है।

नियन्त्रण एवं निरीक्षण की विधियाँ
(Methods of Control and Supervision)

हैरी आर. टोस्डल के अनुसार, विक्रेता पर नियन्त्रण की तीन विधियाँ हैं : 1. व्यक्तिगत सम्पर्क द्वारा, 2. पत्राचार द्वारा, एवं 3. सामयिक रिपोर्टों द्वारा।

1. **व्यक्तिगत सम्पर्क :** यह विक्रयकर्ता पर नियन्त्रण करने का सबसे अच्छा तरीका है। इस विधि के अन्तर्गत विक्रेता के कार्यों का मूल्यांकन एवं जाँच पड़ताल किसी ऐसे अधिकारी के द्वारा कराई जाती है जो विक्रय कार्यों में विशेषज्ञ हो। यह कार्य विक्रय प्रबन्धक या तो स्वयं करता है या फिर बड़ी संस्था की दशा में क्षेत्रीय, मण्डलीय, जिला अथवा शाखा प्रबन्धकों से कराता है। यदि विक्रयकर्ता के कार्य में कोई कमी होती है तो तुरन्त उसमें सुधारात्मक कार्यवाही की जाती है।

2. **पत्राचार :** जब व्यवसाय का कार्य बहुत बढ़ जाता है और विक्रय अधिकारियों के लिए यह सम्भव नहीं होता कि वे व्यक्तिगत रूप से निरीक्षण एवं नियन्त्रण कर सकें जो वे अपने विक्रयकर्ताओं से समय-समय पर पत्र-व्यवहार करते हैं तथा आवश्यक सूचनाएँ पत्रों के माध्यम से मांगते हैं। आवश्यक निर्देश भी पत्रों के माध्यम से ही दिये जाते हैं। इस प्रकार पत्राचार से भी विक्रयकर्ताओं पर नियन्त्रण रखा जा सकता है।

3. **प्रतिवेदन :** जब विक्रयकर्ताओं से न तो व्यक्तिगत सम्पर्क करना ही सम्भव है और न बार-बार पत्र-व्यवहार तो फिर यह पद्धति अपनाई जाती है। इसमें विक्रयकर्ताओं से प्रतिवेदन देने को कहा जाता है। यह प्रतिवेदन कई प्रकार के होते है; जैसे- दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक विशेष।

   (i) **दैनिक प्रतिवेदन :** यह प्रतिवेदन एक विक्रयकर्ता अपने मुख्य कार्यालय को भेजता है। इसमें उस दिन व्यतीत किये गये समय का ब्यौरा, सम्पर्क किये गये ग्राहकों का ब्यौरा, नये व्यापार की प्रगति, प्रदर्शन, उधार की प्रगति, आदि का व्यौरा होता है।

   (ii) **साप्ताहिक, पाक्षिक या मासिक प्रतिवेदन :** कुछ संस्थाएँ साप्ताहिक, पाक्षिक या मासिक प्रतिवेदन भी अपने विक्रयकर्ताओं से मांगती हैं। यह प्रतिवेदन दैनिक प्रतिवेदनों के अतिरिक्त होता है। इसमें पूरे सप्ताह में किये गये कार्यों का संक्षिप्त विवरण होता है। इसी प्रकार मासिक प्रतिवेदन भी मांगे जाते है। कुछ संस्थाएँ पाक्षिक प्रतिवेदन भी मांगती हैं। साधरणतया यह प्रतिवेदन विक्रयकर्ता स्वयं तैयार करता है, लेकिन कुछ संस्थाएँ दैनिक प्रतिवेदनों से अपने आप पाक्षिक या साप्ताहिक प्रतिवेदन बना लेती हैं।

   (iii) **विशेष प्रतिवेदन :** दैनिक, साप्ताहिक एवं मासिक प्रतिवेदनों के अतिरिक्त एक विक्रयकर्ता को भिन्न-भिन्न प्रकार के प्रतिवेदन और भेजने पड़ते हैं। यह प्रतिवेदन कई प्रकार के होते है; जैसे नई बिक्री का प्रतिवेदन, साख एवं संकलन प्रतिवेदन, लौटाये गये माल का प्रतिवेदन, सम्भावित ग्राहकों के सम्बन्ध, सम्पर्क किये गये ग्राहकों का प्रतिवेदन, शिकायतें एवं उनके समाधान का प्रतिवेदन, आदि।

4. **समुदाय निरीक्षण :** नियन्त्रण करने का यह चौथा तरीका है। इसमें विक्रयकर्ताओं के समुदाय को एक निश्चित समय के उपरान्त विक्रय-कार्यालय पर एकत्रित होना पड़ता है और अपने कार्य के सम्बन्ध में जानकारी विक्रय-आधिकारियों को देनी पड़ती है। यह एक प्रकार का विक्रय सम्मेलन-सा होता है।

विक्रयकर्ता नियन्त्रण के आधार

(Basis of Salesman Control)

विक्रयकर्ता पर नियन्त्रण रखने के लिए काई ने कोई आधार होना चाहिए। यह आधार बहुत से है। हम यहाँ पर कुछ प्रमुख आधारों को ले रहे हैं।

1. **विक्रय कोटा :** विक्रयकर्ताओं पर नियन्त्रण रखने वाली संस्थाएँ अपने प्रत्येक विक्रयकर्ता का कोटा निश्चित कर देती हैं जिसको एक निश्चित समय में विक्रयकर्ता को पूरा करना पड़ता है। यदि निश्चित समय में कोटा पूरा

नहीं होता है तो ऐसे विक्रयकर्ता का पारिश्रमिक कम कर दिया जाता है और यदि आवश्यक हुआ तो ऐसे विक्रयकर्ता को हटाया भी जा सकता है। इसके विपरीत यदि विक्रयकर्ता द्वारा अपने कोटे से अधिक विक्रय किया गया है तो उसको अतिरिक्त पारिश्रमिक भी दिया जा सकता है। इस प्रकार विक्रय कोटा निर्धारित करके नियन्त्रण किया जा सकता है।

2. **विक्रय क्षेत्रें का बंटवारा :** संस्था द्वारा सम्पूर्ण विक्रय क्षेत्रों को छोटे-छोटे विक्रय क्षेत्रों में बांट कर प्रत्येक विक्रयकर्ता को उस क्षेत्र के लिए उत्तरदायी बनाकर विक्रयकर्ताओं पर नियन्त्रण रखा जा सकता है। ऐसा करने से उनके कार्यों का मूल्यांकन आसान हो जाता है।

3. **क्षेत्र निरीक्षण :** विक्रय विभाग के अधिकारियों द्वारा क्षेत्र में स्वयं जाकर विक्रयकर्ताओं की क्रियाओं का निरिक्षण किया जा सकता है और उनकी कमियों के सम्बन्ध में आवश्यक निर्देश वही पर दिये जा सकते हैं। इस प्रकार क्षेत्र निरिक्षण द्वारा उन पर नियन्त्रण रखा जा सकता है।

4. **यात्रा नियोजन :** विक्रयकर्ता की यात्रा का नियोजन विक्रय विभाग द्वारा किया जा सकता है। यात्रा नियोजन से अर्थ है कि विक्रयकर्ता को किन-किन स्थानों पर, किन-किन तारीखों में पहुँचना है? किस रास्ते से जाना है? तथा कितना कार्य करना है? जब विक्रयकर्ता लौटकर अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत करे तो उसके कार्यों का मूल्यांकन किया जा सकता है। इस प्रकार यात्रा नियोजन से विक्रयकर्ता पर नियन्त्रण रखा जा सकता है।

5. **विक्रयकर्ता के अधिकार :** विक्रयकर्ता के अधिकारों को निर्धारित करके भी उस पर नियन्त्रण रखा जा सकता है। सामान्य रूप से विक्रयकर्ता संस्था का प्रतिनिधि माना जाता है। अतः उसके द्वारा संस्था पर होने वाले दावों के बारे में समझौता किया जा सकता है। विक्रय मूल्य में छूट दी जा सकती है। उधार माल बेचा जा सकता है। विशेष अवसरों पर विशेष निर्णय लिये जा सकते हैं। लेकिन यदि इन बातों के सम्बन्ध में विक्रयकर्ता के अधिकार पारिभाषित कर दिये जाते हैं तो उस पर नियन्त्रण रखा जा सकता हैं

6. **पारिश्रमिक पद्धतियाँ :** प्रलोभन देने वाली पारिश्रमिक विधियों को अपनाकर भी विक्रयकर्ता पर नियन्त्रण रखा जा सकता है। यदि कोई विक्रयकर्ता निर्धारित कोटे से अधिक विक्रय करता है तो उसको अधिक कमीशन दिया जा सकता है। लाभ में भागी बनाया जा सकता है। पदोन्नति की जा सकती है। ऐसा होने से विक्रयकर्ता स्वतः ही अपने ऊपर नियन्त्रण कर लेता है जो उसके लिए एवं व्यवसाय के लिए लाभकारी है।

7. **अभिलेख एवं प्रतिवेदन :** अभिलेख एवं प्रतिवेदन के आधार पर भी विक्रयकर्ता पर नियन्त्रण रखा जा सकता है। उनसे विभिन्न प्रकार के प्रतिवेदन मांगे जा सकते है। यह प्रतिवेदन आदेश, कुल विक्रय, नये ग्राहक, खोये हुए ग्राहक, छूट, व्यय आदि के सम्बन्ध में हो सकते है। इस प्रकार के प्रतिवेदनों एवं संस्था के अभिलेखों से विक्रयकर्ता की कार्यकुशलता का पता लगा सकते हैं और यदि उसमें कमियां या दोष हैं तो उनको दूर करने के लिए आवश्यक कदम उठाये जा सकते हैं। इस प्रकार इनके आधार पर विक्रयकर्ता की गतिविधियों पर नियन्त्रण रखा जा सकता है।

विक्रयकर्ताओं के कार्यों के मूल्यांकन की विधियाँ

(Methods of Apparaising Salesmen's Performance)

विक्रयकर्ताओं के कार्यों के मूल्यांकन की कई विधियाँ हैं जिनमें से प्रमुख अग्रलिखित हैं :

1. **विक्रय विवरण :** विक्रयकर्ता द्वारा प्रतिवेदनें दी जाती हैं। इन प्रतिवेदनों का विश्लेषण करके विक्रय की मात्रा निकाली

जा सकती है और फिर इस विक्रय मात्रा की पिछली बिक्री से तुलना कर सकते हैं। यदि इसमें कमी है तो सुधारने के लिए कह सकते हैं। इसके विपरीत यदि बिक्री अच्छी हैं तो विक्रयकर्ता को पदोन्नति देकर या उसका पारिश्रमिक बढ़ाकर प्रोत्साहित दिया जा सकता है।

2. **विक्रय कोटा :** वास्तव में विक्रयकर्ताओं के कार्यों का मूल्यांकन करने का यह बहुत ही प्रचलित तरीका है। इसमें विक्रयकर्ता की बिक्री की तुलना उसके लिए निर्धारित कोटे से की जाती है। जिसे प्रबन्धक के द्वारा प्रोत्साहित किया जा सकता है।

3. **लाभ-हानि विवरण :** एक विक्रयकर्ता के कार्यों का मूल्यांकन उसके क्षेत्र के लाभ-हानि विवरण के आधार पर भी कर सकते हैं। यदि किसी विक्रयकर्ता के क्षेत्र में लाभ कम है और दूसरे विक्रयकर्ता के क्षेत्र से अधिक है तो कम लाभ वाले क्षेत्र के विक्रयकर्ता को सुधारने के लिए कह सकते हैं।

4. **विक्रय व्यय अनुपात :** विक्रय व्ययों के अनुपात को भी मूल्यांकन के लिए आधार बनाया जा सकता है। जिन विक्रयकर्ताओं का विक्रय व्यय अनुपात अन्य विक्रयकर्ताओं से कम है वे कुशल विक्रयकर्ता हैं जबकि अन्य उनकी तुलना में कम कुशल। ऊँचा विक्रय व्यय अनुपात होने की स्थिति में ऐसे विक्रयकर्ताओं से विक्रय बढ़ाकर विक्रय व्यय अनुपात को घटाने के लिए कहा जा सकता है या विक्रय मात्रा कम न होने देते हुए विक्रय व्यय घटाने के लिए कह सकते हैं।

5. **ग्राहकों की राय :** ग्राहकों की राय के आधार पर विक्रयकर्ताओं के कार्यों का मूल्यांकन किया जा सकता है। यदि ग्राहकों द्वारा किसी विक्रयकर्ता की प्रशंसा की जाती है तो यह माना जाता है कि वह अपना कार्य ठीक प्रकार से कर रहा है।

6. **व्यक्तिगत अवलोकन :** संस्था के अधिकारियों के द्वारा स्वंय जो अवलोकन किया गया है उसको ही आधार मानकर विक्रयकर्ताओं के कार्यों का मूल्यांकन कर सकते हैं। वास्तव में इस ढंग का उपयोग अन्य ढंगों के सम्मिश्रण के साथ किया जाता है।

विक्रयकर्ताओं पर नियन्त्रण के लाभ

विक्रयकर्ताओं पर नियन्त्रण रखने से संस्था, विक्रयकर्ता एवं ग्राहक सभी को लाभ मिलते हैं जो इस प्रकार हैं :

संस्था को लाभ

1. **उचित मूल्यांकन :** विक्रयकर्ताओं पर नियन्त्रण रखने से उनके कार्यों का उचित मूल्यांकन किया जा सकता है और यह पता लगाया जा सकता है कि वे दिये गये कार्यों को उचित प्रकार से कर रहे हैं अथवा नहीं।

2. **गलत कार्यों पर रोक :** विक्रयकर्ताओं पर नियन्त्रण होने से वे गलत कार्य नहीं करते हैं। इस प्रकार गलत कार्यों पर रोक लग जाती है।

3. **प्रोत्साहन :** विक्रयकर्ताओं पर नियन्त्रण उनको कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करता रहता है जिससे व्यवसाय की बिक्री होती रहती है।

4. **अनावश्यक व्ययों पर नियन्त्रण :** नियन्त्रण अनावश्यक व्ययों पर रोक लगाता है जिससे विक्रयकर्ता के व्ययों में कमी आती है और व्यवसाय के कुल व्ययों में भी कमी होती है।

5. **विक्रय नीति के अनुरूप निर्देशन :** एक व्यवसायी को विक्रयनिति के अनुरूप निर्देशन करने में नियन्त्रण सहायता करता है और सभी विक्रयकर्ताओं को एक-से निर्देश देने की व्यवस्था करता है।

6. **विक्रय व द्धि :** नियन्त्रण से कुल बिक्री बढ़ती है जिससे व्यवसाय के लाभ बढ़ते हैं।
7. **ग्राहकों को अच्छी सेवा :** उचित नियन्त्रण व्यवस्था होने से ग्राहकों को शिकायत करने का अवसर नहीं मिलता है। साथ ही यदि वे किसी प्रकार शिकायत भी करते हैं तो इनके समाधान के लिए तुरन्त कार्यवाही की जाती है।
8. **विक्रयकर्ताओं के आपसी मतभेदों में कमी :** विक्रयकर्ताओं पर नियन्त्रण इनके आपसी मतभेदों व झगड़ों को रोकता है तथा उनमें कमी करता है जिससे उनको एवं संस्था दोनों को लाभ होता है।

विक्रयकर्ता को लाभ

1. **आय व द्धि :** नियन्त्रण होने से विक्रयकर्ता बराबर काम में लगा रहता है। यदि उसको पारिश्रमिक बिक्री पर कमीशन या बोनस आदि के आधार पर दिया जाता है तो उसकी बिक्री बढ़ने के साथ-साथ उसकी आय में भी व द्धि हो जाती है।
2. **उचित कार्य करने की आदत :** इससे विक्रयकर्ताओं में उचित कार्य करने की आदत पड़ती है जो उसका सामाजिक स्तर ऊपर उठाने में सहायता करती है।

ग्राहक को लाभ

अच्छी सेवा - नियन्त्रण होने से विक्रयकर्ता अच्छी सेवा प्रदान करता है। शिकायत का अवसर नहीं देता है। यदि शिकायत होती भी है तो उसका तुरन्त समाधान हो जाता है।

उपयोगी प्रश्न

(Useful Questions)

1. विक्रय कर्मचारियों के उन प्रतिवेदनों की व्याख्या कीजिए जिनके द्वारा उनकी क्रियाओं पर नियन्त्रण रखा जा सकता है।
2. विक्रयकर्ता के नियन्त्रण से आप क्या समझते है? नियन्त्रण की विधि समझाइये।
3. विक्रय निरिक्षण के उद्देश्यों एवं विभिन्न विधियों का विवेचन कीजिए।
4. विक्रेता नियन्त्रण से क्या आशय है? इसके आधार तथा महत्त्व को समझाइए।
5. विक्रेता नियन्त्रण की प्रक्रिया को समझाइये।

अध्याय - 23
विक्रय बजट
(Sales Budget)

वैसे तो सरकारी क्षेत्र में राज्य की आय एवं व्यय की जानकारी करने हेतु बजट प्राचीनकाल से ही बनते रहे हैं, लेकिन औद्योगिक क्षेत्र में बजट नियन्त्रण एक नवीन प्रयोग ही है। निश्चित भावी समय के लिए सम्भवित आय तथा व्ययों का वर्णन ही व्यावसायिक क्षेत्र में बजट कहा जाता है। इसी प्रकार एक व्यक्ति अपनी आय और व्यय में सन्तुलन का प्रयास करता है। अतः जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में चाहे सर्वाजनिक हो या निजी या औद्योगिक, बजट तैयार करना अत्यन्त आवश्यक होता है। अतः बजट प्रबन्ध का एक उपकरण है न कि उनका स्थानापन्न।

बजट का अर्थ
(Meaning of Budget)

साधारण शब्दों में, भावी आवश्यकताओं की एक निश्चित अवधि के लिए पूर्वानुमान करने को ही बजट कहा जाता है। बजट एक योजना होती है, जिसके निश्चित उद्देश्य होते हैं और उद्देश्यों के निर्माण के लिए वित्तीय मान्यताओं को आधार माना जाता है। इस प्रकार बजट भावी व्यावसायिक क्रियाकलापों के परिणामों एवं घटनाओं का एक ऐसा नियोजित पूर्वानुमान हैं जो भूतकाल की योजनाओं एवं परिणामों के आधार पर तैयार किया जाता है। बजट में सम्मिलित क्रियाओं को मुद्रा में व्यक्त किया जाता है अर्थात् व्यवसाय की निश्चित अवधि की आयों, व्ययों प्राप्तियों एवं लागतों को बजट में व्यक्त किया जाता है। ब्लॉकर (Blocker) ने बजट को साधनों में श्रेष्ठतम संयोग की अनुसूची माना है। बजट की प्रमुख परिभाषाएँ इस प्रकार है :

"बजट भविष्य में एक निश्चित अवधि के लिए वित्तीय प्रारूप में संस्था की योजना का वितरण है।" **— जें. एफ. वेस्टन**

बजट विविध पूर्व निर्धारित सम्बद्ध मान्याताओं पर आधारित उद्देश्यों की उपलब्धि के लिए सम्पन्न की जाने वाली क्रियाओं की योजना होती है।" **— केलर**

आदर्श परिभाषा :

बजट एक ऐसा मापदण्ड है जो संस्था की कार्यक्षमता व व्यावसायिक क्षमता की जानकारी के लिए तैयार किया जाता है तथा जो भूत, वर्तमान एवं भविष्य को श ंखलाबद्ध करता है। वास्तव में बजट, व्यवसाय की नीति निर्धारण की आधारशिला होता है। बजट नीतियों को व्याख्या करता है, जिसके आधार पर निश्चित लक्ष्यों की उपलब्धि की जाती है। बजट में मौद्रिक एवं वित्तीय पक्षों को समन्वित किया जाता है और व्यवसाय के लिए निर्धारित उद्देश्यों से सम्बन्ध स्थापित किया जाता है।

स्पष्ट है कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में चाहे, सार्वजनिक हो या निजी या औद्योगिक, बजट तैयार करना अत्यन्त आवश्यक होता है। अतः "बजट प्रबन्ध का एक उपकरण हैं न उसका स्थानापन्न।"

विशेषताएँ :

बजट की प्रमुख विशेषाताएँ निम्नवत् हैं :

(i) बजट एक निश्चित अवधि के लिए तैयार किया जाता है तथा यह उस अवधि के प्रारम्भ होने के पूर्व ही बना लिया जाता है।

(ii) बजट निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने की द ष्टि से तैयार किया जाता है तथा यह भावी अवधि से सम्बन्धित होता है।

(iii) यह एक वित्तीय तथा/अथवा परिमाणात्मक विवरण है, जिसमें मौद्रिक इकाइयों के अतिरिक्त सामग्री, माल की मात्रा, संख्या आदि भी व्यक्त की जा सकती है।

(iv) यह निर्धारित नीति का पालन करते हेतु तैयार किया जाता है।

(v) बजट अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन अवधि का होता है। अल्पकालीन अवधि 1 माह से 3 माह की होती है, जबकि दीर्घकालीन अवधि 1 वर्ष से 3 वर्ष तक की होती है।

"बजटरी नियन्त्रण प्रबन्ध का एक महत्त्वपूर्ण उपकरण है। यह वस्तुतः नियोजन का एक साधन है जो समन्वय एवं नियन्त्रणके माध्यम से तीन पहुलओं (नियोजन, समन्वय एवं नियन्त्रण) में द ढ़ सम्बन्ध स्थापित करता है। विशिष्ट नियोजन की व्यवस्था तथा संचालन सम्बन्धी समस्याओं के पूर्वाभास के फलस्वरूप बजटरी नियन्त्रण समय से पूर्व ही विचार करने की प्रेरणा प्रदान करता है। **— नाइल्स**

बजट नियन्त्रण का आशय निर्धारित प्रमापों या लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु अपनाई कई कार्य-विधि पर नियन्त्रण करना है। बजट-नियन्त्रण के अन्तर्गत परिस्थितियों का विश्लेषण किया जाता है। व्यवसाय के क्रियाकलापों को निर्धारित किया जाता है तथा इच्छित उद्देश्य की उपलब्धि हेतु प्रबन्ध नियन्त्रण में सहायता प्रदान की जाती है। टैरी (Terry) के अनुसार, "बजट एक साधन है, तथा बजट नियन्त्रण उसका अन्तिम परिणाम है।"

विशेषतायें :

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर बजट नियन्त्रण की विशेषातायें निम्नवत् हैं :

(i) बजटों का स्थापन, प्रत्येक प्रबन्ध में उत्तरदायित्व को निर्धारित करने हेतु प्रत्येक कार्य के लिए बजट तैयार किया जाता है। इसके पश्चात् कार्यात्मक बजटों की समन्बित किया जाता है ताकि व्यापार का मास्टर बजट तैयार किया जा सकें।

(ii) वास्तविक निष्पादन का मापन करना।

(iii) वास्तविक परिणामों की बजट में निहित लक्ष्यों से निरन्तर तुलना कर प्रत्येक विभाग की क्रियाओं पर नियन्त्रण रखना।

(iv) बजट अंकों से वास्तविक अंकों के अन्तर के कारणों का विश्लेषण करना तथा विभिन्न उत्तरदायित्वों का निर्धारण करना।

(v) परिवर्तित परिस्थितियों में बजट में आवश्यक संशोधन एवं समायोजन करना।

(vi) यदि आवयक हो तो परिस्थितियों के अनुसार उपचार की अविलम्ब व्यवस्था करना।

विक्रय बजट

(Sales Budget)

कार्यानुसार बजट, वह बजट है जो किसी व्यवसाय के एक विशेष कार्य से सम्बन्धित होता है, जैसे उत्पादन बजट, विक्रय

बजट आदि। कार्यानुसार बजट प्रत्येक कार्य के आधार पर तैयार किये जाते हैं। इसके पश्चात् सभी बजटों का समन्वय करके मास्टर बजट तैयार किया जाता है।

विक्रय बजट, बजट अवधि की कुल बिक्री की भविष्यवाणी या पूर्वानुमान है जो कि मात्रा तथा/या मूल्यों में व्यक्त की जाती है। विक्रय बजट अधिकांश संस्थाओं में बजटरी नियन्त्रण का प्रारम्भिक बिन्दु (Commencement point) होता है। इसका कारण यह है कि बिक्री प्रायः मूल कारक होती है जो संस्था की अन्य सभी क्रियाओं को प्रभावित करती है। सम्भवतः बिक्री का पूर्वानुमान लगाना सबसे अधिक कठिन कार्य है, तो भी इस विक्रय बजट की शुद्धता पर संस्था की पूर्ण बजट पद्धति की सफलता निर्भर करती है। यह बजट, यह संकेत प्रदान करता है कि निश्चित अवधि में कौन-सी वस्तु या उत्पाद (product) कितनी मात्रा में और किस मूल्य पर बेचा जायेगा।

विक्रय बजट का निर्माण : इस बजट को तैयार करने का पूर्ण उत्तरदायित्व बिक्री विभाग के प्रबन्धक का होता है लेकिन उसके कार्य में बजट आफीसर, लेखा-पाल, विक्रेतागण, बाजार अनुसन्धान विशेषज्ञ आदि सहयोग प्रदान करते हैं। विक्रय प्रबन्धक इस बजट को तैयार करते समय महत्वपूर्ण बातों पर विचार करता है, जो अग्र प्रकार हैं :

1. **विगत विक्रय ऑकड़े तथा प्रवित्तियाँ (Past Sales Figures and Trends) :** विक्रय बजट बनाने वाले व्यक्ति को विगत विक्रय आँकड़ों के रेखाचित्र तथा सामान्य बिक्रय प्रव त्ति के चित्र प्राप्त होने चाहिए। बिगत वर्ष की बिक्री के लेखे भावी विक्रय के विश्वसनीय आधार होते हैं क्योंकि विगत निष्पादन वास्तविक व्यवसायिक परिस्थितियों पर निर्भर करता है। लेकिन विगत विक्रय के साथ-साथ, अन्य घटक भी विक्रय पर प्रभाव डालते हैं जैसे मौसमी परिवर्तन, बाजार का विकास व्यवसाय चक्र आदि, अतः विक्रय बजट बनाने में उनको ध्यान में रखना चाहिए।
2. **विक्रय एजेन्टों का प्रतिवेदन :** विक्रय एजेन्ट ग्राहकों के प्रत्यक्ष सम्पर्क में आते हैं जिनके कारण वे ग्राहकों की रुचि, आदत एवं प्रतियोगिता द्वारा विज्ञापन के तरीके, भावी विक्रय प्रव त्ति आदि बातों के बारे में जानकारी रखते हैं। इस प्रकार वे विक्रय प्रबन्धक को पर्याप्त सामग्री प्रदान करते हैं।
3. **सम्भावित बाजार का विश्लेषण :** वस्तु की माँग का सम्भावित बाजार ज्ञात करने के लिए बाजार अनुसन्धान किये जाने चाहिए। इससे उपभोक्ता की क्रयशक्ति, आदत, प्रतिस्पर्द्धा की सम्भावनाएँ, वस्तु का डिजाइन, कितना मूल्य वसूल किया जाये, आदि की जानकारी हो जाती है।
4. **व्यापारिक सम्भवनाएँ :** व्यापारिक सम्भावनाओं की जानकारी राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं से ज्ञात होती है। राजनैतिक या आर्थिक परिस्थितियों में होने वाले परिवर्तनों का विक्रय पर प्रभाव पड़ता है, जैसे सरकार सार्वजनिक विकास पर अधिक धन व्यय करे या वस्तुओं पर नये कर लगाये, तो बिक्री प्रभावित होगी।
5. **संस्था की नीति :** व्यापारिक संस्था की नीति तथा तरीकों में यदि कोई परिवर्तन किया जाये, जैसे कोई नया उत्पाद निर्माण करे, या विज्ञापन करने के नये तरीकों का उपयोग, वितरण प्रणाली में सुधार आदि तो, विक्रय बजट प्रभावित होगा।
6. **विशेष परिस्थितियाँ :** कभी-कभी किसी व्यवसाय की बिक्री विशेष परिस्थितियों से प्रभावित हो सकती है, जैसे किसी औद्योगिक नगर का विकास हाने से वाहनों (कार, स्कूटर, साइकिल आदि) की मांग अधिक होगी; अतः इनसे सम्बन्धित व्यवसायों की बिक्री प्रभावित होगी।
7. **संयन्त्र क्षमता :** संयन्त्र क्षमता के उचित प्रयोग को सुनिश्चित करने का प्रयास चाहिए। विक्रय बजट कारखाने में सन्तुलित उत्पादन की सुविधा प्रदान करता है।

8. **वित्तीय क्षमता :** संस्था की वित्तीय क्षमता की सीमा का ध्यान रखते हुए विक्रय बजट तैयार करना चाहिये।

9. **प्रतियोगिता (Competition)** - बिक्रय बजट बनाने में उद्योग में विद्यमान प्रतियोगिता का अभाव तथा मात्रा को ध्यान में रखना चाहिए ताकि प्रतिस्पर्द्धा के होते हुए भी एक वास्तविक विक्रय बजट बनाया जा सके।

विक्रय प्रबन्धक को इन सभी तत्वों को ध्यान में रखकर मात्रा तथा मूल्य के रूप में विक्रय बजट बनाना चाहिए तथा उत्पादों, अवधियों तथा क्षेत्रों हेतु विक्रय अनुमानों का विश्लेषण करना चाहिए। विक्रय बजट में कुल विक्रय राशि के अनुमान के अतिरिक्त विक्रय तथा वितरण व्ययों के अनुमान को भी शामिल करना चाहिए।

10. **कच्ची सामग्री तथा अन्य पूर्तियों की उपलब्धता (Availability of Raw Materials and other Supplies) :** विक्रय अनुमानों से पूर्व सामग्री तथा अन्य पूर्तियों की समुचित उपलब्धता के प्रति आवश्वस्त होना आवश्यक है। अगर कच्ची सामग्री का अभाव हो तो विक्रय अनुमानों को सामग्री की उपलब्धता के अनुरूप व्यवस्थित करना होगा।

11. **सामान्य व्यापारिक सम्भावनाऐं (General Trade Prospects) :** विक्रय के कम या ज्यादा होने की बात बहुत कुछ सामान्य व्यापारिक संभावनाओं पर अश्रित हो। इस संदर्भ में Economics Times, The Financial Express, Commerce आदि पत्रिकाओं तथा समाचार पत्रों के माध्यम से उपलब्ध उपयोगी सूचनाऐं एकत्र की जा सकती है।

12. **हस्तगत आर्डर्स (Orders of hand) :** व्यापारिक तेजीकाल में तथा जब उत्पादन प्रक्रिया काफी लम्बी हो, तो हाथ में विद्यमान आदेशों की मात्रा बजट अवधि में बिक्री का अनुमान लगाने में काफी सहायक सिद्ध होती है।

13. **मौसमी उतार चढ़ाव :** विक्रय की रचना में, मौसमी उतार चढ़ाव विचारणीय है क्योंकि इन परिवर्तनों से बिक्री प्रभावित होती है। उत्पादन के प्रवाह हेतु प्रयास यही रखना चाहिये कि बिक्री पर मौसमी उतार चढ़ावों का प्रभाव कम से कम रहे ऐसा गैर मौसमी विशेष छूट या अन्य आकर्षण प्रदान करके संभव हो पाता है।

विक्रय बजट बनाने का उद्देश्य
(Objects of Preparing Sales Budget)

विक्रय बजट बनाने का प्रमुख उद्देश्य संस्था के अन्य विभागों से सम्बन्ध व समन्वय स्थापित करना होता है। संस्था के अन्य विभागो का विक्रय विभाग से सम्बन्ध होने के कारण इस विभाग की क्रियाओं को इस प्रकार संचालित एवं समन्वित किया जाता है कि संस्था के विस्त त उद्देश्यों की पूर्ति हो सके तथा लागतों पर प्रभावकारी नियन्त्रण स्थापित हो सके। विक्रय बजट बनाने के प्रमुख उद्देश्य निम्न हैं :

1. **भविष्य के लिए नियोजन (Planning for Future) :** वर्तमान युग नियोजन का युग है। प्रत्यक उत्पादक अपने उत्पादन का विक्रय होने की अपेक्षा रखता है ताकि उसे समुचित लाभ की प्राप्ति हो सके जिससे संस्था का विकास एवं विस्तार संभव होता है। अतः व्यवसाय के प्रबन्धक विक्रय बजट बनाकर उसमें ऐसा नियोजन करते हैं कि उन्हें विक्रय सम्बन्धी लक्ष्यों की प्राप्ति हो सके। इस नियोजन में विक्रय लक्ष्यों को निर्धारित करके उन्हें प्राप्त करने की विधियों तथा तकनीकों के प्रयोग सम्बन्धी योजना तैयार की जाती है।

2. **विक्रेताओं की दिशा निर्देश (Guidance for Salesman) :** विक्रय बजटों का दूसरा उद्देश्य यह होता है कि विक्रेताओं को ऐसे दिशा निर्देश दिये जाएँ जिनसे उन्हें अपनी लक्ष्य प्राप्ति में कोई बाधा न आए और उनका कार्य निर्बाध गति से चलता रहे। इसमें उन्हें यह बताया जाता कि उन्हें क्या करना है? तथा कैसे करना है? तथा किसे करना है?

3. **नीति निर्धारण करने में सहायता (To help in Policy Formation) :** विक्रय बजट निर्मित होने से प्रबन्धकों को विक्रय नीति निर्धारण में भी सहायता प्राप्त होती है।

4. **व्यय पर नियन्त्रण (Control on expenses) :** विक्रय बजट द्वारा विक्रय तथा विज्ञापन पर होने वाले व्ययों को नियन्त्रित किया जाता हे। इसमें प्रावधान किया जाता है कि विक्रय तथा विज्ञापन पर कितना व्यय किया जा सकता है। इसके साथ-साथ विक्रय व्ययों पर नियन्त्रण करने के लिए नियम भी तय किए जाते हैं।

5. **मितव्ययता लाना (To be economical) :** वास्तविक व्यय सम्बन्धी सभंकों की तुलना बजट के अनुमानित सभंको से करने पर व्यवसायी की तुरन्त पता लग जाता है कि कहाँ पर आवश्यकता से अधिक व्यय हुए हैं तथा कहाँ पर आवश्यक व्यय नहीं हुआ। इसके निष्कर्षों के आधार पर दिशा निर्देश जारी करके मित्तव्ययता बरतने पर बल दिया जाता है।

6. **धन की आवश्यकता का पता लगाना (To know the requirment ofFinancial resources) :** विक्रय बजट बनाने से प्रबन्धकों को विक्रय के लिए कितने धन की आवश्यकता होगी ? उसका पता चल जाता है जिसके लिए आवश्यक प्रबन्ध व्यवस्था की जा सकती है।

7. **कुशलता व अकुशलता का ज्ञान (To know the position of efficiency or inefficeincy) :** विक्रय बजट में लक्ष्य निर्धारित होने से यह पता किया जा सकता है कि कौन से विक्रेता अपना कार्य कुशलता पूर्वक कर रहे हैं तथा कौन से नहीं।

8. **सुधारात्मक कार्यवाही (Remedial Actions) :** विक्रयकर्ताओं के कार्यों में कमी रहने पर प्रबन्धकों द्वारा सुधारात्मक उपाय किए जा सकते हैं ताकि भविष्य में उनकी पुनराव ति न हो। विक्रय बजटों से क्षेत्रवार कमियाँ ज्ञात हो जाती हैं जिन्हें दूर करने के उपाय किए जाते हैं।

9. **प्रशासन में सहायता (Help in Administration) :** बजट प्रशासन की आंखे हैं। इसके द्वारा वे विक्रय पर हमेशा द ष्टि रखते हैं तथा प्रशासन सुचारु से चलाने में बजट सदा सहायक होते हैं।

प्रभावकारी बजटिंग की आवश्यक तत्त्व

(Essentials of an Effective Budgeting System)

1. विक्रय बजट कार्यक्रम का उच्चस्तरीय प्रबन्ध द्वारा समर्थन होना चाहिए।
2. विक्रय बजट निर्माण में कुशल व्यक्तियों के सहयोग की आवश्यकता होती हैं।
3. बजट सम्बन्धी व्यावसायिक नीति निश्चित तथा स्पष्ट होनी चाहिये।
4. बजट प्रस्ताव वास्तविकता के सन्निकट होना चाहिए।
5. बजट निर्माण में क्रमबद्धता होनी चाहिए।
6. बजट के लिए भूतकाल के आंकड़ों का समावेश आवश्यक है।
7. बजटिंग पद्धति मित्तव्ययी हो।

विक्रय बजटों के लाभ

(Advantages of Sales Budgets)

विक्रय बजट प्रबन्ध को नियोजन, समन्वय तथा नियन्त्रण सम्बन्धी क्रियाओं में सहयोग प्रदान करना प्रमुख उद्देश्य होता

है। इसके द्वारा ऋणात्मक विचलनों को रोका जा सकता हैं तथा भावी क्रिया कलापों में पूर्ण सहयोग प्रदान करता है। अतः विक्रय बजट विक्रय प्रबन्धकों के लिए पथ प्रदर्शक एवं उपकरण के रूप में कार्य करता है। इसके लाभ निम्नांकित है :

1. **सुव्यवस्थित नियोजन (Well Arranged Planning) :** विक्रय बजट विक्रय सम्बन्धी अनिश्चिताओं को निश्चितता में परिवर्तित करता है। इससे प्रबन्ध को व्यय तथा वित्त प्राप्त करने की सुव्यवस्थित दीर्घकालीन व अल्पकालीन योजनाएँ प्राप्त होती है।
2. **क्रियाओं में समन्वय एवं सहयोग (Coordinationa & Cooperation among Activities) :** विक्रय बजट के निर्माण में सम्बन्धित विभागों को सहयोग करना पड़ता है। अतः उनमें परस्पर सहयोग और समन्वय की भावना विकसित होती है।
3. **कुशलता एवं मित्तव्ययता (Efficiency & Economy) :** बजट निर्मित होने से वास्तविक आंकड़ो की तुलना अनुमानित आंकड़ों से संभव होती है। इससे विपरीत विचलन प्राप्त होने पर मित्तव्ययता तथा कुशलता बरतने की सलाह दी जाती है।
4. **लागत नियन्त्रण (Cost Control) :** विक्रय बजट के परिणामों के आधार पर प्रबन्धक लागतों को नियन्त्रित करने के दिशा निर्देश जारी कर सकते हैं।
5. **कर्माचारी मूल्यांकन में सहायक (Helpful inevaluating the performance of employees) :** बजट नियन्त्रण द्वारा विभिन्न कर्मचारियों एवं अधिकारियों को अपने-अपने कार्यों मं सफलता एवं असफलताओं का मूल्यांकन करना सम्भव होता है जिसके आधार पर इनको पदों पर पदारूढ़ करना सम्भव होता है।
6. **वित्तव्यवस्था :** इसके द्वारा समय से पूर्व ही निश्चित हो जाता है कि संस्था को किस समय और कितनी धन-राशि की आवश्यकता होगी।
7. **साधनों का श्रेष्ठतम उपयोग (Best use of resources) :** विक्रय बजट बन जाने से उपलब्ध साधनों का सही स्थान पर सही तरीके से उपयोग संभव होता है।
8. **विक्रय लक्ष्यों का निर्धारण (Fixation of Sales Targets) :** विक्रय बजटों के अर्न्तगत विक्रेताओं के विक्रय लक्ष्य निर्धारित हो जाते हैं जिनका ज्ञान होने से विक्रेता अपने विक्रय क्षेत्रों में जाकर लग्न तथा परिश्रम के आधार पर पूरा करने का प्रयत्न करते हैं।
9. **सुधारात्मक उपाय संभव (Remedial Actions Possible) :** जब तक किसी कार्य सम्बन्धी कमियों का ज्ञान नहीं हागा उनके सुधार संभव नहीं होते है। अतः विक्रय बजट कार्यों में रहने वाली कमियों को इंगित करके उनमें सुधारात्मक कार्यवाही को संभव बनाते हैं।

विक्रय बजटों की सीमाएँ
(Limitations of sales Budges)

1. विक्रय बजट अनुमानों पर आधारित हाते हैं।
2. 'परिवर्तन न चाहने' के कारण कर्मचारियों द्वारा विरोध।
3. विक्रय बजट मात्र के बन जाने से लक्ष्यों की पूर्ति नहीं।

4. विक्रय बजट विक्रय की लागत बढ़ाते हैं।
5. बजटों में आंशिक शुद्धता ही पायी जाती है।

उपयोगी प्रश्न
(Useful Questions)

1. विक्रय बजट से क्या आशय है? इसके निर्माण में कौन-कौन सी महत्त्वपूर्ण बातों को ध्यान में रखा जाता है ?
   What is Budget ? what consderations are kept into mind while preparing sales Budget.
2. बजट क्या होता है? विक्रय बजट के उद्देदश्य बताऐं।
   What is Budget ? Explain the objects of sales Budget.
3. एक प्रभावकारी बजटिंग प्रणाली में कौन से आवश्यक तत्त्व होते हैं? विक्रय बजट के गुण तथा सीमाओं का वर्णन करें।
   What are the requisites or essentials of an effective Budgeting system? Explain the advantages & limitation of sales Budget.

अध्याय - 24
विक्रय कोटा या विक्रय अभ्यंश
(Sales Quota)

"विक्रय कोटा एक परिमाणात्मक लक्ष्य है, जिसे एक विशिष्ट विपणन इकाई, जैसे विक्रयकर्ता या क्षेत्र को दिया जाता है।"
— कंडिफ वस्टिल

कोटा का अर्थ एवं परिभाषाएँ

प्रत्येक उपक्रम या व्यावसायिक उपक्रम अपने संगठन के विस्त त उद्देश्य निर्धारित करता है। जिनमें से अधिकतम विक्रय भी एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य होता है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए उपक्रम के प्रबन्धकों द्वारा विक्रेताओं के तथा विक्रय क्षेत्रों के लिए विक्रय लक्ष्य निर्धारित किये जाते हैं। इन विक्रय लक्ष्यों की प्राप्ति का एक प्रभावी उपाय विक्रय अभ्यंश या कोटा होता है।

किसी वैयक्तिक विकयकर्ता, विक्रेता विक्रय ईकाई या विक्रय क्षेत्र के सामयिक विक्रय लक्ष्य निर्धारित करना विक्रय कोटा या विक्रय अभ्यंश कहलाता हैं दूसरे शब्दों में विक्रय लक्ष्यों का वह भाग, जो विक्रेता, मध्यस्थ या किसी विक्रय क्षेत्र को निश्चित समावधि में प्राप्ति के लिए सौंपा जाता है विक्रय कोटा या अभ्यंश कहलाता है। विक्रय कोटा विक्रय प्रत्याय या वस्तु के पारिमाण या शुद्ध लाभ की मात्रा में निर्धारित किया जा सकता है।" विक्रय कोटा की परिभाषाएँ विद्वानों ने निम्न प्रकार से दी हैं :

जे. आर. डॉबरमैन के अनुसार, "विस्त त शाब्दिक अर्थ में कोटा, यथाचित रूप में अपेक्षित एक निष्पादन है। विशेषतः यह विक्रय की वह अनुमानित मात्रा है, जिसे पूर्व निश्चित समय में एक उद्देश्य के रूप में प्राप्त किया जाता है।"

फिलिप कोटलर के अनुसार, "विक्रय कोटा किसी उत्पाद पंक्ति, कम्पनी संभाग अथवा विक्रय प्रतिनिधि के लिए निर्धारित विक्रय लक्ष्य है। यह प्राथमिक रूप से विक्रय प्रयास की व्याख्या का एक प्रबन्धकीय उपकरण है।"

विक्रय कोटा सम्बन्धी अवधारणायें
(Concepts Regarding Sales Quotas)

विक्रय कोटे के सम्बन्ध में तीन विचारधाराएँ प्रचलित है :

1. **उच्च अभ्यंश विचारधारा :** इस विचारधारा के अनुसार विक्रयकर्ताओं, वितरक या डीलर के प्रयासों में निरन्तरता लाने के लिए विक्रय कोटा हमेशा ऊँचा रखना चाहिये ताकि उनका लक्ष्य उनके लिए दीर्घकाल तक चुनौतीपूर्ण बना रहे।
2. **सन्तुलित कोटा विचारधारा (Modest Quota Concept) :** विक्रयकर्ताओं या विक्रेताओं, वितरक या डीलरों में आत्मविश्वास उन्नत करने के लिए तथा उन्हें निर्धारित कोटे से अधिक कार्य करने को प्रेरित करने के लिए विक्रय अभ्यंश या कोटे की मात्रा इतनी हो कि वे उसे प्राप्त करने में आसानी से सफल हो जायें।

3. **क्रमिक परिवर्तनशील कोटा विचारधारा (Gradually variable Quota concept) :** विक्रय कोटा सन्तुलित होना चाहिए किन्तु उसमें परिस्थिती और समयानुसार पवितर्तित करने की सम्भावना रहगी चाहिए। इस विचारधारा के अनुसार विक्रयकर्ता या विक्रेता कोटे के ऊँचा होने पर उसे प्राप्त करने में असफल हो जाने के कारण हताश हो जाते हैं कुछ समय के बाद यही कोटा उन्हें छोटा लगने लगता है। अतः प्रारम्भ में कोटा सन्तुलित हो जिसमें परिवर्तन सम्भावित रहना चाहिए। इसके अन्तर्गत एव विक्रेता का कोटा प्रतिवर्ष के सम्भाव्य ब द्धि के अनुरूप धीरे-धीरे बढ़ाया जाता रहना चाहिये।

विक्रय कोटा की विशेषताएँ

(Features or Elementsor Charactesictics of Sales Quota)

1. विक्रय कोटे का सम्बन्ध निश्चित समय से होता है।
2. विक्रय कोटे प्रबन्धकीय नियन्त्रण का साधन है।
4. विक्रय कोटे संस्था के सम्पूर्ण विक्रय अनुमान का एक भाग होता है।
5. विक्रय कोटा विक्रय पूर्वनुमानों पर आधारित होता है
6. विक्रय कोटा विक्रय लक्ष्य है।
7. विक्रय कोटा **परिमाणात्मक लक्ष्य** होते हैं।
8. विक्रय कोटे का निर्धारण **विशिष्ट विक्रय संगठनात्मक** इकाइयों जैसे विक्रेता, मध्यस्थ, शाखा आदि के लिए निर्धारित किया जाता हैं।
9. विक्रय कोटा विक्रेताओं के कार्य मूल्यांकन में **प्रमाप के रूप में प्रयोग** होते हैं।
10. विक्रय कोटे **बाजार अध्ययनों के आधार पर निर्धारित** होते है।
11. विक्रय कोटे की **सफलता शुद्ध व सही सूचनाओं पर निर्भर** करती है।
12. विक्रय कोटा **उच्च संगठनात्मक स्तरों पर** विक्रय प्रदेशों के लिए निर्धारित होते हैं जिन्हें बाद में जिला स्तर पर या वैयक्तिक विक्रय कर्मचारियों को सौंपा जाता है।
13. कोटा निर्धारण में उच्च निर्णय क्षमता व प्रशासनिक कौशल की आवश्यकता होती है जिसके लिए पूर्ण बाजार ज्ञान भी आवश्यक है।

विक्रय कोटा निर्धारित करने की आवश्यकता या उद्देश्य

(Objectives or Need for Assigning Sales Quota)

विक्रय कोटा विक्रयकर्ताओं को अधिक कार्य करने की प्रेरणा देने का साधन है। विक्रय कोटा निर्धारित कर देने से लक्ष्यों को प्राप्त करने में सफलता प्राप्त होती है। यह एक ऐसा प्रमाप है जिसकी विक्रेताओं या अन्य विपणन इकाईयों से अपेक्षा की जाती है। निम्नांकित शीर्षकों से इसके महत्त्व को दर्शाया जा सकता है :

1. **कर्त्तव्यों व अधिकारों का निर्धारण (Determination of Duties and Rights) :** विक्रय कोटा निर्धारित होने से विक्रेताओं तथा अन्य विपणन इकाईयों को अपने कर्त्तव्यों व अधिकारों का बोध हो जाता है। उनमें किसी प्रकार का कोई भ्रम उत्पन्न नहीं होता। इसके निर्धारण से विक्रेताओं, विक्रय विभाग आदि के अधिकारों एवं दायित्त्वों को आसानी से निर्धारित किया जा सकता है तथा वे इनका स्वतन्त्रतापूर्वक प्रयोग कर पाते हैं।
2. **कार्यों की पुनराव ति पर रोक (Repetition of Work is Stopped) :** विक्रय कोटा निर्धारित होने से सम्बन्धित व्यक्तियों का कार्य निश्चित हो जाता है। अतः सभी व्यक्ति अपनी-अपनी सीमाओं में रहकर कार्य करते हैं। परिणाम

स्वरूप ग्राहकों से सम्पर्क करने, विक्रय प्रदेशों में भ्रमण आदि की पुनराव ति रूक जाती है। इससे धन व समय की बचत होती है।

3. **अन्य विभागों से सहयोग व सम्न्वय (Cooperation & Coordination with other Departments) :** विक्रय कोटा निर्धारित होने से उत्पादन, क्रय, भण्डारण, वित्त आदि से सहयोग व समन्वय करने में कठिनाई नहीं होती।

4. **कार्यभार में समानता (Parity in Work Load) :** विक्रेताओं के बीच भेदभाव, पक्षपात आदि की सम्भावना समाप्त करने के लिए विक्रय कोटा निर्धारण आवश्यक है क्योंकि विक्रय कोटे को निश्चित करने में उचित नीति एवं सिद्धान्तों का पालन किया जाता है। इससे विक्रताओं आदि के कार्यों का वितरण समान रूप से हो पाता है।

5. **विक्रय व्ययों पर नियन्त्रण (Control on Sales Expenses) :** विक्रय कोटा विक्रय व्ययों को निर्धारित सीमाओं में रखने का भी एक प्रभावी साधन है। विक्रय कोटा निर्धारित करते समय विक्रय व्यय का भी कोटा निश्चित किया जा सकता है।

6. **विक्रेताओं की क्रियाओं पर नियन्त्रण (Control on Activities of Salesmen) :** विक्रय कोटा निर्धारण से विक्रेता निर्धारित समय में निर्धारित मात्रा में माल बेचने के लिए प्रेरित होते हैं। इससे व्यर्थ की क्रियाओं में होने वाली समय की बर्बादी पर रोक लग जाती है। अतः विक्रय कोटा के माध्यम से प्रबन्धक विक्रेताओं की क्रियाओं पर प्रभावशील नियन्त्रण कर पाते हैं।

7. **उपयुक्त पारिश्रमिक प्रणाली का विकास (Developing an Approprate System of Compensating Sales Personnel) :** विक्रय कोटा निर्धारण से एक प्रभावशाली पारिश्रमिक प्रणाली का विकास किया जा सकता है। निर्धारित कोटा के लक्ष्य प्राप्त करने वाले विक्रेताओं को विशेष कमीशन या बोनस देने की व्यवस्था की जा सकती है। इसी प्रकार, विक्रेताओं को दिये जाने वाले पारिश्रमिक सुविधाओं में व द्धि आदि का निर्णय भी विक्रय कोटा की प्राप्ति के आधार पर ही लिया जा सकता है।

8. **भावी गतिविधियों के स्तर व आवश्यकताओं का अनुमान (Future Estimates & Level) :** विक्री का भावी अनुमान कोटे के आधार पर आसानी से लगाया जा सकता है। सभी क्षेत्रों के कोटे का योग ही विक्रय पूर्वानुमान माना जा सकता है। विक्रय का अनुमान लगने के बाद विज्ञापन, विक्रय संवर्द्धन, कर्मचारी, व्यय तथा पूँजी आदि की आवश्यकताओं का भी अग्रिम अनुमान लगाकर नियोजन किया जा सकता है।

9. **विक्रेताओं की उत्पादकता का मूल्यांकन (Evaluation of Salesman's Productivity) :** विक्रय कोटा की वास्तविक विक्रय कार्यों एवं परिणामों से तुलना करके विक्रेताओं की उत्पादकता का मूल्यांकन किया जा सकता है। यदि उनके कार्यों में सुधार की आवश्यकता हो तो इनकी सहायता से उत्पादकता बढ़ाने तथा प्राप्त स्तर को बनाये रखने की प्रेरणा दी जा सकती है।

10. **विक्रेताओं को प्रेरित करने के लिए (For Motivating Salesman) :** विक्रय लक्ष्यों का ज्ञान हो जाने पर उनकी प्राप्ति के लिए विक्रेताओं के प्रयासों में तीव्रता आती है। वे अपने विक्रय कोटा को निश्चित समय में पूरा करने का प्रयास करते हैं। वे अपने विक्रय लक्ष्यों के प्रति गम्भीर रहते हैं तथा उनको प्राप्त करने में आने वाली बाधाओं के प्रति भी सचेत रहते हैं।

विक्रय कोटा निर्धारण के प्रमुख सिद्धान्त
(Main Principles of Quota Fixation)

विक्रय कोटा निर्धारण एक योजना बद्ध कार्य है। विक्रय कोटा निर्धारण में कुछ सिद्धान्तों का पालन आवश्यक है। इन

सिद्धान्तों के पालन करने से अभ्यंश (कोटा) व्यावहारिक हो जाते हैं जिन्हें प्राप्त करने में विक्रेताओं को कठिनाई नहीं आती तथा वे हताश नहीं होते। ये सिद्धान्त निम्न हैं :

1. **सरल व सुगम विधि :** विक्रय कोटा निर्धारित करने की विधि सरल व सुगम होनी चाहिए ताकि विक्रेता व अन्य सम्बन्धित व्यक्ति उसे आसानी से समझ सके।
2. **व्यावहारिकता :** विक्रय कोटा व्यावहारिक होना चाहिए उसे न तो अति उच्च व न अति न्यून होना चाहिए बल्कि सन्तुलित हो तथा उसमें आवश्यकता अनुसार परिवर्तन सम्भव हो।
3. **स्पष्टता :** विक्रय कोटा दुविधा रहित व स्पष्ट हो जिसकी विक्रेताओं को पहले से जानकारी होनी चाहिये।
4. **निश्चितता :** कोटा निर्धारण, विक्रयराशि, इकाईयों, लाभ की मात्रा आदि की रूप में हो लेकिन उसमें निश्चितता होनी चाहिये। विक्रेता को स्पष्ट होना चाहिए कि उसे किस लक्ष्य को प्राप्त करना है।
5. **समता :** विक्रय कोटा निर्धारित करते समय समता के सिद्धान्त का पालन किया जाना आवश्यक है। जिन क्षेत्रों में विक्रय संभावना अधिक हो वहाँ का कोटा उच्च तथा जहाँ यह संभावना कम हों वहाँ का कोटा न्यून तय किया जाना चाहिये।
6. **लोचशीलता :** विक्रय कोटे में लोचशीलता होनी चाहिए जिससे उसको बदलती आर्थिक, सामाजिक व व्यावसायिक परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित किया जा सके।
7. **उद्देश्यनिष्ठता :** विक्रय कोटा ऐस तथ्यों पर आधारित होना चाहिए जो विश्वसनीय हों व उचित तरीके से एकत्रित किये गये हों।
8. **अनुगमन :** विक्रय कोटा पद्धति के निरन्तर मूल्यांकन की व्यवस्था करके ही सफल बनाया जा सकता है। विक्रय कोटा लक्ष्यों की वास्तविक परिणामों से तुलना करके पाये जाने वाले ऋणात्मक विचलनों को दूर करने के उपाय किये जाने चाहियें। ऐसा करने से विक्रेताओं तथा प्रबन्धकों की बीच सदभाव बढ़ेगा।
9. विक्रय कोटा विक्रय कर्मचारियों को स्वीकार्य होना चाहिये।
10. विक्रय कोटा पूर्वाग्रहों व कल्पना पर आधारित न हो।
11. विक्रय कोटा प्रेरणात्मक तथा निष्पक्षता से परिपूर्ण हो।

विक्रय कोटा के निर्धारक घटक

Factors Determining Sales Quota)

विक्रय कोटा निर्धारित करते समय निम्नलिखित बातें को ध्यान में रखना होता है :

1. **भूतकालीन विक्रय आँकड़े :** आगामी वर्षों की बिक्री का अनुमान विगत वर्षों में की गई विक्री के आँकड़े आधार के रूप में प्रयोग किए जाते हैं। अतः विक्रय कोटे के निर्धारण में भूतकाल में की गई बिक्री के आँकड़ें अहम् स्थान रखते हैं।
2. **बाजार की स्थितियाँ आकार :** विक्रय अभ्यंश या कोटे के निर्धारण में वस्तु विशेष की बाजार की स्थिति भी एक महत्त्वपूर्ण घटक है अर्थात् यदि वस्तु के बाजार के आकार में कोई परिवर्तन हो तो उसे भी ध्यान में रखकर कोटा निश्चित किया जाता है।
3. **विक्रय सम्भावनायें :** विक्रय कोटा निर्धारित करते समय बाजार में विक्रय सम्भावनायें भी ध्यान में रखी जाती हैं। इस सम्बन्ध में उपभोक्ताओं की रुचि, फैशन, स्वभाव, क्रयशक्ति, सरकारी नीति आदि को आधार बनाया जा सकता है।

4. **विक्रयकर्ता की क्षमता :** विक्रय कोटा तय करते समय सम्बन्धित विक्रेताओं की विक्रय क्षमता को भी ध्यान में रखा जाता है।

5. **विक्रय पूर्वानुमान :** भावी विक्रय का पूर्वानुमान लगाने के बाद उसे क्षेत्रों के आधार पर बाँटकर विक्रय कोटा निर्धारित किया जाता है।

6. **प्रतियोगिता की स्थिति :** विक्रय कोटा निर्धारित करने में प्रतियोगिता में होने वाले परिवर्तनों को भी ध्यान में रखना होता है क्योंकि प्रतियोगिता में व द्धि या कमी भी विक्रय स्तर को प्रभावित करती हैं। कड़ी प्रतियोगिता की स्थितियों में विक्रय कोटा का स्तर अपेक्षाकृत छोटा होना चाहिए अन्यथा बड़ा।

7. **उपभोक्ताओं का जीवनस्तर व आय :** उपभोक्ताओं की आय के स्तर व जीवन स्तर को भी ध्यान में रखकर ही विक्रय कोटा निर्धारित किया जाना चाहिए। यदि जीवन स्तर व आय का स्तर ऊँचा हो तो विक्रय कोटा उच्च होगा इसके विपरीत होने पर न्यून।

8. **विक्रय नीति :** विक्रय कोटा संस्था की विक्रय नीति से भी प्रभावित होता है। यदि संस्था विक्रय में व द्धि के लिए नये-नये नीतिगत कदम उठा रही है जैसे – उधार नीति में लचीलापन, बट्टा नीति में उदारता ला रही है तो उच्च विक्रय कोटा निर्धारित किया जाना चाहिये।

9. **सरकारी नीति :** विक्रय कोटा निर्धारण में उद्योग के प्रति सरकार की सामान्य नीति व सरकारी क्रय नीति अदि को भी ध्यान में रखा जाता है। यदि नीति उद्योग को प्रोत्साहित करने वाली है तो विक्रय कोटा बढ़ाया जा सकता है।

10. **विज्ञापन एवं विक्रय संवर्द्धन :** विक्रय कोटा निर्धारित करते समय विज्ञापन तथा विक्रय संवर्द्धन के स्तर को भी ध्यान में रखा जाता है। उदाहरण के लिये, यदि उपक्रम द्वारा किसी क्षेत्र में व्यापक पैमाने पर विज्ञापन एवं विक्रय संवर्द्धन किया जाता है तो उस क्षेत्र के लिए विक्रय कोटा अधिक निर्धारित किया जा सकता है।

11. **उत्पादन क्षमता :** विक्रय कोटा निर्धारित करते समय उपक्रम की उत्पादन क्षमता को भी ध्यान में रखना चाहिए। यदि संस्था उत्पादन क्षमता बढ़ाना चाहती है तो विक्रय कोटा भी उसी के अनुसार बढ़ाया जा सकता है।

12. **अन्य घटक :** (1) विक्रेताओं के विचार (2) स्थानीय कानून व व्यवस्था की स्थिति (3) आर्थिक, राजनैतिक व सामाजिक परिस्थितियाँ।

विक्रय कोटा के प्रकार

Types of Sales Quota

प्रत्येक व्यावसायिक उपक्रम की विक्रय से सम्बन्धित समस्याएँ, प्रबन्धकीय निर्णय, व्यावसायिक दर्शन तथा नीतियाँ, कोटा निर्धारण की विधियाँ व बजटिंग पद्धतियाँ भिन्न-भिन्न होती हैं। परिणामस्वरूप उनके विक्रय कोटा का निर्धारण भी भिन्न-भिन्न प्रकार से होता है। इन संस्थाओं का विक्रय कोटा भी अलग-अलग होते हैं। इस विक्रय कोटा के प्रकार निम्नांकित हैं :

(1) **विक्रयकर्ता का कोटा** (Salesman's Quota)

(2) **डीलर या वितरक कोटा** (Dealer or Distributor's Quota)

(3) **शाखा कोटा** (Branch Quota)

(4) **मण्डलीय कोटा** (Divisional Quota)

(1) **विक्रयकर्ता का कोटा :** इस प्रकार की कोटा प्रणाली का प्रचलन बहुत अधिक मात्रा में है। इस प्रणाली के अर्न्तगत प्रत्येक विक्रेता का प थक-प थक विक्रय कोटा निर्धारित किया जाता है, जिसे पूरा करना उसके लिए आवश्यक होता है। इस कोटे को निर्धारित करते समय विक्रेता के वेतन व भत्तों, क्षेत्रीय विक्रय संभावनायें व उसकी विक्रय क्षमता को ध्यान में रखा जाता है। विक्रेता को कोटे के परिणामों के आधार पर ही प्रेरणात्मक परिश्रमिक का भी भुगतान किया जाता है।

(2) **डीलर या वितरक का कोटा :** उत्पादकों को अपने वस्तु विक्रय के लिए कोई डीलर या वितरक भी नियुक्त करना होता है। इन वितरकों या डीलरों का विक्रय कोटा भी निर्धारित किया जा सकता है जो डीलर या वितरक का कोटा कहलाता है। ऐसे डीलर या वितरक के लिए डीलरशिप या डिस्ट्रीब्यूटरशिप को बनाये रखने के लिए यह कोटा पूरा करना आवश्यक होता है।

(3) **शाखा का कोटा :** जब उपक्रम की कई शाखाएँ हों जैसे – बैंक व बीमा-कम्पनियों में तो प्रत्येक शाखा को एक निर्धारित समय में अपने पूर्व निर्धारित लक्ष्यों को पूरा करना आवश्यक होता है। इस प्रकार इन शाखाओं के लक्ष्य निर्धारित होना ही शाखा कोटा कहलाता है।

(4) **मण्डलीय कोटा :** यदि निर्माता के कार्यालय मण्डल स्तर पर भी हों तो प्रत्येक मण्डल के स्तर पर कोटा निर्धारित करना मण्डलीय कोटा कहलाता है। यदि विक्रय संगठन जिला, प्रान्तीय, व राष्ट्रीय आधार पर गठित किया जाता हो तो जिलों, प्रान्तों व राष्ट्रों का कोटा भी निर्धारित किया जा सकता है।

ऊपर वर्णित विक्रय का कोटा निम्न चार रूपों में हो सकता है :

(A) **विक्रय मात्रा कोटा :** विक्रय मात्रा कोटे में विक्रय की मात्रा या परिमाण (Quantity) तय कर दी जाती है। ऊपर वर्णित विक्रयकर्ता, वितरक, शाखा तथा मण्डल आदि के लिए विक्रय की मात्रा निर्धारित करना ही विक्रय मात्रा कोटा कहलाता है। इस विक्रय मात्रा के लिए निर्धारित समावधि होती है जिसमें इन्हें पूरा करना होता है।

लाभ में व द्धि का एक प्रत्यक्ष आधार विक्रय की मात्रा है। अतः इन कोटा में विक्री की मात्रा ही आधार होती है जिसके द्वारा विक्रेता के कार्य निष्पादन को मूल्यांकित किया जाता है। विक्रय मात्रा कोटा तीन रूपों में हो सकता है जैसे :

(i) **मुद्रा विक्रय परिमाण कोटा :** यह विक्रय कोटा मुद्रा अर्थात रूपया, पौंड, डॉलर, रूबल, यन आदि में व्यक्त किया जा सकता है।

(ii) **इकाई विक्रय-मात्रा कोटा :** यह कोटा विक्रय इकाईयों के रूप में व्यक्त किया जाता है जैसे – विक्रेता को एक माह की अवधि में 5000 इकाईयों का विक्रय करना हो।

(iii) **बिन्दू विक्रय-परिमाण कोटा :** विक्रय परिमाण कोटा बिन्दुओं में भी व्यक्त किया जा सकता है। इसके लिए इकाई विक्रय अथवा रुपयों में निर्धारित विक्रय को पहले 'बिन्दुओं में परिवर्तित करना होता है जैसे – X उत्पाद की 250 इकाईयों के लिए 5 बिन्दु, उत्पाद Y की 1000 इकाईयों के लिए 10 बिन्दु, Z उत्पाद की इकाईयों की 500 इकाईयों के लिए 15 बिन्दु निर्धारित करना। इस विधि में विक्रय की मुद्रा में मात्रा के लिए भी बिन्दु निर्धारित किये जा सकते हैं जैसे – 10000 रुपये तक की बिक्री के लिए 1 बिन्दु, 15000 रुपये तक की बिक्री के लिए 2 बिन्दु आदि। बोनस भुगतान के लिए यह आवश्यक कर दिया जाता है कि बिक्री पूर्व-निर्धारित बिन्दुओं के कोटा तक या उससे अधिक हो।

(B) **विक्रय बजट कोटा :** इस प्रकार से कोटा निर्धारित करने का उद्देश्य संस्था के व्ययों, सकल लाभ या शुद्ध लाभ को नियन्त्रित करना होता है। इसके माध्यम से विक्रयकर्ताओं को स्पष्ट किया जाता है कि उनका कार्य केवल विक्रय व द्धि करना नहीं है बल्कि लाभप्रद विक्रय करना भी है। इस कोटे के दो रूप हो सकते हैं :

(i) **व्यय कोटा :** व्यय कोटा विक्रय पर होने वाले व्ययों पर सीमा लगाता है। इसमें विक्रेताओं को स्पष्ट किया जाता है कि वे विक्रय पर कितनी राशि व्यय कर सकते हैं। इनसे विक्रेताओं की विक्रय लागतों व व्ययों के प्रति जागरूकता बढ़ती है।

(ii) **शुद्ध लाभ या सकल मार्जिन :** इस कोटा के अर्न्तगत विक्रेता का बल सदैव शुद्ध लाभ पर होता है। इसमें विक्रेताअें को यह स्पष्ट किया जाता है कि विक्रय व द्धि या व्ययों में कमी अथवा दोनों का लाभ तभी होगा जबकि मार्जिन या लाभों में व द्धि हो।

(3) **विक्रय क्रिया कोटा :** प्रायः विक्रेता विक्रय करने का प्रयास अधिक करते हैं तथा विक्रय की सहायक क्रियाओं पर ध्यान नहीं देते हैं या बहुत कम ध्यान देते हैं। ऐसी दशा में विक्रय प्रबन्धकों द्वारा क्रिया कोटा निर्धारित किया जाता है ताकि विक्रेता ओदश प्राप्त करने के साथ-साथ विक्रय की सहायक क्रियाओं जैसे-माल का प्रदर्शन, विक्रय उपरान्त सेवा, उधार विक्रय की वसूली आदि पर ध्यान दे सकें।

(4) **संयुक्त कोटा :** ऊपर बताई गई तीनों प्रकार की कोटा पद्धतियों का मिश्रित रूप संयुक्त कोटा प्रणाली कही जाती है। इसमें विक्रय परिमाण या मात्रा, विक्रय बजट अथवा विक्रय क्रिया कोटा को एक साथ अपनाया जाता है। इस प्रणाली द्वारा विक्रय की मात्रा तथा गैर विक्रय कार्यों के मध्य सन्तुलन रखा जाता है। इससे विक्रेताओं की निष्पादन क्षमता का पूर्ण उपयोग सम्भव होता है तथा विक्रय व्ययों पर नियन्त्रण रहता है।

विक्रय कोटा निर्धारित करने की विधियाँ
(Methods of Setting Sales Quotas)

विक्रय कोटे का निर्धारण करने हेतु संस्थाओं द्वारा विभिन्न विधियों का प्रयोग किया जाता है। जिनमें से प्रमुख विधियाँ निम्नलिखित हैं :

1. **कुल अनुमानित बिक्री के आधार पर :** इस विधि में उद्योग की कुल बिक्री का अनुमान लगाकर उपक्रम की भावी बिक्री का अनुमान किया जाता है। भावी अनुमानों का आधार विगत अवधि की बिक्री होती है। संस्था के बाजार अंश की कमी या व द्धि के आधार पर पिछले बिक्री के आँकड़ों में संशोधन किया जाता है जिसके अनुसार भावी बिक्री का लक्ष्य निर्धारित कर लिया जाता है। यदि संस्था नयी है तो उद्योग की कुल बिक्री को कोई भी प्रतिशत बिक्री लक्ष्य के रूप में निर्धारित कर लिया जाता है।

   भावी बिक्री अनुमानित होने के उपरान्त विक्रेताओं की योग्यता, स्थिति, अनुभव, वितरकों का आकार, जनसंख्या, प्रतिस्पर्द्धा की स्थिति आदि को ध्यान में रखकर विक्रय कोटा निर्धारित कर लिये जाते हैं। केवल पिछली अवधि की बिक्री को आधार बनाकर कोटा निर्धारित करना काफी जोखिमपूर्ण होता है। अतः बाजार अनुसन्धान एवं टेस्ट-मार्किटिंग जैसी तकनीकों के आधार पर एकत्रित आँकड़ों द्वारा भावी बिक्री को अनुमानित करने से कुछ हद तक इस जोखिम से बचाव हो सकता है। इस विधि के निम्न दो चरण हो सकते हैं :

   (i) **उद्योग की कुल बिक्री का पूर्वानुमान :** इस विधि के अनुसार सबसे पहले समस्त उद्योग की कुल बिक्री

का पता लगाया जाता है। इसके उपरान्त संस्था की भावी बिक्री को अनुमानित किया जाता है। यदि संस्था के बाजार अंश में व द्धि की सम्भावना हो तो पिछले वर्षों की बिक्री में थोंड़ी व द्धि करके भावी बिक्री का अनुमान लगाया जा सकता है। इसके विपरीत गत वर्षों में संस्था का विक्रय अंश स्थायी रहने या कम होने पर पिछले वर्ष की बिक्री के लक्ष्य को ही भावी बिक्री का लक्ष्य माना जा सकता है। यदि संस्था अभी स्थापित हुई हो तो अनुमानित सापेक्ष स्थिति के आधार पर उद्योग की कुल बिक्री का कोई उचित प्रतिशत बिक्री के लक्ष्य के रूप में निश्चित किया जा सकता है। इसमें बाजार अनुसन्धानों को प्रयोग करके इसे तार्किक बनाया जा सकता है। यह विधि अधिक लोकप्रिय है।

(ii) **कोटा निर्धारण :** बिक्री की उपर्युक्त विधि से राशि की गणना के बाद विविध घटकों विक्रता की विक्रय योग्यता, स्थानीय माँग, बाजार की दशाऐं, प्रतिस्पर्द्धा आदि को ध्यान में रखकर प थक-प थक विक्रय कोटे निर्धारित किये जाते हैं।

2. **क्षेत्रीय विक्रय सम्भाव्यों के अनुमान के आधार पर :** इस विधि में संस्था पहले विक्रेताओं, शाखाओं तथा अन्य विपणन इकाईयों से उनके विक्रय प्रदेशों में उनके द्वारा की जा सकने वाली सम्भावित बिक्री के समंक एकत्रित करती है। इन समकों में उचित संशोधन के बाद क्षेत्रीय लक्ष्य व उपक्रम की कुल भावी बिक्री का अनुमान लगा लेते हैं। इस प्रकार अनुमानित बिक्री को ही उसका बिक्रय कोटा मान लिया जाता है अथवा उसमें संस्था की नीतियों व परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन किया जाता है। इस विधि में क्योंकि विक्रेताओं द्वारा दी गई सूचनायें ही आधार होती हैं अतः वे कोई शिकायत नहीं कर पाते और कोटे के अनुसार उन्हें प्राप्त करने का भरसक प्रयत्न करते हैं। इस विधि में एक दोष यह है कि व्यवहार में विक्रेता, डीलर्स या विपणन इकाईयाँ आदि अनेक क्षेत्रों की विक्रय सम्भावनाओं को कम आँकते हैं ताकि वे उस लक्ष्य को आसानी से प्राप्त कर सकें तथा अतिरिक्त कमीशन का अन्य लाभ प्राप्त कर सकें। कुल बिक्री के भावी अनुमान को विक्रेताओं आदि में बाँटने के निम्न चार तरीके हैं :

(i) भावी बिक्री में व द्धि के आधार पर विपणन इकाईयों, विक्रेताओं, डीलरों आदिकी गत वर्ष की बिक्री में व द्धि कर नया कोटा निर्धारित करना।

(ii) दूसरा तरीका यह है कि पहले उस सम्बन्धित वर्ष के लिए सम्पूर्ण बिक्री का अनुमान लगाकर यह पता करना कि गत वर्ष में उद्योग की कुल बिक्री के साथ उसका क्या प्रतिशत था। इसके बाद भावी विक्रय अनुमान में उसी प्रतिशत का गुणा करके उस क्षेत्र का कोटा निर्धारित करना।

(iii) विक्रय कोटा निर्धारित करने में पहले संस्था की कुल बिक्री का अनुमान लगाकर उस गत वर्ष की कुल बिक्री के क्षेत्रीय अनुपात के आधार पर विभिन्न क्षेत्रों में बाँटकर कोटा निर्धारित करना।

(iv) कोटा निर्धारण का एक तरीका यह भी है कि विभिन्न सूचनाओं को एकत्र कर उनका सहसम्बन्ध ज्ञात करना और फिर इस आधार पर एक अनुक्रमांक तैयार करके उसके आधार पर विभिन्न क्षेत्रों का विक्रय कोटा निर्धारित करना।

3. **प्रबन्धकीय अभिनिर्णय जूरी :** इस विधि के अर्न्तगत उपक्रम में कार्यरत कई प्रबन्धकों के एकत्रित मतों के आधार पर विक्रय कोटा निर्धारित किया जाता है। इस सम्बन्ध में विभिन्न क्षेत्रों में कार्य करने वाले प्रबन्ध कों के विचारों को एकत्र करके उन्हें मिश्रित करके उनके निष्कर्षों के आधार पर कोटे का निर्धारण होता है। इस प्रकार से कोटा निर्धारण को 'अनुमान कोटा' (Guess Work Quota) भी कहते हैं।

4. **मनोवैज्ञानिक कोटा प्रणाली :** इस विधि में विक्रय कर्मचारियों पर ही अनुमान तैयार करने का दायित्व होता है। इस उद्देश्य के लिए दिये गये फार्म में अनुमान विक्रेताओं द्वारा ही भरे जाते हैं। कभी-कभी विक्रयकर्ता विक्रय प्रबन्धकों के साथ की गई सभाओं में भी अपने-अपने विक्रय प्रदेशों के विक्रय अवसरों पर विचार-विमर्श करते हैं। इन विक्रय सभाओं में पिछली विक्रय सम्बन्धी सूचनायें उपलब्ध रहती हैं जिनके आधार पर कमी या व द्धि की जाती है। इससे विक्रेताओं में विक्रय नियोजन में सहभागी होने की भावना भी उत्पन्न होती है। इसी कारण इसे मनोवैज्ञानिक कोटा प्रणाली (Psychological Quota System) कहा जाता है।

विक्रय कोटा निर्धारण के लाभ
(Advantages of Sales Quota)

विक्रय कोटा निर्धारण से निम्नलिखित लाभ प्राप्त होते हैं :

(a) **उपक्रम को लाभ (Advantages to The Enterprises) :**

1. कोटा निर्धारित होने से प्रबन्ध को कर्मचारियों के कार्य-निष्पादन के मूल्यांकन का आधार प्राप्त हो जाता है।
2. इसके आधार पर विक्रेताओं का प्रेरणात्मक पारिश्रमिक निर्धारित करने में सुविधा रहती है।
3. इसके आधार पर कमजोर व अविकसित बाजारों का आसानी से पता लग जाता है।
4. विक्रय संगठन के कार्यों के नियमन व नियन्त्रण में सहायता मिलती है।
5. विक्रय-संवर्द्धन की योजनाओं का प्रभावी ढंग से आयोजन व क्रियान्वयन संभव होता है।
6. विक्रय कोटा आबंटन से सम्पूर्ण संस्था का विक्रय लक्ष्य प्राप्त करना आसान हो जाता है।
7. कोटा निर्धारण से विक्रेता का ध्यान लक्ष्य पर ही केन्द्रित रहता है। विक्रय लक्ष्यों की प्राप्ति से लाभों में अभिव द्धि सम्भव हो पाती है।
8. विक्रेताओं तथा क्षेत्रीय अधिकारियों की पदोन्नति, पदावनति व स्थानान्तरण के लिए आधार प्राप्त होता है।
9. इससे कुशल विक्रेताओं को अभिप्रेरित करने में सहायता प्राप्त होती है।
10. कोटा निर्धारण से अति व अल्प स्कन्ध की समस्या हल हो जाती है।

(b) **विक्रेता या डीलर या वितरक को लाभ (Advantages to Salesman or Dealer or Distributor) :**

1. विक्रय कोटा निर्धारित होने से बिक्री में व द्धि होती है जिससे उनकी आय बढ़ती है अर्थात् वे अतिरिक्त परिश्रमिक, कमीशन आदि प्राप्त कर पाते हैं।
2. विक्रेताओं के प्रयासों का उसे पूर्ण प्रतिफल मिलता है।
3. विक्रेताओं का अनावश्यक व निराधार दण्डात्मक कार्यवाही से बचाव होता है।

(c) **क्रेताओं को लाभ (Advantags to Buyers) :**

1. क्रेताओं की शिकायतों का निवारण शीघ्रता से होता है।

2. उनका क्षेत्रीय विक्रयकर्ता या विक्रय प्रभारी उनकी आवश्यकताओं को अच्छी प्रकार समझ पाता है।

3. क्रेताओं को बेहतर सेवाएँ उपलब्ध हो पाती हैं।

विक्रय कोटा के दोष एवं सीमायें
(Limitations or Disadvantages of Sales Quota)

विक्रय कोटा के सम्बन्ध में कुछ विद्वान निम्न तर्कों के आधार पर आलोचना करते हैं :

1. **अनावश्यक क्रय को प्रेरणा :** विक्रय कोटा निर्धारित होन पर विक्रेता कई बार ग्राहकों पर अनावश्यक वस्तुयें भी थोंप देते हैं। इससे ग्राहक के पास आवश्यकता से अधिक वस्तुयें जमा हो जाती हैं और फिर लम्बे समय तक उसे खरीदने की जरूरत ही नहीं होती।

2. **दक्ष विक्रयकर्ता की क्षमता का अपूर्ण उपयोग :** विक्रय कोटा निर्धारण से दक्ष विक्रेता का केन्द्र बिन्दू कोटा विक्रय रहता है जिसके कारण उस कोटे को पूरा करने के बाद विक्रेता निष्क्रिय हो जाते हैं और अपनी पूर्ण दक्षता का प्रयोग नहीं कर पाते।

3. **गणितीय शुद्ध की कमी :** विक्रय कोटा पूर्णतः गणितीय शुद्धता के साथ निर्धारित नहीं किये जा सकते हैं। अतः यह श्रेष्ठ होगा कि वे 70% विज्ञान और 30% अटकलों पर आधारित हों, न कि शत-प्रतिशत संयोगों पर।

4. **वैयक्तिक पक्षपात :** सही, निष्पक्ष एवं, यथोचित विक्रय कोटा की स्थापना करना एक कठिन कार्य है। प्रबन्धकों के वैयक्तिक द ष्टि कोण, धारणाओं व पक्षपातों से मुक्त नहीं रह सकते।

5. **आर्थिक भार :** विक्रय कोटा के निर्धारण में बाजार अनुसन्धान, सांख्यिकीय विधियों व विशेषज्ञों की सेवाओं की आवश्यकता होती है जिनके आर्थिक भार को उठा पाना कई संस्थाओं के लिए संभव नहीं होता है।

6. **उच्च निर्धारण :** कई बार कुछ कम्पनियाँ काफी ऊँचे विक्रय कोटा निर्धारित कर देती हैं, जिससे वे व्यावहारिक नहीं रह पाते तथा अपेक्षित लाभ उपलब्ध कराने में सहायक नहीं होते। अतः कई संस्थाएँ इनके निर्धारण में विश्वास नहीं रखती हैं।

7. **जटिल तकनीकें :** कई विक्रय कोटा के निर्धारण में जटिल सांख्यिकीय तकनीकों का प्रयेाग किया जाता है जो आसानी से नहीं समझी जा सकती।

8. **विक्रय व द्धि मात्र उद्देश्य :** विक्रय कोटा निर्धारण में केवल विक्रय व द्धि पर जोर दिया जाता है जो कि व्यवसाय का एक मात्र ध्येय नहीं होता है। अतः कोटा निर्धारण उचित प्रतीत नहीं होता।

उपयोगी प्रश्न
(Useful Questions)

1. विक्रय अभ्यश को परिभाषित करिये। अभ्यश निर्धारण की आवश्यकता व प्रमुख विधियों की विवेचन करिये।
Define sales quota. Discuss the need and important methods of determining sales quota.

2. विक्रय कोटा के प्रकारों व इनके निर्धारण के प्रमुख आधारों का विवेचन करिये।
Discuss the types of sales quota and basis of determining sales quota.

3. **विक्रय कोटा निर्धारण के लाभों व सीमाओं की विवेचना करिये।**
Discuss the adavantages and limitations of assigning sales quota.

4. **निम्न पर टिप्पणियाँ लिखिये :**
Write notes of following :

(i) **विक्रय अभ्यंश निर्धारण के सिद्धान्त।**
Principles of assigning sales quota.

(ii) **विक्रय अभ्यंश निर्धारण की विधियाँ।**
Methods of determining sales quota.

5. **'विक्रय कोटा' को परिभाषित कीजिए। विक्रय कोटा के उद्देश्य एवं प्रकार बताइये।**
Define 'Sales Quota'. Describe the objectives and types of sales Quotas.

6. **विक्रय कोटा के निर्धारण की विधियों को समझाइये।**
Explain the methods of determining sales Quotas.

7. **विक्रय कोटा का निर्धारण क्यों आवश्यक है ? विक्रय कोटा के निर्धारण में क्या कठिनाइयाँ आती हैं ?**
Why is it necessary to fix sales quotas ? What are the difficulties which may arise in fixing quotas.

8. **'विक्रय कोटा' से क्या तात्पर्य है? इनके उद्देश्य एवं सिद्धान्त बताइए।**
What do you mean by 'Sales Quota'. Describe their objects and essential principles.

अध्याय - 25
विक्रय प्रदेश (क्षेत्र)
(Sales Territories)

"विक्रय-क्षेत्र विक्रय नियोजन एवं विक्रय नियन्त्रण की आधारभूत इकाई है।" **— गौनार्ड एवं डेनिस**

विक्रय नियोजन एवं नियन्त्रण का मूल आधार विक्रय क्षेत्रों का प्रबन्धन होता है। विक्रय अवसरों में व द्धि के लिए विक्रय क्षेत्रों का उचित निर्धारण एवं आवंटन आवश्यक होता है। विक्रय क्षेत्रों के प्रबन्धन द्वारा विक्रय प्रयासों को विक्रय अवसरों से समायोजित किया जा सकता है, विपणन व्यूहरचनाओं को प्रभावी बनाया जा सकता है, विक्रय नियोजन को प्रभाव पूर्ण बनाया जा सकता है तथा विक्रेताओं के कार्य-निष्पादन का उचित मूल्यांकन किया जा सकता है।

विक्रय-क्षेत्र का अर्थ एवं परिभाषाएँ
(Meaning and Definitions of Sales Territories)

वह सम्पूर्ण क्षेत्र जहाँ किसी उत्पादक या विक्रेता के वर्तमान व भावी क्रेता स्थित या फैले हुए हों विक्रय-क्षेत्र कहलाता है। एक व्यावसायिक संस्था का विक्रय परिक्षेत्र स्थानीय, राज्यीय, अर्न्तराज्यीय, राष्ट्रिय या अर्न्तराष्ट्रीय हो सकता है। विक्रय परिक्षेत्र में विक्रय क्रियाओं के सुचारू व प्रभावी निष्पादन व नियन्त्रण हेतु इसे छोटी-छोटी इकाईयों में विभक्त किया जाता है जिन्हें विक्रय क्षेत्र कहा जाता है। विक्रय-क्षेत्रों का आकार, उत्पादन की मात्रा, व्यावसायिक संस्था के आकार, उपभोक्ताओं की संख्या आदि पर निर्भर करता है। विक्रय सम्बन्धी क्रियाओं को व्यवस्थित, कुशलतापूर्वक एवं प्रभावकारी ढंग से सम्पन्न करने के लिए व्यावसायिक उपक्रम अपने सम्पूर्ण विक्रय क्षेत्र के छोटे-छोटे परिक्षत्रों में विभक्त करता है, जिसे विक्रय-क्षेत्रों का विभाजन या निर्धारण कहते हैं। बहुत सी व्यावसायिक संस्थायें अपनी वस्तुओं अथवा उत्पादों का मित्त व्ययी एवं प्रभावी ढंग से विक्रय करने के लिए किसी एक विक्रयकर्ता या मध्यस्थ के लिए इन क्षेत्रों का निर्धारण करती हैं।

अतः विक्रय-क्षेत्र से आशय वर्तमान एवं सम्भावित ग्राहकों के उस भौगोलिक क्षेत्र से है जिसे किसी एक विक्रयकर्ता या मध्यस्थ का निपणन इकाई के लिए निर्धारित किया गया हो। विक्रय-क्षेत्रों के सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों ने निम्न परिभाषाएँ दी हैं :

1. **स्टिल एवं कण्डिफ** (Still and Cundiff) के अनुसार, "व्यावहारिक रूप से विक्रय क्षेत्र एक विशेष प्रकार के ग्राहकों का समूह तथा विक्रयकर्ता को सौंपे गये कार्य का आबंटन है।"
2. **चार्ल्स फ्यूर्टेल** (Charles Futrell) के अनुसार, "एक विक्रय प्रदेश में ग्राहकों का एक समूह या भौगोलिक क्षेत्र शामिल है जो किसी विक्रय व्यक्ति को सौंपा जाता है। विक्रय क्षेत्र की कोई भौगोलिक सीमा हो भी सकती है और नहीं भी।"

3. **मैनार्ड एवं डेविस** (Maynard and Davis) की राय में, "विक्रय-क्षेत्र, विक्रय नियोजन एवं विक्रय नियन्त्रण की आधारभूत इकाई है।"

4. **बी. आर. केनफील्ड** (B. R. Canfield) के अनुसार, "एक विक्रय क्षेत्र वर्तमान एवं सम्भावित ग्राहकों का एक भौगोलिक क्षेत्र है जिसकी सेवा एक विक्रयकर्ता, शाखा डीलर या वितरक के द्वारा मितव्ययिता एवं प्रभावकारी ढंग से की जा सकती है।"

   उपरोक्त परिभाषाओं से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि "विक्रय-क्षेत्र विक्रय नियोजन एवं नियन्त्रण में सुविधा की द ष्टि से निर्धारित किया हुआ समग्र बाजार का एक निश्चित क्षेत्र है जो एक विक्रयकर्त्ता, डीलर या वितरक के सुपुर्द किया जाता है।"

   सम्पूर्ण विक्रय-परिक्षेत्र को विक्रय-क्षेत्रों में बाँटने को ही विक्रय-क्षेत्रों का निर्धारण कहते हैं।

विक्रय-क्षेत्र को बाँटने के कारण अथवा उद्देश्य

(Reassons or Objectives of Establishing Sales Territories)

विक्रय-क्षेत्र को बाँटने के बहुत-से कारण हो सकते हैं इनमें से कुछ प्रमुख कारण अथवा उद्देश्य निम्न हो सकते हैं :

1. **ग्राहकों की बेहतर सेवाएँ** (Better Services to Customers) : विक्रय-क्षेत्रों के बँटवारे के प्रमुख कारणों में ग्राहकों को बेहतर सेवाएँ उपलब्ध करना है। विक्रय-क्षेत्रों के बँटवारे से प्रत्येक डीलर, वितरक अथवा विक्रयकर्ता अपने-अपने क्षेत्रों के ग्राहकों से सम्पर्क कर उनकी कठिनाइयों व शिकायतों को दूर कर सकते हैं। इस प्रकार की सुविधा प्रदान करने से ग्राहक व विक्रयकर्ता में अच्छे स्थायी सम्बन्ध स्थापित हो जाते हैं।

2. **प्रतियोगिता का सामाना** (To Face Competitions) : विक्रय-क्षेत्र स्थापित करने से सभी प्रकार की प्रतियोगी संस्थाओं से प्रभावी ढंग से निपटा जा सकता है क्योंकि विक्रयकर्ता अथवा डीलर अपने-अपने क्षेत्रों में ही रहते हैं एवं क्षेत्र के अनुभव के आधार पर समयानुसार प्रतियोगी की स्थिति को देखकर उचित निर्णय ले सकते हैं।

3. **विक्रय व्ययों में कमी करना** (To Reduce Selling Expenditures) : विक्रय-क्षेत्रों के बँटवारे का एक कारण विक्रय-व्ययों में कमी करना है। जब किसी विक्रयकर्ता का विक्रय-क्षेत्र सीमित हो जाता है तो उसको लम्बी-लम्बी यात्राएँ नहीं करनी पड़ती हैं जिससे यात्रा व्यय में कमी आ जाती है।

4. **सन्तुलित विक्रय प्रयास** (Balanced Sales Efforts) : विक्रय-परिक्षेत्र के छोटे-छोटे क्षेत्रों को व्यक्तिगत विक्रयकर्ताओं को सौंप देने से सम्पूर्ण विक्रय-क्षेत्र से विक्रय-प्रयासों में वांछित सन्तुलन रहता है।

5. **उत्तरदेयता का निर्धारण** (To Asertain Accountability) : विक्रय-क्षेत्रों का बँटवारा हो जाने से सम्बन्धित क्षेत्रों के डीलर, वितरक या विक्रयकर्ता को अपने क्षेत्रों के कमजोर निष्पादन के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है। एक विक्रय-क्षेत्र की तुलना दूसरे विक्रय-क्षेत्र से की जा सकती है एवं तुलनात्मक कमियों का पता लगाकर उन्हें दूर किया जा सकता है।

6. **स्वतन्त्र कार्यक्षेत्र** (Independent Work Area) : विक्रय क्षेत्रों के निर्धारण से सभी विक्रेताओं को स्वतन्त्र कार्यक्षेत्र प्राप्त हो जाताहै। इससे एक दूसरे के कार्यक्षेत्र में हस्तक्षेप की सम्भावनायें समाप्त हो जाती हैं। उनमें आपसी मतभेद पैदा नहीं होते हैं।

7. **स्वस्थ प्रतिस्पर्द्धा** (Healthy Competition) : विक्रय क्षेत्रों की स्थापना करके सभा विक्रेताओं के बीच स्वस्थ

प्रतिस्पर्द्धा का विकास किया जा सकता है। उनके बीच कटूता व दुर्भावना दूर करके अच्छे कार्य परिणाम प्राप्त किये जा सकते हैं।

8. **लाभों में व द्धि (Increase in Profit) :** विक्रय क्षेत्रों की स्थापना से संस्था के लाभों में व द्धि की जा सकती है। साथ ही, विक्रेताओं को मिलने वाले पारिश्रमिक एवं पुरस्कारों को भी बढ़ाया जा सकता है। अपने विक्रय क्षेत्र में अधिकतम विक्रय करके विक्रेता पदोन्नति प्राप्त करने में सफल हो जाते हैं।

9. **विज्ञापन तथा वैयक्तिक विक्रय में समन्वय (Coordination among Personal Selling & Advertising Efforts) :** संस्था में अधिक बिक्री तथा लाभों को प्राप्त करने के लिए विज्ञापन एवं वैयक्तिक विक्रय प्रयासों में समन्वय होना आवश्यक है। विक्रय क्षेत्रों की स्थापना करके विज्ञापन एवं वैयक्तिक विक्रय प्रयासों को समन्वित करके उनमें क्रियात्मकता उत्पन्न की जा सकती है। विक्रय क्षेत्रों के निर्धारण एवं वितरण से प्रत्येक विक्रेता के पास निश्चित वितरकों के सम्बन्ध में उत्तरदायित्व आ जाता है तथा विक्रेता वितरक से विज्ञापन संदेश पहुँचने से पहले नियमित रूप से सम्पर्क करता रहता है।

10. **विक्रेताओं की ग्राहकों के अनुरूप नियुक्ति (Appointing Sales Persons Matching the Customers) :** विक्रय क्षेत्रों की स्थापना से ग्राहकों के विभिन्न वर्ग बन जाते हैं जैसे – उपभोक्ता ग्राहक, स्त्री-पुरुष ग्राहक, औद्योगिक ग्राहक आदि। इससे फर्म प्रत्येक ग्राहक वर्ग की आवश्यकता के अनुरूप विक्रेताओं की नियुक्ति कर सकती है। विक्रेताओं की नियुक्ति ग्राहकों की प्रकृति एवं क्रय समस्याओं के अनुरूप की जा सकती है। विशेषज्ञ विक्रेताओं को भी नियुक्त किया जा सकता है।

11. **अन्य उद्देश्य (Other Objects) :**
    (i) विक्रेताओं के निष्पादन एवं मनोबल में व द्धि करना।
    (ii) विक्रेताओं की कार्य रूचि एवं प्रभावशीलता में व द्धि करना।
    (iii) ग्राहक सम्बन्धों में सुधार करना।
    (iv) विक्रय प्रयासों के दोहराव को रोकना।
    (v) प्रत्येक विक्रेता के कार्यों एवं विक्रय सभावनों में समानता लाना आदि।

विशेषताएँ
(Charecteristics)

1. विक्रय क्षेत्र किसी संस्था के **विद्यमान तथा सम्भाव्य ग्राहकों का समूह होता है।**
2. विक्रय क्षेत्र सम्पूर्ण बाजार का **उप इकाईयों में विभाजन है।**
3. विक्रय क्षेत्र की **भौगोलिक सीमा** हो भी सकती है और नहीं भी।
4. विक्रय क्षेत्र निर्धारण से **विक्रय नियोजन एवं नियन्त्रण संभव** होता है।
5. प्रत्येक विक्रय क्षेत्र किसी **विक्रेता, व्यापारी, शाखा अथवा कार्यालय** को सौंपा जाता है।
6. विक्रय क्षेत्र की सीमा निर्धारित न होने पर **सम्पूर्ण बाजार ही उसका विक्रय क्षेत्र** होता है।
7. विक्रय क्षेत्रों समूहों का निर्माण फर्म की आवश्यकता विक्रय मात्रा, उत्पाद, विक्रेताओं की क्षमता के आधार पर किया जाता है।

विक्रय-क्षेत्र के आधार को प्रभावित करने वाले घटक
(Factors Affecting The Size of a Sales Territory)

विक्रय-क्षेत्र का बँटवारा करते समय आकार का प्रश्न अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। अतः विक्रय-क्षेत्र के आकार का निर्धारण करते समय विभिन्न पहलुओं एवं बातों का विचार किया जाना चाहिए। सामान्यतया विक्रय-क्षेत्र के आकार को प्रभावित करने वाले घटक निम्नलिखित हैं :

1. **उत्पाद की प्रकृति (Nature of the Product) :** उत्पाद की प्रकृति विक्रय-क्षेत्र के आकार को प्रभावित करती है। औद्योगिक क्षेत्र में प्रयुक्त वस्तुओं के विक्रय-क्षेत्र सामान्यतया उपभोग वस्तुओं के विक्रय-क्षेत्र की अपेक्षा बड़े होते हैं। इसी प्रकार शीघ्र नष्ट होने वाली वस्तु के विक्रय-क्षेत्र टिकाऊ वस्तु की अपेक्षा में छोटे होते हैं।
2. **यातायात एवं संवादवाहन की सुविधाएँ (Transport and Communication Facilities) :** यातायात एवं संवादवाहन की पर्याप्त सुविधाएं होने पर विक्रय-क्षेत्र का आकार बड़ा रखा जा सकता है। इसी तरह जहाँ यातायात एवं संवादवाहन की सुविधाएँ पर्याप्त नहीं हैं, वहाँ विक्रय-क्षेत्र का आकार छोटा रखना होता है।
3. **वितरण-मार्ग (Channels of Distributions) :** वस्तुओं का वितरण थोक व्यापारियों के माध्यम से किये जाने पर विक्रय-क्षेत्र का आकार बड़ा रखा जा सकता है, परन्तु जब वस्तुओं का वितरण फुटकर व्यापारियों के माध्यम से किया जाता है, तब विक्रय-क्षेत्र का आकार छोटा होता है क्योंकि फुटकर व्यापारी थोक व्यापारी की तुलना में अधिक होते हैं।
4. **विक्रयकर्ता की योग्यता (Ability of Saleman) :** विक्रयकर्ता की योग्यता एवं कुशलता पर भी विक्रय-क्षेत्र का छोटा या बड़ा होना निर्भर करता है। एक योग्य एवं कुशल विक्रयकर्ता बड़े क्षेत्र में भी प्रभावकारी ढंग से कार्य कर सकता है, जबकि इसके विपरीत, एक अकुशल विक्रयकर्ता छोटे क्षेत्र में भी प्रभावकारी ढंग से कार्य करने में कभी-कभी अपने अपको सक्षम नहीं पाता है।
5. **बाजार की खोज (Search of Market) :** बाजार की खोज पर भी विक्रय-क्षेत्र का आकार निर्भर करता है। जिस तरह जब कोई नया उत्पाद बाजार में आता है, तब उसके ग्राहकों की संख्या कम होती है। परन्तु जैसे-जैसे उस वस्तु का बाजार बढ़ता जाता है, उपभोक्ताओं को अधिक से अधिक सुविधा प्रदान करने की द ष्टि से उस वस्तु का आकार छोटा होता जाता है।
6. **प्रतिस्पर्द्धा (Competition) :** प्रतिस्पर्द्धा के तीव्र होने पर उसका कुशलता से सामना करने की द ष्टि से उसके बाजार-क्षेत्र का आकार छोटा होना चाहिए एवं प्रतिस्पर्द्धा के कम होने पर विक्रय-क्षेत्र का आकार बड़ा रखा जा सकता है।
7. **विक्रय व्यय का अनुपात (Ratio of Sales Expenses) :** प्रायः संस्थाएँ विक्रय व्यय का अनुमान पहले से लगा लेती हैं तथा विक्रय के साथ उसका अधिकतम प्रतिशत पहले से निर्धारित कर देती हैं। अब यदि किसी विक्रय-क्षेत्र का व्यय अनुपात से अधिक आता है तो उसके आकार को बढ़ाकर व्यय का अनुपात कम कर दिया जाता है।
8. **उत्पाद जीवन-चक्र (Product Life Cycle) :** उत्पाद जीवन-चक्र की प्रारम्भिक अवस्था में बाजार प्रवेश हेतु गहन प्रयासों के लिए विक्रय-क्षेत्र का छोटा रखा जाना संस्था के हित में माना जाता है परन्तु धीरे-धीरे इसके आकार को बढ़ा दिया जाता है।
9. **बाजार सम्भवनाएँ (Market Potentialities) :** यदि किसी वस्तु के बाजार के भावी विकास की सम्भावनाएँ

अत्यन्त कम हैं तो विक्रय-क्षेत्र के आकार को छोटा रखा जाना चाहिए जिससे भविष्य में ज्यादा परिवर्तन न करने पड़ें।

10. **संस्था की नीति (Policy of the Enterprise) :** संस्था की नीति का भी बाजार के आकार पर प्रभाव पड़ता है। उदाहरणस्वरूप, यदि संस्था का उद्देश्य सीमित उत्पादन करना हो तो विक्रय-क्षेत्रों की संख्या कम रखी जा सकती है एवं विक्रय-क्षेत्र का आकार बड़ा रखा जा सकता है।

11. **अन्य (Others) :** उपरोक्त के अतिरिक्त विक्रय-क्षेत्र के आकार को प्रभावित करने वाले निम्न घटक और हो सकते हैं :
    (i) जनसंख्या का घनत्व,
    (ii) विज्ञापन एवं विक्रय प्रवर्तन,
    (iii) माँग की स्थिति,
    (iv) सम्पन्नता एवं ग्राहकों की क्रयक्षमता,
    (v) अर्थव्यवस्था की स्थिति,
    (vi) सरकारी नीति,
    (vii) अर्थ-व्यवस्था की स्थिति,
    (viii) विक्रय कार्य की प्रकृति,
    (ix) प्रबन्धकीय नीतियाँ,
    (x) जातीय तत्व जैसे – लोगों की भाषा, संस्कृति, रीति-रीवाज, खान-पान, वेशभूषा आदि,
    (xi) विक्रय सम्प्रेषण की स्थिति, एवं
    (xii) यातायात एवं संचार सुविधाएँ,

विक्रय-क्षेत्र के बँटवारे की विधियाँ
(Methods of Allocating Sales Territories)

एक व्यावसायिक संस्था के विक्रय-क्षेत्रों की स्थापन अनेक तथ्यों को ध्यान में रखकर की जाती है, जैसे – उत्पाद की प्रकृति, यातायात सम्बन्धी सुविधाएँ, बाजार की खोज, वितरण मार्ग, विक्रेता की योग्यता, प्रतियोगिता की सीमा, विक्रय व्यय का अनुपात, विज्ञापन एवं विक्रय प्रवर्तन, जनसंख्या का घन्त्व एवं संस्था की नीति आदि। अतः विभिन्न संस्थाओं द्वारा विक्रय-क्षेत्रों की स्थापना में विभिन्न आकारों व विधियों का उपयोग किया जाता है। इनमें से प्रमुख विधियाँ अग्रलिखित हैं :

I. भौगालिक आधार पर, एवं
II. अन्य आधार पर।

I. **भौगोलिक आधार पर क्षेत्र-विभाजन (Geographical Territorial Division) :** विक्रय-क्षेत्र का भौगोलिक आधार पर विभाजन निम्न प्रकार का हो सकता है :

    1. **देश की इकाई के आधार पर (On the Basis of Country Unit) :** इस व्यवस्था के अनुसार प्रत्येक देश को एक विक्रय-क्षेत्र मानकर विक्रय-क्षेत्रों का बँटवारा किया जाता है। स्पष्ट है ऐसा तभी सम्भव है जब वस्तु का बाजार अन्तर्राष्ट्रीय हो। पैट्रोल, चाय एवं कॉफी का विक्रय अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर होता है। इनके

विक्रय के लिए सम्पूर्ण देश को एक विक्रय इकाई माना जाता है और उसके अनुसार समूचे देश को एक विक्रय-क्षेत्र मानकर विक्रय संचालन किया जाता है।

2. **राज्य इकाई के आधार पर (On the Basis of State Unit) :** जब पूरे देश में वस्तु या सेवा का विक्रय करना होता है तो प्रायः राजनीतिक क्षेत्र को आधार मानकर प्रत्येक राज्य को एक विक्रय-क्षेत्र माना जाता है। इस प्रकार एक समूचे राज्य को एक इकाई मानकर उस राज्य में वस्तु के विक्रय का उत्तरदायित्व सौंपा जाता है। भारत में अधिकांश संस्थाओं ने अपनी वस्तुओं के विक्रय के लिए राज्य इकाइयों को विक्रय-क्षेत्र के रूप में माना है।
3. **जिला इकाई के आधार पर (On the Basis of District Unit) :** जब किसी वस्तु की सर्वत्र माँग होती है, तब उसके विक्रय के लिए जिला स्तर पर विक्रय इकाइयाँ स्थापित की जाती हैं। इस व्यवस्था के अन्तर्गत प्रत्येक जिले के लिए अलग-अलग विक्रय प्रतिनिधियों, डीलरों एवं वितरकों की नियुक्ति की जाती है। भारत में इस प्रकार की व्यवस्था अधिकांश कम्पनियों ने की हुई है जो मुख्य रूप से उपभोक्ता वस्तुएँ बनाते हैं।
4. **अन्य विधियाँ (Other Methods) :** उपरोक्त विभाजन के अलावा निम्न प्रकार भी प्रचलित हैं जिसके आधार पर विक्रय-क्षेत्रों की स्थापना की जाती हैं जैसे :

(i) **क्षेत्रीय विभाजन :** एक से अधिक जिलों को एक विक्रय-क्षेत्र मानकर विक्रय-क्षेत्र की स्थापना की जा सकती है।

(ii) **व्यापार परिमाण के आधार पर :** इस विधि के अनुसार विक्रय-क्षेत्र के वितरण का आधार राजनीतिक न होकर व्यवसाय की मात्रा होता है; यथा – जिस क्षेत्र में विक्रय अधिक होता है, उसे एक अलग विक्रय-क्षेत्र का दर्जा दे दिया जाता है एवं कम विक्रय वाले क्षेत्रों को मिलाकर एक विक्रय-क्षेत्र बना दिया जाता है।

II. **अन्य आधार पर :** विक्रय-क्षेत्र के बँटवारे का एक अन्य आधार निम्न प्रकार हो सकता हैं :

1. **वस्तुओं के आधार पर :** विभिन्न वस्तुओं के उत्पादन के लिए विभिन्न विक्रयक्षेत्र स्थापित कर वस्तुओं का विक्रय किया जा सकता है।
2. **मिश्रित आधार :** विक्रय-क्षेत्रों का विभाजन उपरोक्त में से एक से अधिक आधारों पर भी किया जा सकता है।
3. **जलवायु प्रदेशों के आधार पर :** मौसमी वस्तुओं के लिए विक्रय-क्षेत्रों का निर्धारण स्थानीय जलवायु के आधार पर किया जा सकता है, जैसे – ऊनी वस्त्र एवं सूती वस्त्र आदि के विक्रय-क्षेत्र।

विक्रय-क्षेत्र के बँटवारे से लाभ

(Advantages of Allocating Sales Territory)

विक्रय-क्षेत्र के बँटवारे से होने वाले लाभ अथवा विक्रय-क्षेत्र के विभाजन का महत्त्व (Importance) निम्द दो भागों में विभाजित कर अध्ययन किया जा सकता है :

I. उपक्रम को लाभ, एवं
II. ग्राहकों को लाभ।

I. **उपक्रम को लाभ :** विक्रय-क्षेत्र के बँटवारे से उपक्रम को निम्न लाभ होते हैं :

1. विक्रय-क्षेत्रों की स्थापना के विक्रय प्रतिनिधियों, विक्रेताओं, शाखा प्रबन्धकों, डीलरों एवं वितरकों के कार्यों के मूल्यांकन का उचित व तुलना योग्य आधार तैयार हो जाता है।

2. विक्रय-क्षेत्रों को अलग-अलग भागों में बाँटने से कोई क्षेत्र विक्रय प्रयासों से अछूता नहीं रह सकता।
3. विक्रय-क्षेत्र विभाजन से विक्रय-प्रतिनिधियों के यात्रा व्यय नियन्त्रित रहते हैं।
4. विक्रय-क्षेत्र को बाँटने पर विक्रयकर्ता, शाखा प्रबन्धक, डीलर अथवा वितरक को उसके क्षेत्र की बिक्री के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है।
5. विक्रय-क्षेत्रों की स्थापना हो जाने से प्रतियोगियों (Competitors) का प्रभावी ढंग से सामना किया जा सकता है।
6. विक्रय-क्षेत्र का विभाजन हो जाने से प्रत्येक क्षेत्र को विशिष्टीकृत सेवायें प्रदान की जा सकती हैं।
7. विक्रय-क्षेत्रों का विभाजन हो जाने से लाभों में व द्धि होती है।
8. विक्रय-क्षेत्र स्थापित हो जाने से सभी ग्राहकों से व्यवस्थित, नियमित व प्रभावी सम्पर्क स्थापित किया जा सकता है।
9. विक्रय-क्षेत्र स्थापित हो जाने से बाजार सर्वेक्षण एवं अनुसन्धान का कार्य आसान हो जात है।

II. **ग्राहकों को लाभ :** विक्रय-क्षेत्रों की स्थापना से ग्राहकों को निम्नलिखित लाभ होते हैं :

1. अलग-अलग विक्रय-क्षेत्रों की स्थापना हो जाने से ग्राहकों को नियमित एवं कुशल सेवा का लाभ मिलता रहता है।
2. विक्रय-क्षेत्र बँट जाने से ग्राहकों की शिकायतों का शीघ्र समाधान हो जाता है।
3. विक्रय-क्षेत्रों की स्थापना से प्रत्येक क्षेत्र के ग्राहकों की व्यक्तिगत रुचि एवं सुझावों पर विचार किया जा सकता है।
4. विक्रय-क्षेत्र प थक-प थक होने से ग्राहकों को व्यक्तिगत सन्तुष्टि प्रदान करना सम्भव हो जाता है।
5. विक्रय-क्षेत्र प थक-प थक होने से ग्राहक एवं उत्पादक के समय की बचत हो जाती है।
6. विक्रय कर्ता के अपने क्षेत्र के ग्राहकों से भली प्रकार परिचित होने से क्रेता को बार-बार अपनी समस्याएँ व पसन्द आदि बताने की आवश्यकता नहीं रहती जिससे दोनों के समय की बचत होती है।

विक्रय क्षेत्र न स्थापित करने के कारण

(Reasons for not Establishing Sales Territories)

यद्यपि विक्रय क्षेत्रों के निर्धारण से विभिन्न लाभ प्राप्त होते हैं, किन्तु कुछेक दशाएँ ऐसी भी हैं जब विक्रय क्षेत्रों को स्थापित करना अव्यावहारिक, अनावश्यक एवं अलाभकारी समझा जाता है। ऐसी दशाएँ निम्न हैं :

1. जहाँ संस्था का आकार छोटा हो तथा उत्पादन का स्तर भी छोटा हो।
2. जहाँ ग्राहकों की संख्या सीमित हो।
3. जहाँ माल व्यक्तिगत सम्पर्कों के आधार पर बेचा जाता हो।
4. जब विक्रेता क्षेत्र विशेष में रहकर कार्य न करना चाहते हों।
5. जब माल की प्रकृति अत्यन्त तकनीकि हो तथा पर्याप्त मात्रा में विशेषज्ञ विक्रेता उपलब्ध न हों।
6. जब प्रबन्धक संस्था के पास विक्रय क्षेत्रों से सम्बन्धित सामग्री अत्यन्त सीमीत मात्रा में उपलब्ध हो।
7. जब फर्म स्थानीय स्तर पर व्यापार करती हो।
8. जहाँ संस्था के व्यापार का सम्बन्ध स्थायी सम्पत्तियों, जैसे – प्लाट, मकान, खेत आदि से हो।

विक्रय क्षेत्रों की स्थापना की प्रक्रिया

(Procedure for Establishing Sales Territories)

विक्रय परिक्षेत्रों की सीमा निर्धारण करने के बाद उसे नियन्त्रणीय इकाईयों या क्षेत्रों में विभाजित किया जाता है। विक्रय क्षेत्रों का आकार जितना छोटा होगा, विक्रेता उतने ही अधिक प्रभावी तथा नियोजित ढंग से उस पर नियन्त्रण रख सकेगा तथा ग्राहकों को मित्तव्ययी ढंग से बढ़िया से बढ़िया सेवायें प्रदान कर पाएगा। अतः विक्रय-क्षेत्रों के बटवारे का प्रमुख उद्देश्य विक्रेता द्वारा नियोजित, प्रभावी तथा मितव्ययता से निश्चित भौगोलिक क्षेत्र में रहने वाले ग्राहकों तथा उपभोक्ताओं को सर्वोत्तम सेवाएँ प्रदान करना होने के कारण विक्रय क्षेत्रों का निर्धारण उचित तथा नियन्त्रणीय होना आवश्यक है।

इन विक्रय-क्षेत्रों की स्थापना करने के लिए एक क्रमबद्ध प्रक्रिया अपनानी होती है। इस प्रक्रिया में सामान्यतः निम्न कदम उठाने होते हैं :

1. **इकाईयों का चुनाव :** विक्रय प्रदेश का निर्माण बुनियादि इकाईयों से होता है अर्थात् इन बुनियादि इकाईयों को मिलाकर ही विक्रय प्रदेश बनते हैं। विक्रय क्षेत्र की स्थापना करने में यह ध्यान रखा जाये कि इकाईयों का आकार प्रबन्धकी द ष्टि से नियन्त्रणीय हो ताकि उनमें मित्तव्ययतापूर्वक विक्रय कार्य चलाया जा सके। एक संस्था बुनियादी इकाईयों के रूप में देश, राज्य, जिला या अन्य व्यापार क्षेत्र का चुनाव किया जा सकता है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बिकने वाले उत्पादों की दशा में प्रत्येक देश एक बुनियादी इकाई के रूप में चुना जा सकता है। राष्ट्रीय बाजार की दशा में बाजार को राज्यों के रूप में उप-विभाजित किया जा सकता है। जिलों को उन इकाईयों के लिए इकाई के रूप में चुना जाता है जिनमें उत्पादन व हत स्तर पर किया जाता है। व्यापार क्षेत्र के किसी शहर के आस-पास केन्द्रित होने पर उस प्रदेश में किये जाने वाले थोक व फुटकर व्यापार की मात्रा तथा क्रय की बारम्बारता के कारण इनके विक्रय क्षेत्र अत्यन्त छोटे रखे जाते हैं जिनकी विक्रय इकाई का आकार अत्यन्त छोटा होगा तथा उन्हें स्थानीय स्तर पर ही स्थापित किया जायेगा।
2. **विक्रय सम्भावनाओं का निर्धारण :** विक्रय प्रदेशों या क्षेत्रों की आधार भूत इकाईयों का चयन करने के बाद बुनियादी इकाइयों की विक्रय सम्भावनाओं का पता लगाना विक्रय क्षेत्रों की स्थापना का दूसरा महत्त्वपूर्ण कार्य है। इसके लिए प्रबन्धकों को बुनियादी इकाईयों के वर्तमान एवं भावी ग्राहकों की पहचान करके सम्भावित बिक्री की पूर्वानुमान करना होता है। प्रत्येक आधारभूत बुनियादी इकाई एक विशिष्ट भौगोलिक बाजार खण्ड होती है। इन बाजार खण्डों में रहने वाले उपभोक्ताओं सम्बन्धी सूचनाएँ एकत्र करके सम्भावी ग्राहकों की पहचान की जाती है। इसके उपरान्त एक पुरानी संस्था की दशा में उस क्षेत्र गे गत वर्षों के विक्रय को ध्यान में रखकर सम्भावित विक्रय अवसरों का निर्धारण किया जाता है। इस निर्धारण में प्रतिस्पद्धियों की परिवर्तित विक्रय व्यूहरचनाओं एवं व्यवहारों पर विचार किया जाता है।
3. **विक्रय-क्षेत्रों का अस्थायी निर्धारण :** विक्रय सम्भावनाएँ निश्चित कर लेने के बाद संस्था के सम्पूर्ण बाजार को विभिन्न विक्रय क्षेत्रों में बाँट दिया जाता है। इस अस्थायी निर्धारण के बाद प्रबन्धक स्थायी क्षेत्रों की स्थापना की तैयारी करते हैं, इनके लिए आवश्यक विक्रेता एवं मध्यस्थ नियुक्त किए जाते हैं तथा साधन सुविधाएँ जुटाने की योजना बनाई जाती है।
4. **आधारभूत इकाईयों का प्रायोगिक विक्रय प्रदेशों के संयोजन :** प्रत्येक अस्थायी नियन्त्रण इकाई की विक्रय सम्भावना एवं विक्रय कवरेज ने निर्धारण के बाद प्रायोगिक विक्रय प्रदेशों की स्थापना करनी होती है। इसके लिए बुनियादी इकाईयों को मिलाकर प्रायोगिक विक्रय प्रदेश स्थापित किये जाते हैं जो विक्रय सम्भावनाओं को

भावी बिक्री में बदलने की क्षमता रखती हैं। इस चरण में विक्रय प्रदेशों को निर्माण प्रायोगिक तौर पर किया जाता है जिनमें बाजार कवरेज की समस्या को ध्यान में रखते हुए भविष्य में समायोजन किये जाते हैं। इसके साथ ही विक्रय क्षेत्रों की संख्या भी निश्चित कर ली जाती है ताकि विक्रय शक्ति का आकार निश्चित किया जा सके। इसके अतिरिक्त, विक्रय क्षेत्रों की उपयुक्त आकृति पर भी ध्यान देना होता है।

5. **प्रायोगिक विक्रय-क्षेत्रों का समायोजन एवं पुनर्वितरण :** इस चरण में प्रायोगिक विक्रय क्षेत्रों में आवश्यक समायोजन एवं उनका पुनःवितरण करके उन्हें अन्तिम रूप दिया जाता है। यदि इनमें कोई कठिनाई आये तो उनका समायोजन करके क्षेत्रों के आकार परिवर्तित किये जातें हैं।

6. **विक्रय कर्मचारियों को विक्रय क्षेत्रों का कार्य-भार सौंपना :** विक्रय क्षेत्रों के स्वरूप के निर्धारण के बाद प्रदेश की आवश्यकता के अनुसार उचित विक्रेताओं की नियुक्ति करके उन्हें उचित विक्रय-क्षेत्रों का कार्य-भार सौंप दिया जाता है।

विक्रय क्षेत्र स्थापन के सिद्धान्त
(Principles of Establishing Sales Territories)

विक्रय-क्षेत्रों का उचित प्रकार से आबंटन करने से विक्रय नियोजन एवं नियन्त्रण को प्रभावकारी ढंग से लागू किया जा सकता है। विक्रय लक्ष्यों की प्राप्ति विक्रय क्षेत्रों के समुचित वितरण पर निर्भर करती है। गौस, व्हाइटमैन एवं बेटस (Gauss, Whiteman and Bates) का मत है विक्रय प्रबन्ध को विक्रय क्षेत्र का आबंटन करते समय निम्नलिखित बातों पर विशेष ध्यान देना होता है :

1. **समान वितरण क्षेत्र :** विक्रय-क्षेत्रों के आबंटन में विक्रय प्रबन्धक को ध्यान रखना चाहिए कि सभी विक्रेताओं को दिये जाने वाले विक्रय क्षेत्र जहाँ तक हो सके समान हों। विक्रय-क्षेत्र न तो अत्याधिक बड़ें हों न ही अत्यन्त छोटे। इनका कार्यभार सभी विक्रेताओं पर समान रूप से वितरित होना चाहिये। समान रूप से न केवल विक्रेताओं में सन्तोष रहता है वरन ग्राहकों को भी सन्तोषप्रद सेवाएँ देकर सन्तुष्ट रखा जा सकता है।

2. **निश्चितता :** प्रत्येक विक्रय-क्षेत्र का आकार या स्वरूप निश्चित होना चाहिए। यदि क्षेत्र का भौगोलिक आधार पर विभाजन होता है तो उसकी सीमाएँ भी स्पष्ट होनी चाहिए।

3. **आय में समानता :** विक्रय-क्षेत्रोंका बँटवारा ऐसे होना चाहिये कि सभी विक्रेताओं की आय में लगभग समानता रहे। आय की असमानता होने से विक्रेताओं को असन्तोष होगा तथा उन्हें शिकायत का अवसर प्राप्त होगा।

4. **कार्य दोहराव की समाप्ति :** विक्रय क्षेत्रों के वितरण में कार्य के दोहरेपन को समाप्त किया जाना चाहिये। एक ही कार्य एक ही विक्रय प्रदेश में एक ही विक्रेता को सौंपा जाना चाहिये।

5. **नियन्त्रण योग्य :** विक्रय-क्षेत्रों का बँटवारा एवं विस्तार इस प्रकार से किया जाना चाहिये कि उनका प्रबन्ध एवं नियन्त्रण न्यूनतम व्ययों पर किया जा सके।

6. **लोचपूर्ण :** विक्रय क्षेत्रों का आबंटन लोचपूर्ण होना चाहिये। विक्रय प्रबन्धक को विक्रय प्रदेशों में सदैव परिवर्तन करने का अधिकार रहना चाहिये। परन्तु जहाँ तक हो सके विक्रेताओं के विक्रय-क्षेत्रों में परस्पर हस्तान्तरण न किया जाये।

7. **अवसरों की समानता :** विक्रय प्रबन्धकों को यह सुनिश्चित करना चाहिये कि सभी विक्रेताओं के कार्यों व विक्रय अवसरों में समानता बनी रहे।

8. **नये विक्रेता को कम कार्य भार :** विक्रय प्रबन्धक को यह ध्यान में रखना चाहिये कि नये विक्रेता को कम कार्य भार दिया जाये ताकि वह उसे कार्य को आसानी से कर सके। नये विक्रेताओं को पहले पुराने विक्रेताओं के साथ जोड़ा जाए ताकि वे विक्रय तकनीकों को ठीक प्रकार से समझ सकें।
9. **प्रतिस्पर्द्धी :** प्रत्येक विक्रय-क्षेत्र का आकार तथा कार्य भार इतना अवश्य होना चाहिये कि वह उसके विक्रयकर्ताओं एवं मध्यस्थों के लिए प्रतिस्पर्द्धा या चुनौती प्रस्तुत कर सके।
10. **कुशल निष्पादन :** विक्रय-क्षेत्रों का वितरण इस प्रकार से किया जाना चाहिये कि प्रत्येक विक्रेता को अपने नियमित कार्यों को कुशलतापूर्वक करने की अभिप्रेरणा प्राप्त हो सके।

विक्रय कोटा या अभ्यंश की सीमायें
(Limitations of Sales Quotas)

विक्रय कोटा के सम्बन्ध में कुछ विद्वानों को विपरीत मत भी है। इस सन्दर्भ में वे कोटा प्रणाली की आलोचना इस आधार पर करते हैं कि :

1. **दक्ष विक्रयकर्ता की क्षमता का अपूर्ण उपयोग :** जो विक्रयकर्ता कोटा से अधिक विक्रय में सक्षम होता है वह भी कोटा पूर्ण करके निष्क्रिय हो जाता है।
2. **अनावश्यक क्रय की प्रेरणा :** कोटा पूरा करने हेतु कई बार ग्राहक पर अनावश्यक वस्तुयें भी थोप दी जाती हैं। इससे ग्राहक के पास आवश्यकता से अधिक वस्तु जमा हो जाती है और फिर लम्बे समय तक उसे खरीदने की जरूरत ही नहीं होती है।
3. **अव्यावहारिकता की समस्या :** साधारणतया यह देखा जाता है कि कोटे का निर्धारण किसी उचित आधार पर न करके मनमाने ढंग से भी किया जाता है जो व्यावहारिकता से या तो बहुत अधिक या बहुत कम होता है जो विक्रयकर्ता व संस्था दोनों के लिए अनुचित है।
4. **कोटा निर्धारण में कठिनाई :** सबसे प्रमुख आपत्ति यही है कि सही कोटा निर्धारित करना असम्भव तो नहीं पर अत्यन्त कठिन है। कई बातें जो विक्रय को प्रभावित करती है और स्थिर नहीं रहती, सरकारी कर, अनुदान, फैशन, प्रतियोगिता हड़तालें व तालाबन्दी, कर्फ्यू आदि सभी विक्रय को प्रभावित करते हैं पर इनका अग्रिम अनुमान कठिन है। लेकिन फिर भी कोटा निर्धारण अधिकारिक अपरिहार्य व लोकप्रिय होता जा रहा है।

उपयोगी प्रश्न
(Useful Questions)

1. विक्रय परिक्षेत्र व विक्रय क्षेत्र से आपका क्या आशय है ? विक्रय क्षेत्र विभाजन के उद्देश्यों पर प्रकाश डालते हुये इसकी प्रक्रिया की रूपरेखा भी स्पष्ट करिये।
   What do you mean by sales field and sales territories ? Enlightening the objectives division of sales territories, give the outline of its process.
2. विक्रय क्षेत्र विभाजन से क्या आशय है ? विक्रय क्षेत्र विभाजन की विधियों का वर्णन करिये व इनके आकार को प्रभावित करने वाले घटकों का विवेचन करिये।
   What is meant by division of sales territories ? Describe various methods of dividing sales territories and discuss the factors affecting their size.

3. **विक्रय क्षेत्र से क्या आशय है ? विक्रय क्षेत्र विभाजन के लाभों का विवेचन करिये।**
What is meant by sales territory ? Discuss the benefits of dividing sales territories.

4. **विक्रय क्षेत्र पुनरीक्षण पर एक विस्त त टिप्पणी लिखिये।**
Write a detailed note on devision of sales territories.

5. **विक्रय अभ्यश को परिभाषित करिये। अभ्यश निर्धारण की आवश्यकता व प्रमुख विधियों की विवेचन करिये।**
Define sales quota. Discuss the need and important methods of determining sales quota.

6. **विक्रय कोटा के प्रकारों व इनके निर्धारण के प्रमुख आधारों का विवेचन करिये।**
Discuss the types of sales quota and basis of determining sales quota.

7. **विक्रय कोटा निर्धारण के लाभों व सीमाओं का विवेचन करिये।**
Discuss the advantages and limitations of assigning sales quota.

8. **निम्न पर टिप्पणियाँ लिखिये :**
Write notes on following :
   (i) **विक्रय क्षेत्र विभाजन में विचारणीय बातें।**
   Considerations in assigning sales treetories.
   (ii) **विक्रय अभ्यंश निर्धारण के सिद्धान्त।**
   Principles of assigning sales quota.
   (iii) **विक्रय अभ्यंश निर्धारण की विधियाँ।**
   Methods of determining sales quota.